प्रेम है द्वार प्रभु का

आचार्य श्री रजनीश द्वारा दिये
गये तेरह प्रवचनों का संकलन

अन्तर्वस्तु :

एक	भय या प्रेम ?	७
दो	जीवन की कला	३१
तीन	आनद खोज की सम्यक् दिशा	४९
चार	यह अधूरी शिक्षा	५९
पाच	शिक्षा महत्वाकाक्षा और युवा-पीढी का विद्रोह	७७
छ	महायुद्ध या महाक्राति ?	९९
सात	शिक्षा में क्राति	११७
आठ	नारी और क्राति	१३९
नौ	अन्तर्यात्रा के सूत्र	१५५
दस	अहकार	१७३
ग्यारह	क्या मनुष्य एक यत्र है ?	१९५
बारह	मित्र ! निद्रा से जागो	२१३
तेरह	प्रेम है द्वार प्रभु का	२२९

प्रेम है द्वार प्रभु का

आचार्य रजनीश

सकलन :

स्वामी योग चिन्मय

एव

श्री निकलंक

मोतीलाल बनारसीदास

दिल्ली :: वाराणसी :: पटना

मोतीलाल बनारसीदास
भारतीय संस्कृति के प्रमुख प्रकाशक एवं पुस्तक-विक्रेता
प्रधान कार्यालय : बंगलो रोड, जवाहरनगर, दिल्ली-७
शाखाएं :
१ चौक, वाराणसी-१ (उ० प्र०)
२. अशोक राजपथ, पटना-४ (बिहार)

प्रथम संस्करण दिल्ली, १९७१
पुनर्मुद्रण दिल्ली १९७३, १९७४
मूल्य : रु० १२ ००

सुन्दरलाल जैन, मोतीलाल बनारसीदास, बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली-७ द्वारा प्रकाशित तथा शान्तिलाल जैन, श्री जैनेन्द्र प्रेस, बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली-७ द्वारा मुद्रित ।

आचार्य रजनीश

आचार्य रजनीश वर्तमान युग के एक युवा-द्रष्टा, क्रांतिकारी विचारक व जीवन-सर्जक हैं।

वैसे तो धर्म, अध्यात्म व साधना मे ही उनका जीवन-प्रवाह है लेकिन, कला साहित्य, दर्शन, राजनीति, आधुनिक विज्ञान आदि मे भी वे अद्वितीय हैं।

जो भी वे बोलते हैं, करते हैं वह सब जीवन की आत्यतिक गहराई व अनुभूति से उद्भूत होता है। वे हमेशा जीवन-समस्याओ की गहनतम जडो को स्पर्श करते हैं। जीवन को उसकी समग्रता मे जानने, जीने व प्रयोग करने के वे जीवन्त प्रतीक हैं।

जीवन की चरम ऊचाइयो मे फूल खिलने सभव हैं उन सब का दर्शन उनके व्यक्तित्व मे सभव है।

११ दिसम्बर १९३१ को मध्य प्रदेश के एक छोटे-से गाव मे इनका जन्म हुआ। दिन-दुगनी और रात-चौगुनी इनकी प्रतिभा विकसित होती रही। सन् १९५७ मे उन्होंने सागर विश्वविद्यालय से दर्शन-शास्त्र मे एम० ए० की उपाधि प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की। वे अपने पूरे विद्यार्थी जीवन मे बड़े क्रातिकारी व अद्वितीय जिज्ञासु तथा प्रतिभाशाली छात्र रहे। बाद मे वे क्रमश रायपुर व जबलपुर के दो महाविद्यालयो मे २ और ७ वर्ष के लिये आचार्य (प्रोफेसर) के पद पर शिक्षण का कार्य करते रहे। इसी बीच उनका पूरे देश मे घूम-घूम कर प्रवचन देने व साधना-शिविर लेने का कार्य भी चलता रहा।

बाद मे अपना पूरा समय साधना के विस्तार व धर्म के पुनरुत्थान के लिये लगाने के उद्देश्य से वे सन् १९६६ मे नौकरी छोडकर आचार्य पद से मुक्त हुए। तब से वे लगातार भारत के कोने-कोने मे घूम रहे हैं। विराट सख्या मे भारत की जनता की आत्मा का उनसे सम्पर्क हुआ है।

उनके प्रवचनो व साधना-शिविरो से प्रेरणा पाकर भारत के प्राय अनेक प्रमुख शहरो में उत्साही मित्रो व प्रेमियो ने जीवन जागृति केन्द्र के नाम से एक मित्रों व साधको का मिलन-स्थल (सस्था) निर्मित किया है। वे आचार्यश्री के प्रवचन व शिविर आयोजित करते हैं तथा पुस्तको के प्रकाशन की व्यवस्था

करते हैं। जीवन जागृति केन्द्रो का प्रमुख कार्यालय बम्बई में लगभग ८ वर्षों से कार्य कर रहा है। अब आचार्यश्री भी अपने जबलपुर के निवास-स्थान को छोडकर १ जुलाई १९७० से स्थायी रूप से बम्बई मे आ गये हैं।

सस्था की ओर से एक पाक्षिक पत्रिका "युक्रांद" (युवक क्रान्ति दल का मुखपत्र) पिछले दो वर्षों से तथा एक त्रैमासिक पत्रिका "ज्योति शिखा" पिछले पाच वर्षों से प्रकाशित हो रही है। आचार्यश्री के प्रवचनो का सकलन ही पुस्तकाकार मे प्रकाशित कर दिया जाता है। अब तक लगभग १७ बडी पुस्तकें तथा १६ छोटी पुस्तकें मूल हिन्दी मे प्रकाशित हुई हैं। अधिकतर पुस्तको के गुजराती, अग्रेजी व मराठी अनुवाद भी प्रकाशित हुए हैं। १५ बडी नयी अप्रकाशित पुस्तकें प्रेस के लिए तैयार पडी हैं। अब तक आचार्यश्री प्रवचन-मालाओ मे तथा साधना शिविरो में लगभग २००० घटे जीवन, जगत् व साधना के सूक्ष्मतम व गहनतम विषयों पर सविस्तार चर्चाए कर चुके हैं।

अब भारत के बाहर भी अनेक देशो में उनकी पुस्तकें लोगो की प्रेरणा व आकर्षण का केंद्र बनती आ रही हैं। हजारो की सख्या में देशी व विदेशी साधक उनसे गूढतम विविध साधना पद्धतियो व प्रक्रियाओ के सम्बध में प्रेरणा पा रहे हैं। योग व अध्यात्म के सदेश व प्रयोगात्मक-क्राति के प्रसार हेतु विभिन्न देशो से उनके लिए आमत्रण आने शुरु हो गये हैं। शीघ्र ही भारत ही नही वरन् अनेक देशवासी उनके व्यक्तित्व से प्रेरणा व सृजन की दिशा पा सकेंगे।

२५ सितम्बर १९७० से मनाली मे आयोजित एक दस दिवसीय साधना शिविर में आचार्यश्री के जीवन का एक नया आयाम सामने आया। उन्होंने वहा कहा कि सन्यास जीवन की सर्वोच्च समृद्धि है, अत उसे पूर्णता में सुरक्षित रखा जाना चाहिये। उन्हें वहा प्रेरणा हुई कि वे सन्यास-जीवन को एक नया मोड देने में सहयोगी हो सकेंगे और नाचते हुए, गीत गाते हुए, आनद-मग्न, समस्त जीवन को आलिंगन करने वाले, सशक्त व स्वावलम्बी सन्यासियो के जन्म के वे साक्षी बन सकेंगे। शिविर में तथा उसके बाद भी अनेक व्यक्तियो ने सीधे परमात्मा से सावधिक (Periodical) सन्यास की दीक्षा ली आचार्यश्री इस घटना के साक्षी व गवाह रहे हैं।

अब तक लगभग २५ व्यक्तियों ने सन्यास के जीवन में प्रवेश किया है। कुछ ही वर्षों में इनकी सख्या सैकडो व हजारो की होने वाली है। ये सन्यासी जीवन की पूर्ण सघनता व व्यवहार में सक्रिय भाग लेने के साथ ही साथ गहरी साधना करते हुए विराट जन-समूह में जीवन, धर्म, साधना, व सस्कृति के लिए

क्रांतिकारी कार्य करेंगे। इस दिशा मे सन्यासियो का एक 'कम्यून' सस्कार-तीर्थ, पोस्ट-आजोल, तालुका—बीजापुर, जिला—मेहसाणा, गुजरात में कार्यरत हो चुका है।

आचार्यश्री का व्यक्तित्व अथाह सागर जैसा है। उसके सबध में सकेत मात्र हो सकते हैं। जैसे कि जो व्यक्ति परम आनद, परम शांति, परम मुक्ति, परम निर्वाण को उपलब्ध होता है उसकी स्वांस-स्वांस से, रोयें-रोयें से, प्राणो के कण-कण से एक सगीत, एक गीत, एक नृत्य, एक आह्लाद, एक सुगध, एक आलोक, एक अमृत की प्रतिपल वर्षा होती रहती है। और समस्त अस्तित्व उससे नहा उठता है। इस सगीत, इस गीत, इस नृत्य को कोई प्रेम कहता है, कोई आनद कहता है, कोई शाति कहता है और कोई मुक्ति कहता है। लेकिन वे सब एक ही सत्य को दिये गये अलग-अलग नाम हैं।

ऐसे ही एक व्यक्ति हैं—आचार्य रजनीश। जो मिट गये हैं, शून्य हो गये हैं, जो अस्तित्व व अनस्तित्व के साथ एक हो गये हैं। जिनकी स्वास-स्वास अतरिक्ष की स्वास हो गयी है, जिनके हृदय की धडकनें चाद-तारो की धडकनो के साथ एक हो गयी हैं। जिनकी आखो मे सूरज-चांद-सितारो की रोशनी देखी जा सकती है। जिनकी मुस्कराहटो मे समस्त पृथ्वी के फूलो की सुगध पायी जा सकती है। जिनकी वाणी मे पक्षियो के प्रात -गीतो-सी निर्दोषता है। और जिनका सारा व्यक्तित्व ही एक कविता, एक नृत्य व एक उत्सव हो गया है।

इस नृत्यमय, सगीतमय, सुगधमय, आलोकमय व्यक्तित्व से प्रतिपल निकलने वाली प्रेम की, करुणा की लहरो के साथ जब लोगो की जिज्ञासा व मुमुक्षा का सयोग होता है तब प्रवचनो के रूप मे ज्ञान-गगा बह उठती है।

उनके प्रवचनो मे जीवन के, जगत के, साधना के, उपासना के विविध रूपो व रगो का स्पर्श है। उनमें पाताल की गहराइया हैं और विराट अतरिक्ष की ऊचाइया हैं। देश व काल की सीमाओ के अतिक्रमण के बाद जो महा-शून्य और नि शब्द की अनुभूति शेष रह जाती है उसे शब्दो मे व्यक्त करने का सफल-असफल प्रयास भी उनके प्रवचनो में रहता है।

उनके प्रवचन सूत्रवत् हैं, सीधे हैं, हृदय-स्पर्शी हैं, मीठे हैं, तीखे हैं और साथ ही पूरे व्यक्तित्व को झझकोरने व जगाने वाले भी हैं। उनके प्रवचनो से व्यक्ति की मूर्छा, निद्रा और प्रमाद टूटता है और वह अत व बाह्य जागरण व क्रांति मे सलग्न हो जाता है।

"प्रेम है द्वार प्रभु का" आचार्य श्री के विभिन्न स्थानो मे दिये गये पन्द्रह प्रवचनो का एक सग्रह है ।

—स्वामी योग चिन्मय

एक : भय या प्रेम ?

भय या प्रेम ?

मनुष्य जाति भय से, चिन्ता से, दुख और पीडा से आक्रान्त है, और पाच हजार वर्षों से—आज ही नही। जब आज ऐसी बात कही जाती है कि मनुष्यता भय से, चिन्ता से, तनाव से, अशान्ति से भर गई है तो ऐसा भ्रम पैदा होता है जैसे पहले लोग शान्त थे, आनन्दित थे!

यह बात शत प्रतिशत असत्य है कि पहले लोग शान्त थे और चिन्ता रहित थे। आदमी जैसा आज है वैसा हमेशा था। ढाई हजार वर्ष पहले बुद्ध लोगो को समझा रहे थे, शान्त होने के लिए। अगर लोग शान्त थे तो शान्ति की बात समझाने की क्या जरूरत थी ? पाच हजार वर्ष पहले उपनिषद् के ऋषि भी लोगो को समझा रहे थे, आनन्दित होने के लिए। लोगो को समझा रहे थे दुख से मुक्त होने के लिए। लोगो को समझा रहे थे प्रेम करने के लिए। अगर लोग प्रेमपूर्ण थे और शान्त थे तो उपनिषद् के ऋषि पागल रहे होगे। किसको समझा रहे थे ?

दुनिया मे अब तक ऐसी एक भी पुरानी से पुरानी किताब नहीं है जो यह न कहती हो कि आजकल के लोग अशान्त हो गये हैं। मै छ हजार वर्ष पुरानी चीन की एक किताब की भूमिका पढ़ रहा था। उस भूमिका मे लिखा है कि आजकल के लोग अशान्त हैं, नास्तिक हैं, बहुत बुरे हो गये हैं। पहले के लोग अच्छे थे। छ हजार साल पहले की किताब कहती है पहले के लोग अच्छे थे। ये पहले के लोग कब थे ? ये पहले के लोगों की बात, एक कल्पना (Myth) और सपने से ज्यादा नहीं है। आदमी हमेशा से अशान्त रहा है और इसलिए अगर हम यह समझ ले कि आज अशान्त हैं, आज भय से आक्रान्त हैं, आज चिन्तित और दुखी हैं तो हम जो भी निदान खोजेंगे, वह गलत होगा। आज तक की पूरी मनुष्यता किन्हीं अर्थों मे गलत रही है, भ्रान्त रही है। केवल आज का ही आदमी गलत नहीं है। आज तक की पूरी मनुष्यता ही कुछ गलत रही है। और उसने अपनी गलती को सुधारने के लिए जो कुछ भी किया है उससे गलती मिटी नही, और बढ़ती चली गई।

मनुष्य हमेशा से भयभीत था और है। भय (Fear) के आधार पर उसका सारा जीवन खड़ा हुआ है। जब वह मदिरो में प्रार्थना करता है तब

भी भय के कारण। उसने जो भगवान गढ़ रखे हैं वह भय से ही उत्पन्न हुए हैं। जब राजधानियो मे लोग पदो की आकाक्षा करते हैं, बड़े पदो पर पहुचना चाहते हैं तब भी भय के ही कारण। क्योकि जितने बड़े पद पर कोई होता है उतनी सत्ता और शक्ति उसके हाथ मे होती है, उतना भय कम मालूम होता है। इस आशा मे आदमी दौडता है, दौडता है। चगेज, तैमूर नेपोलियन, सिकन्दर, हिटलर और स्टेलिन सभी भयभीत लोग हैं। सभी घबराये हुए लोग हैं। सभी डरे हुए लोग हैं। उस भय से बचने के लिए बडी ताकत हाथ मे हो, इसकी चेष्टा मे लगे हुए हैं। धन की जो खोज कर रहा है वह भी भयभीत आदमी है। धन से सुरक्षा (Security) मिल सकेगी इस आशा मे वह धन को इकट्ठा करता चला जा रहा है।

मन्दिरो मे प्रार्थना करने वाला, राजधानियो मे यात्रा करने वाला धन की तिजोरियो को भरने वाला, ये सभी भय के आधार पर ही जी रहे हैं। वे,—जिन्हें आप सन्यासी समझते हैं, जिन्हें आप समझते हैं कि ये परमात्मा के मार्ग पर चले गये लोग हैं, शायद आपको पता न हो कि वे भी किसी आन्तरिक भय के कारण ही उस यात्रा मे सलग्न हो गये हैं।

जीसस क्राइस्ट एक गाव से निकले थे। उन्होने गाव की एक सडक पर कोई पन्द्रह बीस लोगो को रोते हुए, छाती पीटते हुए, उदास बैठे हुए देखा। उन्होने पूछा तुम्हे यह क्या हो गया है ? किसने तुम्हारी यह हालत की है ? उन पन्द्रह बीस लोगो ने चेहरे ऊपर उठाये। उनके मुर्झाये हुए चेहरे,—जैसे मौत उनके सामने खडी हो। उन्होंने कहा, नरक की बात सुनकर हम इतने भयभीत हो गये हैं।

इस दुनिया मे जितने धार्मिक लोग दिखाई पडते हैं इनमे से कोई भी मुश्किल से धार्मिक होगा। सौ मे से निन्यानवे लोग नरक के भय के कारण परेशान हैं या स्वर्ग के प्रलोभन के कारण, वैसे दोनो एक ही बातें हैं। लोभ और भय एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। भयभीत आदमी लोभी होता है क्योकि सोचता है इतना मिल जाय इतना मिल जाय। धन मिल जाय, पद मिल जाय, भगवान मिल जाय, स्वर्ग मिल जाय तो मै दुख से बच जाऊ, चिंता से बच जाऊ, पीडा से बच जाऊ।

मै आप से यह कहना चाहता हू कि हमने आज तक जो भी किया है उसके केन्द्र मे भय है। हमारे राष्ट्र, हमारी देशभक्ति, हमारी राजनीति, हमारी फौजें सब हमारे भय पर खडी हुई हैं। हमारे देश, हमारी कौमें सब भय

पर खड़ी हुई हैं। आकाश में लहराते हुए हमारे झंडे सब भय से खड़े हुए हैं। हम सब एक दूसरे से भयभीत हैं। जिस दिन दुनिया में कोई भय नहीं रहेगा उस दिन दुनिया में कोई जाति नहीं रह जाएगी, कोई देश नहीं रह जाएगा। उस दुनिया में राजनीति का उतना ही मूल्य होगा जितना और सारी संस्थाओं का होता है। राजनीति इतनी मूल्यवान नहीं रह जाएगी। राजनीतिज्ञ की इतनी प्रतिष्ठा नहीं रह जाएगी। राजनीतिज्ञ की प्रतिष्ठा भय के कारण है।

एडाल्फ हिटलर ने कहा है कि अगर किसी को किसी कौम की बागडोर अपने हाथ में लेनी हो तो पहला काम यह है कि उस कौम को भयभीत कर दो। उसे घबड़ा दो। चीन का खतरा है। पाकिस्तान का खतरा है। ऐसा कोई भय पैदा कर दो। वह भयभीत हो जाय तो अपनी सब बागडोर आपके हाथ में दे देगी। सारी दुनिया की नेतागिरी सारी दुनिया की लीडरशिप मनुष्य को भयभीत करने के ऊपर आधारित है। सारी गुरुडम—यह हिन्दू, मुसलमानों, ईसाइयों के पोप पादरी, शंकराचार्य—यह सारी गुरुडम भय पर आधारित है। आदमी को भयभीत कर दो फिर वह पैर पकड़ लेगा और कहेगा, "मुझे मार्ग बताओ, मुझे बचाओ॥"

आज तक मनुष्य के जीवन को भय के केन्द्र पर ही खड़ा रखा गया है। दुनिया का कोई शोषण चाहे वह शोषण राजनीति का हो, चाहे वह शोषण धर्मनीति का हो, चाहे वह शोषण धन का हो, चाहे वह शोषण शरीर का हो और चाहे मन का हो, दुनिया का कोई शोषक नहीं चाहता कि आदमी भय मुक्त हो जाय। क्योंकि जिस दिन भय नहीं होगा उस दिन शोषण की सम्भावना भी समाप्त हो जाती है। आज तक मनुष्य जाति को अभय में प्रतिष्ठित करने का कोई उपाय नहीं किया गया। उसे अभय (Fearlessness) में खड़ा करने के लिए कोई चेष्टा नहीं की गई है। लेकिन हम कहेंगे कि नहीं, चेष्टाएं तो की गई हैं, निर्भय लोग पैदा किये गये हैं। हम फौजों में सैनिकों को निर्भय बनाते हैं। हम उन्हें हिम्मतवर बनाते हैं। शहीद हुए हैं, सिपाही हुए हैं, बड़े बड़े बहादुर लोग हुए हैं। लेकिन मैं आपसे कहना चाहता हू कि निर्भीकता और अभय में बुनियादी फर्क है। अभय में और भय की स्थिति में भी जान को लगा देने में बुनियादी फर्क है।

एक सैनिक अभय को उपलब्ध नहीं होता सिर्फ उसकी बुद्धि को जड़ किया जाता है। उसे जड़ता (stupidity) सिखाई जाती है। उसकी संवेदना

कम की जाती है ताकि उसे भय का बोध न हो। जब बुद्धि लोग भयभीत नही होते। भय का अनुभव न हो, इसके लिए बुद्धि की क्षमता को कम किया जाता है। इसलिए सैनिक को हम वर्षों तक लेफ्ट राइट, आगे घूमो, पीछे घूमो, बायें घूमो, दायें घूमो, इस तरह की व्यर्थ अर्थहीन क्रियाओ मे सलग्न रखते हैं। इन क्रियाओ का एक ही मूल्य है कि निरन्तर पुनरुक्ति स मनुष्य बुद्धि क्षीण होती है। उसकी सवेदना क्षीण होती है। उसकी सवेदनशीलता (sensitivity) कम होती है। अगर एक आदमी को तीन वर्ष तक सुबह तीन घटे, साझ चार घटे बायें घूमो, दायें घूमो करवाया जाय तो उसकी बुद्धि की, अनुभव की, चिन्तन करने की क्षमता क्षीण हो जाती है और तब उसे बन्दूको के सामने भी खड़ा कर दिया जाय तो उसे ख्याल नही आता है कि कोई खतरा है। वह अभय को उपलब्ध नही हो गया है सिर्फ भय को अनुभव करने की तीव्रता और क्षमता उसकी क्षीण हो गई है।

पुनरुक्ति (Repetition) के द्वारा मनुष्य की चेतना को शिथिल (Dull) करने की कोशिश की जाती है। कोई भी चीज बार बार पुनरुक्त की जाय तो मनुष्य की चेतना क्षीण होती है। एक मा को अपने बेटे को सुलाना होता है तो रात मे कहती है कि राजा बेटा सो जा। राजा बेटा सो जा। वह समझती है गीत गा रही है, लोरी गा रही है। बेटा उसका सो जाता है तो वह सोचती है कि बहुत मधुर आवाज के कारण सो गया है। बेटा सिर्फ ऊब (Boredom) की वजह से सो गया है। ऊब पैदा हो जाती है अगर कोई पास बैठ कर कहे चले जाय राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा। पुनरुक्ति की जा रही है एक ही बात की तो चित्त ऊबता है। ऊब पैदा होती है। ऊब से उदासी पैदा होती है। उदासी से नीद पैदा होती है। चेतना शिथिल हो जाती है और सो जाते हैं। लेफ्ट राइट, लेफ्ट राइट। राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा। राम राम हरे हरे इन सारी बातो की पुनरुक्ति से मनुष्य का भय कम नही होता केवल बुद्धि कम होती है। एक आदमी भयभीत होता है अंधेरी गली में, तो कहने लगता है 'जय हनुमान–जय हनुमान'। एक आदमी ठडे पानी में स्नान करता है तो कहने लगता है 'हर हर महादेव।' जहां भी भय मालूम होता है वहां आदमी शब्दो की पुनरुक्ति करने लगता है। शब्दो की पुनरुक्ति से अनुभव की क्षमता क्षीण होती है। सैनिक और सन्यासी, भक्त और लड़ाके अभय को उपलब्ध नही होते, केवल बुद्धिहीनता को उपलब्ध होते हैं।

मनुष्यजाति अब तक दो तरह से काम करती रही है। एक तो भय को पैदा करती रही है, ताकि शोषण किया जा सके और फिर जब भय पैदा हो जाता है तो उस भय से बचाने के लिए जड़ता पैदा करती रही है ताकि आदमी भय से कहीं मर ही न जाय। यह पाच हजार वर्ष की मनुष्य की आंतरिक शिक्षा की कथा है। और आज हम इतने भयभीत हो रहे हैं, हर आदमी कप रहा है अपने भीतर। जितना सभ्य देश है वहां उतना ही ज्यादा भयभीत मनुष्य है। प्राण कप रहे हैं, सोते जागते कोई चैन नहीं है। एकदम भय पकड़े हुए है। यह पाच हजार वर्षों की शिक्षा का शिखर (climax) है। यह कोई इस युग की भूमिका नहीं है। यह तो जो चल रहा है हजारो वर्षों से, उसका अतिम परिणाम है। पति पत्नी से भयभीत है। पत्नी पति से भयभीत है। बाप बेटे से भयभीत है। बेटे बाप से भयभीत हैं। पड़ौसी पड़ौसी से भयभीत है। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र से भयभीत है। हिन्दू मुसलमान से भयभीत है। सब एक दूसरे से भयभीत हैं। ये इतने भय से कांपता हुआ जगत अगर रोज रोज युद्ध मे से गुजर जाता हो तो कोई आश्चर्य नही है। जो भयभीत है वह अन्तत युद्ध मे जायेगा। भय युद्ध मे ले जाने का मार्ग है। चू कि भय फिर बढ़ता जायगा तो हम क्या करेंगे ? हम तैयारी करेंगे अपनी रक्षा की। पड़ौसी भी तैयारी करेगा अपनी रक्षा की। एक दूसरे की तैयारी देखकर फिर एक दुष्ट चक्र (vicious circle) पैदा होगा और हम तैयारी करते चले जायेंगे।

मुल्ला नसरुद्दीन, एक रात एक रास्ते से गुजर रहा था। अंधेरा रास्ता था और उस तरफ से एक बारात आ रही थी। घोड़े पर सवार लोग थे, बदूके दागते हुए लोग थे। फकीर नसरुद्दीन ने समझा कि कोई डाकू आ रहे हैं। अंधेरे में डाकू किसी को भी दिखायी देना शुरू हो जाते हैं। उजाले मे भी दिखायी पड़ते हैं, लेकिन आदमी जरा भ्रम पकड़े रहता है। उजाले मे ठीक ठीक दिखायी पड़ता है, और लोग भी देख रहे हैं। अंधेरे मे डाकू आ रहे हैं। नसरुद्दीन ने सोचा "कैसे बचू, क्या करू, अकेला हू ? बदूकें लिए मालूम होते हैं, घोड़े पर सवार हैं।" पास मे ही कब्रिस्तान था। दीवाल से छलांग लगाकर वह एक नयी खोदी गयी कब्र मे लेट कर सो गया ताकि वे निकल जायें। लेकिन वही नही डरा था बारात के लोगो को देखकर। बारात के लोग भी रात अंधेरे रास्ते मे एक आदमी को दीवाल पर चढ़ते देखकर डर गये। पता नहीं कौन है ? कोई हत्यारा है ? बारात रुक गयी दीवाल के पास। उन्होंने अपनी लालटेनें और बत्तियां ऊपर उठायीं। दीवाल पर सारी बारात चढ़ गयी

उस आदमी की खोज मे। नसरुद्दीन के तो प्राण सूख गये। उसने सोचा निश्चित ही डाकू हैं उसके पीछे चले आ रहे हैं। दीवाल पर चढ गये हैं। उसने आंखे बन्द कर ली। और जब उन्होंने उस आदमी को कब्र मे जिन्दा आंख बन्द किये लेटे देखा तो वे और हैरान हो गये। उन्होने अपनी बन्दूकें भर ली। वे नीचे आये और उन्होने कहा—"बोलो तुम यहा किसलिए आये हो ? क्या कर रहे हो ? नसरुद्दीन ने कहा—मेरे दोस्तो, यही मै तुमसे पूछना चाहता हू कि आप यहा क्या कर रहे हैं, और किसलिए आये हैं ? उन लोगो ने कहा,—हम किसलिए आये हैं ? नसरुद्दीन उठकर खड़ा हो गया और कहा कि मै क्या कहू आप मेरी वजह से यहा है और मै आपकी वजह से यहा हू !

सारी दुनिया भयभीत है और अगर पूछने जाइए किसी से कि क्या भयभीत हैं तो पाइएगा कि मैं आपके कारण भयभीत हू और आप मेरे कारण भयभीत हैं। रूस अमरीका के कारण भयभीत है, अमरीका रूस के कारण भयभीत है। पति पत्नी के कारण भयभीत है। पत्नी पति के कारण भयभीत है। और सच्चाई यह है कि हमारे चित्त का केन्द्र भय बन गया है। हम शायद किसी के कारण भयभीत नहीं है—हम सिर्फ भयभीत हैं—अकारण। और सिर्फ अपने भय को हम तर्कसम्मत (Rationalize) बनाते हैं कि हम इसके कारण भयभीत हैं—मैं इस बात से भयभीत हू। मै मौत के कारण भयभीत हू। मैं बीमारियो के कारण भयभीत हू । मै उस बात से भयभीत हू।

हम सिर्फ भयभीत हैं। हमारी आत्मा ही भय से भर गयी है। क्यो भर गयी है ? क्या रास्ता है ? भजन-कीर्तन करें, मदिरो मे जायें, पूजा पाठ करे ? बहुत हो चुके भजन-कीर्तन। बहुत हो चुकी पूजा-प्रार्थनाए। आज तक मनुष्यता भय से दूर नहीं हुई। जो चीज भय से ही पैदा होती है उससे भय दूर नहीं हो सकता। वह भजन-कीर्तन, वह पूजा पाठ भय से ही पैदा हो रहा है। बन्दूकें बनायें ? एटम बम बनायें ? हाइड्रोजन बम बनाये ? उससे भय दूर होगा ? उससे भी भय दूर नहीं हुआ। भय बढता ही चला गया। बम भय से ही पैदा हुए हैं इसलिए बमो के कारण भय दूर नहीं हो सकता है। बन्दूको के कारण भय दूर नही हो सकता क्योकि बन्दूक भय के कारण ही पैदा हुई है।

आपने घरो मे तस्वीरें देखी होंगी बहादुर लोगो की तलवारें हाथो मे लिए हुए। जो भी आदमी हाथ मे तलवार लिए हुए है वह बहादुर नहीं है। वह भयभीत है। चाहे सड़कों पर मूर्तियां बनी हों, चाहे घरों में फोटो लटकी हो। जिस आदमी के हाथ मे तलवार है वह आदमी भयभीत है, वह बहादुर

नही है। हाथ मे तलवार भय का सबूत है। इतनी बात जरूर है कि भयभीत आदमी अपने से कमजोर आदमी को भयभीत करने की कोशिश करता है। इस भांति उसे यह विश्वास हो जाता है कि मै भयभीत नहीं हू, दूसरा भयभीत है। इसलिए दुनिया मे हर आदमी कोशिश करता है कि दूसरे को भयभीत कर दें। किसलिए ? इसलिए ताकि वह यह विश्वास कर ले कि तुम काप रहे हो, मै नही कांप रहा हू। तुम भयभीत हो, मै भयभीत नही हू। इसीलिए पति "मालिक" बनकर पत्नी को भयभीत किये रहता है। पति खुद भयभीत है। वह पत्नी को जब डरा देता है रुला देता है, पत्नी को जब पैरो मे गिरा लेता है तब वह आश्वस्त होता है कि मै भयभीत नही हू। मै बहादुर आदमी हू। यह औरत भयभीत है। दफ्तर मे वह जाता है, उसका बास उसको कपा देता है और थर्रा देता है। उसी हालत मे पहुचा देता है जिस हालत में पति पत्नी को पहुचा देता है। उसका मालिक सोचता है मै भयभीत नहीं हू। मै साधारण आदमी नही हू। आदमी मेरे नीचे काम करते हैं।

पीढ़ी दर पीढी हर आदमी दूसरे को भयभीत करके कुछ और नही कर रहा है इतना ही कर रहा है कि अपने लिए विश्वास पैदा कर रहा है। आत्म-विश्वास जुटा रहा है। यह हिटलर और स्टेलिन बड़े भयभीत लोग हैं। ये सारी दुनिया को कपा देते है। विश्वास लाना चाहते है कि तुम सब काप रहे हो, मै नही काप रहा हू। लेकिन हिटलर रात को अपने दरवाजे बन्द करके सोता है। वह रात भर जागता रहता है कि कहीं कोई आ तो नही गया। स्टेलिन अपनी पत्नी के साथ भी उसी कमरे मे रात भर नहीं सोता है। स्टेलिन बडी बड़ी सभाओ मे स्वय नही जाता। अपनी शकल-सूरत का आदमी रख छोडा है, 'डबल' रख छोडा है। वह जाता है सभाओ मे। फौज की परेड की सलामी स्टेलिन खुद नही लेता है, दूसरा लेता है जो उसकी शकल-सूरत का है, क्योकि खतरा है, कोई गोली न मार दे। नादिर रातभर नहीं सो सकता था। जरा सी खटखटाहट हो कि तलवार निकाल कर खडा हो जाता था, क्या है ? कौन है ? और नादिर की मौत इसी तरह हुई। एक घोडा छूट गया उसके कैम्प का, रात को। और नादिर के तम्बू के पास से निकल गया। घोड़े की आवाज सुनकर नादिर उठा। उसने समझा कि कोई दुश्मन आ गया घोडे पर सवार होकर। अंधेरे मे वह बाहर निकला और भागने की कोशिश की। पैर में रस्सी फस गयी तम्बू की और वह गिर पड़ा और मर गया। वह आदमी राजधानियां कत्ल करता रहा, मकानो मे आग लगवाता रहा। किसलिए ?

ये दुनिया भर के राजनीतिज्ञ क्या चाहते हैं ? ये सब भयभीत लोग हैं। ये दूसरे को भयभीत कर यह विश्वास जुटा लेना चाहते हैं कि नहीं, कौन कहता है मै भयभीत हू ? भयभीत सारी दुनिया होगी। ये सिंहासनों की यात्रा करने वाले लोग भय की ग्रन्थि (Fear complex) से परेशान और पीड़ित लोग हैं। दुनिया के बड़े नेता, दुनिया के बड़े सेनापति, दुनिया के बड़े विजेता ये सारे लोग भय से पीड़ित लोग हैं। इन्हीं भयभीत लोगो के हाथ मे दुनिया है और वे सब एक दूसरे से भयभीत हैं इसलिए रोज युद्ध पैदा हो जाता है।

जब तक भय है तब तक दुनिया से युद्ध समाप्त नहीं हो सकता। यह तो हो सकता है कि युद्ध के कारण भय समाप्त हो जाय क्योंकि आदमी ही समाप्त हो जाय, लेकिन यह नही हो सकता कि भय जब तक है तब तक युद्ध समाप्त हो जाय। अब तो हम उस जगह पहुच गये हैं कि हमारे भय ने अतिम उपाय ईजाद कर लिए हैं, अब तो हम पूरी मनुष्यता को समाप्त करने मे समर्थ हो गये हैं। समर्थ पूरी तरह हो गये हैं शायद जरूरत से ज्यादा हो गये हैं। मै सुनता हू कि ज्ञानिको ने इतना इन्तजाम कर रखा है कि अगर एक एक आदमी को सात सात बार मारना पड़े तो हमने व्यवस्था कर ली है। हो सकता है कोई भूल चूक हो जाय। कोई आदमी मारने से एक दफा बच जाय तो दोबारा मार सकें। दो बार भी बच सकता है तो तीसरी बार मार सकें। सात बार, हालाकि एक आदमी एक ही बार मे मर जाता है, दुबारा मारने की कभी कोई जरूरत आज तक नही पड़ी। लेकिन भूल चूक न हो जाय इसलिए इन्तजाम पूरी तरह करना उचित है। तीन साढ़े तीन अरब आदमी हैं। पच्चीस अरब आदमियो के मारने की सारी दुनिया मे व्यवस्था है। अब की बार हम आदमी को बचने नहीं देंगे, क्योंकि अब की बार भय चरम स्थिति मे हमारे प्राणो को आदोलित कर रहा है। क्या करें इस भय के लिए ? क्या उपाय खोजे ?

एक बात आप से कहना चाहता हू, इसके पहले कि भय के सबध मे कुछ करें, इस बात को समझ लेना जरूरी है। अगर इस भवन मे अधकार भरा हो और हम किसी से पूछने जायें कि अधकार को निकालने के लिए हम क्या करें ? और वह हमसे कहे कि धक्के दे दे कर अधकार को बाहर निकाल दो, हम सब लौट आयें और अधकार को धक्के देकर निकालने की कोशिश करें तो क्या परिणाम होगा ? अधकार निकल सकेगा ? या कि अधकार को निकालने

की कोशिश मे हम खुद ही समाप्त होने के करीब पहुच जायेंगे। भय के साथ भी यही हुआ है।

भय को निकालने की हम पाच हजार वर्ष से कोशिश कर रहे है, भय को निकालने के लिए हम भगवान को जप रहे हैं। स्वर्ग, नरक, मोक्ष की कल्पना कर रहे हैं। भय को निकालने के लिए हम बन्दूकें, बम, अणु अस्त्र तैयार कर रहे हैं। भय से बचने के लिए हम किले की मजबूत दीवाल उठा रहे हैं। धन की दीवाल उठा रहे है। पद प्रतिष्ठा के किले खड़े कर रहे हैं। लेकिन बिना यह पूछे कि क्या भय को निकाला जा सकता है सीधा? मेरी दृष्टि मे भय अधकार की तरह नकारात्मक है। अधकार को सीधा नहीं निकाला जा सकता है। हा, प्रकाश जला लिया जाय तो अधकार जरूर निकल जाता है लेकिन अधकार को कभी कोई सीधा नहीं निकाल सकता। वस्तुत वह रुछ है नही, केवल प्रकाश की अनुपस्थिति मात्र है। प्रकाश को लाते ही अधकार नही पाया जाता है।

कहना गलत है कि निकल जाता है क्योकि निकलने को कुछ भी नहीं है। कोई चीज निकलकर बाहर नही चली जाती है। जब आप दिया जलाते है, कुछ बाहर नही जाता कुछ मिटता नही। अधकार तो प्रकाश की अनुपस्थिति (Absence) मात्र थी। प्रकाश आ गया, अनुपस्थिति समाप्त हो गयी।

शायद आपने सुना हो। एक बहुत पुरानी घटना है। भगवान के पास अधकार ने जाकर एक बार शिकायत कर दी और कहा कि यह सूरज तुम्हारा, मेरे पीछे बहुत बुरी तरह पडा हुआ है। मै बहुत परेशान हो गया हू। सुबह से मेरा पीछा करता है। साझ तक मुझे थका डालता है। जहा जाता हू वहीं हाजिर है। फिर जब मै बहुत थक जाता हू तब रात थोडी देर सो पाता हू। सुबह फिर मौजूद हो जाता है। रात भर विश्राम भी नहीं हो पाता है कि सूरज फिर तैयार है। यह करोडो वर्षों से चल रहा है। मेरा क्या कसूर है, मैने सूरज का क्या बिगाडा है? भगवान ने कहा, यह तो बडा अन्याय चल रहा है। मै सूरज को बुलाकर पूछ लू। उसने सूरज को बुलाया और कहा कि तुम अधकार के पीछे क्यो पडे हो? क्यो उसे परेशान किये जा रहे हो? उसने तुम्हारा क्या बिगाडा है? सूरज ने कहा—अधकार! यह नाम मैने कभी सुना नही! यह व्यक्ति मैने कभी देखा नही। अब तक उससे मेरी कोई मुलाकात नही हुई। मै क्यों पीछे पड़ूंगा? जिससे मेरी

पहचान भी नहीं, उससे मेरी शत्रुता कैसे होगी ? आप अंधकार को मेरे सामने बुला दें ता मैं पहचान भी लूं और क्षमा भी माग लू ।

अब तक भगवान सूरज के सामने अंधकार को नहीं ला सके । ला भी नहीं सकेगे क्योंकि सूरज का अस्तित्व है । प्रकाश विधायक (positive) है । अंधकार नकारात्मक (Negative) है । सूरज के सामने अंधकार नहीं लाया जा सकता क्योंकि अंधकार सूरज की ही अनुपस्थिति है, गैर मौजूदगी है। अब जहा सूरज स्वय मौजूद है वहा उसकी गैरमौजूदगी भी कैसे लाई जा सकती है ? मैं यहा मौजूद हू, मेरी गैरमौजूदगी (Absence) मेरे साथ ही यहा कैसे मौजूद हो सकती है ? या तो मैं हो सकता हू या मेरा न होना हो सकता है । यहा दोनो बातें एक साथ नहीं हो सकतीं।

लेकिन मनुष्य के भय के सम्बन्ध मे यही भूल चलती रही है । हम भय को दूर करने की कोशिश करते है। भय नकारात्मक गुण (Negative quality) है भय का कोई अस्तित्व नहीं है। भय किसी चीज की अनुपस्थिति है । किसी विधायक गुण का अभाव है । शायद आपको ख्याल मे ही न हो कि भय प्रेम का अभाव है । जिस हृदय मे प्रेम नहीं है वह हृदय भयभीत रहेगा ही । आमतौर से इसका ख्याल नहीं आता क्योंकि हम प्रेम के साथ घृणा को सोचते है । हम कभी भय के साथ प्रेम को सोचते ही नही । जिस हृदय मे प्रेम नहीं वह भयभीत होगा ही । और अगर अपने जीवन मे कभी भी थोड़ा सा प्रेम का अनुभव किया हो तो आपने जाना होगा कि जो क्षण प्रेम का है वही क्षण अभय (Fearlessness) का भी है। जिसके प्रति आपका प्रेम है उसके प्रति आपका भय समाप्त हो जाता है।

एक नवयुवक का विवाह हुआ है । वह अपनी नयी विवाहिता पत्नी को लेकर जहाज की यात्रा पर निकला है। पुराना जहाज है, पुराने दिनो की बात है । तूफान आ गया है और जहाज कपने लगा है, अब डूबा, तब डूबा होने लगा है लेकिन वह युवक मौज मे बैठा हुआ है । उसकी पत्नी घबरा रही है, काप रही है और उससे कहने लगी है कि तुम इतने शात बैठे हो और जहाज डूबने को है । मौत करीब मालूम होती है। तुम कैसे इतने निश्चिन्त मालूम होते हो ? वह युवक हस रहा है । उसने अपनी तलवार म्यान से बाहर निकाल ली और अपनी पत्नी के गले पर रख दी है और वह पत्नी हस रही है। वह युवक कहने लगा, तुम्हारी गर्दन पर नगी तलवार रखे हू फिर भी तुम हस रही हो ? तो उस पत्नी ने कहा मुझे तुमसे प्रेम है तो तुम्हारी तलवार से भय नहीं मालूम

होता है। उस युवक ने कहा मुझे परमात्मा से प्रेम है इसलिए तूफान मे भय नही मालूम होता है।

जहा प्रेम है वहा भय की कोई सभावना नही। अगर हम भय को निकालने की कोशिश करेंगे तो हम ज्यादा जडता को उपलब्ध हो सकते है, अभय को नही। अगर हम प्रेम को जन्माने की कोशिश करेंगे तो भय प्रेम के जन्म के साथ वैसे ही नष्ट हो जायेगा जैसे प्रकाश के जन्म के साथ अंधेरा नष्ट हो जाता है। लेकिन मनुष्य जाति को प्रेम की कोई शिक्षा नही दी गयी है। शिक्षा भय की दी गयी है। इसीलिए तो हर आदमी थोथा मालूम होता है क्योंकि व्यक्तित्व का केन्द्र अगर नकारात्मक है तो आदमी का पूरा व्यक्तित्व प्राणहीन होगा। व्यक्तित्व का केन्द्र अगर नकारात्मक है तो व्यक्तित्व सशक्त नहीं हो सकता वह थोथा पोच (Impotent) होगा। इसलिए सारी मनुष्य जाति नपुंसक हो गयी है। कोई बल नही है। कोई जीवन्त प्रेरणा नही है। कोई शांति से भरा हुआ, कोई आनन्द से भरा हुआ हृदय नही है। कोई शांति से भरी हुई आंखे नही है। सब भयभीत, भय से, खतरे से घबराये हुए कांपते (Trembling) हुए और डरे हुए है। मनुष्य के व्यक्तित्व के केन्द्र पर पांच हजार वर्षों से भय को रखा गया है। भय नकारात्मक है इसलिए व्यक्तित्व भी नकारात्मक हो गया है। एक ही गुण है विधायक वह है प्रेम और एक ही गुण है नकारात्मक और वह है भय और दो ही महत्वपूर्ण है जीवन मे भय या प्रेम।

जहा भय है वहा अपने आप घृणा पैदा हो जायगी। जिससे हम भयभीत होते है उससे हम कभी भी प्रेम नही कर सकते है। इसीलिए तो परमात्मा की इतनी शिक्षा दी गयी दुनिया मे लेकिन परमात्मा का प्रेम पैदा नही हो सका, क्योंकि परमात्मा से भयभीत किये गये आदमी को समझाया गया है ईश्वरभीरु (God-Fearing) होने के लिए, ईश्वर से भयभीत होने के लिए। दुनिया के धर्म यही समझाते रहे है कि ईश्वर से डरो। जिससे डरा जाता है उससे कभी प्रेम नही किया जा सकता है। यह मनुष्य जाति जो नास्तिक हो गयी है वह ईश्वर भीरु होने की शिक्षा से हो गयी है। नास्तिकों के कारण दुनिया नास्तिक नही हुई है। और दुनिया मे अब भी आस्तिक पैदा हो जाते है तो नास्तिकों के बीच से, लेकिन आस्तिकों के बीच मे कभी कोई आस्तिक पैदा नही होता। आस्तिकों के बीच से आस्तिक पैदा हो ही नहीं सकते क्योंकि आस्तिक है ईश्वर से डरा हुआ, और जहा डर है वहा प्रेम असम्भव है। जहा

भय है वहां प्रेम असम्भव है। जिससे हम भयभीत होते है उससे हम घृणा करते है, गहरे मे घृणा करते हैं। ऊपर से हाथ जोड सकते हैं, लेकिन भीतर मन होता है गला घोट दें।

धर्मभीरुओ ने ईश्वर का गला घुटवा दिया। उन्होने सिखाया कि ईश्वर से डरो। और आदमी इतना डर गया कि उसने सोचा कि जिससे इतना डरना पडता है उसकी हत्या ही कर दो। और मनुष्य ने ईश्वर की हत्या कर दी। फिर आदमी ने कहा, इसका फैसला ही कर दो जिससे इतना भय खाना पडता है। इसलिए नीत्से कह सका कि ईश्वर मर गया है (God is dead)। पूछा किसी ने किसने मार डाला है ईश्वर को? नीत्से ने कहा—आदमी के हाथ देखो ईश्वर के खून मे रगे हुए है। आदमी ने गर्दन दबा दी उसकी जिससे इतना भयभीत होना पडता था।

ईश्वर के प्रति भय पैदा करके धर्म नष्ट हो गया क्योंकि भय विधायक और रचनात्मक शक्ति (creative force) नही है। भय तो नकारात्मक और ध्वंसक शक्ति है। लेकिन हम सब तरह के भय पैदा करते रहे है। बाप बेटे मे भय पैदा करता है, कि मैं बाप हूं और उसे पता नही कि वह बेटे को तैयार कर रहा है कि बाप की हत्या कर दे। और बेटे मिलकर बाप की हत्या कर ही रहे हैं सारी दुनिया मे। यह हत्या जारी रहेगी जब तक बाप बेटे को भयभीत करता है। जब तक वह कहता है कि मै जो कहता हू वह ठीक है क्योंकि मेरे हाथ मे ताकत है। मै तुझे घर के बाहर कर दूगा। मै तेरी गर्दन दबा दूगा। जब तक पत्नी कहेगी पति से कि मेरे हाथ मे ताकत है, जब तक हम परिवार मे एक दूसरे को भयभीत करने की कोशिश करेंगे, तब तक अच्छे मनुष्य का जन्म नही हो सकता है।

हम सब एक दूसरे को डरा रहे है। हमारा सारा सम्बन्ध भय का सम्बन्ध है। विद्यार्थी गुरु के चरण छूता है भय के कारण और गुरु चरण छुवाता है ताकत के कारण। हम पैर छुवा रहे हैं और प्रसन्न हो रहे है और हमे पता नही कि इस तरह से हम अपने प्रति घृणा पैदा कर रहे हैं। इस घृणा का बदला लिया जाएगा। बेटे बडे हो जाते हैं, बाप बूढा हो जाता है। ताकत की स्थिति बदल जाती है। बेटे के हाथ मे ताकत आ जाती है, बाप कमजोर हो जाता है। पासा पलट जाता है, बदला लिया जाता है और बेटे बाप को सताना शुरू करते हैं। यह प्रतिक्रिया (Reaction) है यह प्रतिध्वनि है। बाप ने बेटे को बचपन मे सताया है, अब पासा पलट

गया है। तब बाप ताकतवर था। तब वह छोटे से बच्चे को डरा सकता था। वह डंडा उठा सकता था। द्वार बन्द कर सकता था। घर के बाहर निकाल सकता था। उसने जो भयभीत किया था बेटे को उस भय के कीटाणु भीतर रह गये हैं, वे बदला मागते हैं। क्योंकि भय विध्वंसात्मक है, बदला चाहता है। भय से घृणा पैदा होती है। विरोध पैदा होता है। विद्रोह पैदा होता है। बच्चा प्रतीक्षा करेगा कि हाथ मे ताकत आ जाय। कल जवान हो जायेगा। ताकत हाथ मे आ जायेगी। बाप बूढा हो जायेगा, कमजोर हो जायेगा। फिर सताने की प्रक्रिया उलट जायेगी। बेटा बाप को सतायेगा।

हम सब एक दूसरे को भयभीत कर रहे हैं। हमारा सारा व्यक्तित्व भय पर खडा हो गया है। हम ईश्वर को भी इसी आधार पर समझते है और धर्म को भी। हम किसी को यह कहते हैं कि सत्य बोलो तो साथ मे यह भी कहते हैं कि सत्य नही बोलोगे तो नरक जाओगे। हत्या कर दी सत्य की। सत्य के साथ भय जोडा जा सकता है? सत्य के साथ भय का कोई सम्बन्ध हो सकता है? सत्य विधायक गुण है, भय नकारात्मक गुण है। सत्य का प्रेम से सम्बन्ध हो सकता है भय से सम्बन्ध नही हो सकता। नीति का प्रेम से सम्बन्ध हो सकता है लेकिन भय से सम्बन्ध नहीं हो सकता। लेकिन पाच हजार वर्षों से नकारात्मक गुणो को विधायक धर्मों के साथ जोडा जा रहा है। इसलिए मनुष्यता नष्ट हो रही है। यह समाज के जीवन मे जहर घोला जा रहा है। एक बूंद जहर पूरे जीवन को नष्ट कर देती है। एक नकारात्मक बूंद पूरे विधायक गुण को नष्ट कर देती है। यही बच्चे को हम कह रहे हैं कि सत्य बोलो, नही तो मारेंगे। हम सोच ही नही रहे है कि हम कौन-सी दो चीज जोड रहे हैं। हम यह कह रहे हैं कि नीति का आचरण करो नही तो नरक जाना पडेगा। वहा कडाहे हैं, आग जलती है, तेल उबलता है और उसमे डाले जाओगे। भगवान को भी बडा मजा आता होगा इन कामो मे—बेचारे गरीब आदमी को, कमजोर आदमी को कडाही मे डालकर बहुत मजा आता होगा।

एक पादरी, एक चर्च मे समझा रहा था। भयभीत कर रहा था लोगो को। लोग काप रहे थे, औरतें बेहोश होकर गिर पडी थीं। आपको पता होगा ईसाइयो के एक सम्प्रदाय का नाम ही क्वेकर्स (Quakers) पड गया है। क्वेकर्स का मतलब ही है कपाने वाले लोग। और एक सम्प्रदाय शेकर्स (Shakers) है। वे भी कपाने वाले लोग हैं। तो उस पादरी ने इतना कपा दिया था कि लोग बिल्कुल कापने लगे थे। और जितने लोग डरते जा रहे थे उतनी

उसकी कविता नरक के चित्रण मे गहरी होती चली जा रही थी। लोग काप रहे थे तो बहुत मजा आ रहा था। किसी को कपाने से ज्यादा मजा और किसी चीज मे नही है।

खलील जिब्रान कहता था कि म एक खेत के पास से निकल रहा था कि एक झूठा आदमी खेत मे खडा हुआ था जैसा किसान बनाकर खडे कर देते हैं। एक हडी बाध देते है, एक कुरता लटका देते है। एक झूठा आदमी खेत मे खडा हुआ था। वर्षा आती है, धूप आती है, सर्दी आती है, लेकिन झूठा आदमी खेत में शान से खडा रहता है। जिब्रान ने कहा, 'मैने झूठे आदमी से पूछा 'दोस्त, बहुत थक जाते होगे। बडे ऊब जाते होगे अकेले मे खडे खडे। बरसात आती है, धूप आती है, तुम यही इसी तरह तने खडे रहते हो।" उसने कहा, 'बिल्कुल नहीं घबराता हू, बिल्कुल ऊब नही आती है, क्योंकि पक्षियो को डराने मे इतना मजा आता है जिसका कोई हिसाब नही।" जिब्रान ने कहा, यह तो बात तुम बहुत ठीक कहते हो। आदमी को डराने मे मुझ को भी मजा आता है। वह झूठा आदमी हसने लगा और उसने कहा, तब तुम भी एक झूठे आदमी हो।

जिसको दूसरे को डराने मे मजा आता है, वह झूठा आदमी (Pseudo Human being) है। क्योंकि उसके व्यक्तित्व का केन्द्र नकारात्मक है, भय है। वास्तविक मनुष्य, वास्तविक केन्द्र पर पैदा होता है। वह केन्द्र प्रेम है। जो मैं जिस पादरी की बात कर रहा था, वह कपा रहा है लोगो को। वे घबरा रहे है, और तभी उसने कहा मालूम है तुम्हे, नरक मे क्या होगा? इतनी सर्दी पडेगी कि दात किटकिटाएगे। एक आदमी खडा हो गया। उसने कहा, क्षमा करे मेरे दात टूट गए है। मेरा क्या होगा? पादरी को बहुत गुस्सा आया जैसा कि धर्मगुरुओ को हमेशा गुस्सा आता है प्रश्न पूछने पर। एक क्षण तो वह रुक गया फिर गुस्से मे उसने कहा कि ऐसे फिजूल के प्रश्न पूछते हो? नकली दात दे दिए जाएगे (False teeth will be provided)। उनको लगा कैसा फिर कापना लेकिन कापना जरूर पडेगा। दात जरूर किटकिटाने पडेगे।

आत्मा को हमने सर्वश्रेष्ठ चीजो के साथ भय से जोड दिया है। पाच हजार वर्ष की सारी मनुष्य जाति की शिक्षा व्यर्थ हो गयी है, नरक हो रही है। यह जो नकारात्मक भय है, इस केन्द्र से मनुष्य को हटा लेने की जरूरत

है। मगर एक ऐसी दुनिया चाहिए जहा दुनिया के जीवन मे सौदर्य हो, सगीत हो, आनद हो, गरिमा हो व्यक्तित्व की, एक बिखेरती हुई किरण हो जीवन की, एक स्वतत्रता हो, एक एक व्यक्ति का अपना अनूठापन हो, जहा सम्बन्ध हो प्रेम के, जहा युद्ध न हो, जहा शाति हो। इसके लिए मनुष्य के व्यक्तित्व के केन्द्र को बदल देना जरूरी है। भय की जगह प्रेम स्थापित करना होगा। जीवन की समस्त शिक्षाओ से भय को अलग कर देना जरूरी है। एक एक इच से अलग कर देना जरुरी है। लेकिन वह अलग नही होगा जैसा मैने कहा। अधेरे को अलग नही किया जा सकता है। तब क्या किया जा सकता है ? दिए को जलाया जा सकता है। प्रेम की ज्योति को जलाया जा सकता है। प्रेम को प्रकट किया जा सकता है ।

आदमी के भीतर प्रेम इतना छिपा है जिसका कोई हिसाब नही। यह दुनिया छोटी है। और एक आदमी के भीतर का प्रेम पूरा बहना शुरू हो जाय तो यह जगत छोटा है। जैसे हमे कल तक पता नहीं था कि एक अणु मे कितनी ऊर्जा हो सकती है। एक छोटे से अणु मे कितनी शक्ति हो सकती है। अणु का विस्फोट अनन्त शक्ति को जन्म देता है यह कल तक हमे पता नहीं था। एक रेत के छोटे से कण मे एक बडा महानगर नष्ट हो सकता है। हाइड्रोजन के एक छोटे से कण मे बम्बई की महानगरी इसी क्षण राख हो सकती है यह कभी हमे पता नही था। पानी की एक बूद के एक छोटे से कण मे कितनी ताकत हो सकती है इसका कल तक हमे कोई अदाज नहीं था। आदमी के भीतर कितनी ताकत हो सकती है प्रेम के कण मे, इसका हम कोई पता नही। कभी कभी थोडी झलक मिली है। कभी किसी बुद्ध मे कभी किसी क्राइस्ट मे कभी किसी सुकरात मे, छोटी सी झलक मिली है। लेकिन उस झलक को देखते ही हम एकदम टूट पडते है और उसे बुझा देते है। सुकरात दिखाई पडा कि हमने मारा। जीसस दिखाई पडे कि सूली पर लटकाया। गाधी दिखाई पडा कि गोली मार दी। हम इतने जोर से कूदते है इस झलक को मिटाने के लिये, क्यो ? क्योकि वह झलक हम सबका अपमान बन जाती है। क्योकि वह झलक हमे खबर देती है कि हम सब के घर अधेरे मे पडे है और एक घर मे दिया जल गया। बुझा दो इस दिए को। हम निश्चित हो जायें, विश्राम मे हो जायें कि सब जगह अधेरा है। ठीक है हम भी अधेरे मे हैं ।

आज तक दुनिया मे जब भी प्रेम की झलक किसी आदमी मे आयी तो

हमने उसे बुझाने की कोशिश की है ताकि हम निश्चित हो जायें, ताकि आत्म-ग्लानि पैदा न हो, घृणा पैदा न हो कि मैं कैसा आदमी हू ? जब बुद्ध पैदा हो सकते हैं, जब महावीर पैदा हो सकते हैं, जब क्राइस्ट पैदा हो सकते हैं, तो मेरे भीतर क्यो नही हो सकती है यह घटना ? एक एक आदमी के भीतर वही छिपा है जो सब आदमियो के भीतर छिपा हुआ है। आदमियत का बीज एक-सा ही बीज है। आम के एक बीज मे आम का वक्ष पैदा होता है। आम के दूसरे बीज से भी आम का वृक्ष पैदा होता है। आम के तीसरे बीज से भी आम का वृक्ष पैदा होता है। आदमियत के पास भी एक ही बीज है। उसी तरह एक ही वृक्ष भी पैदा हो सकता है। लेकिन हम उसे पैदा नही होने देते। कोई वृक्ष हो जाता है तो काट डालते है ताकि हमको यह ग्लानि न आए कि हम कुछ गल्त है। प्रेम की बडी सम्भावना मनुष्य के भीतर है लेकिन न उसकी शिक्षा है न उसे जगाने का उपाय है, न उसे प्रकट होने देने की सुविधा है, बल्कि हम सब प्रेम के शत्रु है। हमने सब जगह ऐसी व्यवस्था कर रखी है कि प्रेम कही पैदा न हो। हमने ऐसी चालाकिया की है कि प्रेम के लिए कोई मार्ग नहीं छोडा है। कहीं कोई मार्ग नही छोडा है। और प्रेम पैदा न हो तो जीवन मे जो भी महत्त्वपूर्ण है, वह कुछ भी पैदा नही होता। जैसा कि मैने कहा-- जहा भय है वहा घृणा पैदा होगी। जहा भय है, वहा ईर्ष्या पैदा होगी। जहा भय है वहा हिंसा पैदा होगी। जहा भय है वहा क्रोध पैदा होगा। जहा भय है, वहा पूरा नरक पैदा होगा। क्योकि भय के ये सब अनुषागिक है। ये सब भय की सतति है। ये सब भय के सूत्र है। जहा प्रेम है वहा आनद पैदा होगा, वहा शाति पैदा होगी, वहा करुणा पैदा होगी, वहा दया पैदा होगी। वहा सौदर्य पैदा होगा, वहा स्वर्ग के द्वार खुलेगे क्योकि ये सब प्रेम की सतति है। भय के केन्द्र का अतिम परिणाम विक्षिप्तता (Madness) है और प्रेम के केन्द्र का अतिम परिणाम विमुक्ति है।

प्रेम कैसे जन्मे ? प्रेम की बद दीवारे कैसे टूटे ? कोई राजनीतिज्ञ दुनिया का कोई नेता विश्व शाति नही ला सकता है क्योकि राजनीति के सारे केन्द्र भय के हैं। कोई धर्मगुरु शाति नही ला सकता है क्योंकि तथाकथित धर्मगुरुओ का केन्द्र ही भय है, जिसके आधार पर वह गुरु बना हुआ है और शोषण कर रहा है। दुनिया मे तो एक ही रास्ते से शाति आ सकती है, मनुष्य के व्यक्तित्व मे और समस्त जीवन मे, प्रेम का जन्म हो। कैसे प्रेम का

जन्म हो, प्रेम क्या है, वह कैसे पैदा हो? वह सबके भीतर पड़ा हुआ बीज है लेकिन बीज बीज ही रह जाता है, वह अंकुरित नही हो पाता। उसे भूमि नहीं मिल पाती। उसे पानी नही मिल पाता। उसे सूरज की रोशनी नहीं मिल पाती। वह बीज बीज ही रह जाता है। और जो बीज ही रह जाता है उसके भीतर एक कसक, एक दर्द, एक पीड़ा रह जाती है कि मैं जो हो सकता था, वह नही हो पाया। एक विफलता उसके आसपास छाई रह जाती है। मनुष्य मे जो चिंता दिखाई पड़ती है, वह प्रेम के बीज प्रकट न होने की चिंता है। मनुष्य मे जो उदासी दिखाई पड़ती है वह उसके भीतर जो होने की सम्भावना (potentuality) थी, वह न हो पाने के कारण ही है। सम्भावना वास्तविकता (Actuality) न बन पाये, तो एक गहरा दुख व्यक्ति चेतना को पकड़ लेता है। लेकिन व्यक्ति जो होने को पैदा हुआ है, जो उसकी नियति है, वह हो जाये तो एक अद्भुत आनंद से वह भर जाता है। जब एक गुलाब फूलो मे भर जाता है और जब एक चमेली खिल जाती है, तो सुगंध लुटाती हुई और हवा मे नाचती हुई उसकी पत्तियो को देखा है? हवा मे नाचते हुए उस पौधे को देखा है जिसके फूल खिल गए है पूरी तरह? उससे ज्यादा मौज में, उससे ज्यादा आनन्द मे कोई कभी दिखायी पडता है? निश्चित ही जिस पौधे पर फूल नहीं आ पाते हैं जिसकी कलिया, कलिया ही रह जाती है और कुम्हला जाती हैं, उसकी उदासी देखिए, उसकी चिंता देखिए, उसके लटके हुए, मुरझाए हुए पत्ते देखिए।

आदमी के भीतर जो जो फूल खिलने को है, अगर न खिल पाए तो वह भी उदास हो जाता है, चिंतित हो जाता है। लटक जाती हैं उसकी पत्तिया, उसका व्यक्तित्व भी मुरझा जाता है। ऐसे ही सारी मनुष्यता का व्यक्तित्व मुरझा गया है। क्या कभी आपने अपने से पूछा है कि मेरी सबसे गहरी प्यास क्या है धन, पद, मोक्ष, परमात्मा? नही। अगर आप अपने से गहरे से गहरे मे पूछेंगे तो प्राण एक ही उत्तर देता हैं– 'प्रेम दे सकू और पा सकू।" एक ही उत्तर है प्राणियो के पास कि प्रेम मुझ से बह सके और मुझ तक आ सके। एक ऐसा जीवन जहा प्रेम की वीणा अपने पूरे संगीत को प्रकट कर सके, ऐसा जीवन जहा प्रेम का पूरा फूल खिल सके। एक, एक मनुष्य के केन्द्र पर इसके अतिरिक्त कोई पुकार नही है। कोई आह्वान नही है। और मैं आपसे कहना चाहता हू कि जिस दिन यह प्रेम का फूल पूरी तरह खिलता है उसी दिन परमात्मा भी उपलब्ध हो जाता है। प्रेम परमात्मा का

द्वार है। लेकिन प्रेम का हमे कोई ख्याल नही, कोई भान नही, क्या करे ? यह प्रेम कैसे विकसित हो, इसकी बन्द दीवाले कहा से तोडी जाये, यह झरना कहा से फोडा जाए कि खुल जाय ? कुछ करना बहुत अपरिहार्य हो गया है, बहुत जरूरी हो गया है। अगर हम नही करते है तो शायद प्रेम के अभाव मे पूरी मनुष्यता नष्ट भी हो सकती है। इसीलिए दो तीन छोटे-से सूत्र आपसे कहना चाहता हू जिससे यह प्रेम की सरिता बह उठे।

पहली बात, जिस व्यक्ति को जीवन मे प्रेम के फूल को खिलाना हो उसे प्रेम मागने का ख्याल छोड देना चाहिए। उसे प्रेम देने का ख्याल कर लेना चाहिए। पहला सूत्र, जो लोग प्रेम मागते है, उनके भीतर प्रेम का बीज कभी अकुरित नहीं हो पाएगा। जो लोग प्रेम देते है उनके भीतर प्रेम का बीज अकुरित हो सकता है। क्योकि अकुरित होने के लिए दान चाहिए। एक बीज जब अकुरित होता है तो क्या करता है ? पत्तिया निकलती है, शाखाए निकलती है, फूल खिलता है, सुगध बिखर जाती है, सब बट जाता है। बट जाने से भीतर का बीज खुलता है और मागने से सिकुड जाता है। भिखमगे से ज्यादा सिकुडा हुआ हृदय किसी का भी नही होता है। जो मागता है, वह सिकुडता जाता है। उसके भीतर कोई चीज बन्द होती चली जाती है। प्रेम के द्वार पर जो भिक्षा के लिए हाथ फैलाते है, उनके हाथ खाली रह जाते है। लेकिन जो देने के लिए हाथ बढाते है, उनका दान अनत गुना होकर लौट आता है। लेकिन हम सब भिखारी बने खडे है। कारण कि हम भय से भरे हैं।

भयभीत आदमी मागता है। भयभीत भिखमगा होता है। भय ने हमे भिखारी बनाया है क्योकि भय कहता है कि इसे मत छोडो। जो मिल जाए उसे ले लो। भय भिखारी बनाता है। प्रेम सम्राट बना देता है। लेकिन सम्राट् बनने की दिशा देना है, मागना नहीं। प्रेम का पहला सूत्र है कि प्रेम तब तक जन्म नही पा सकेगा जब तक हम मागते है। हम सब एक दूसरे से मागते है। मा बच्चे से कहती है कि तुम प्रेम नही करते हो बेटा सोचता है, मा मुझे प्रेम नही करती। पत्नी कहती है, पति मुझे प्रेम नहीं करता। चौबीस घटे एक ही शिकायत है पत्नी की कि तुम प्रेम नही करते और पति की भी यही शिकायत है कि मैं थका-मादा घर आता हू मुझे कोई प्रेम नही मिलता है। दोनो माग रहे हैं, दोनो भिखारी, एक दूसरे के सामने झोली फैलाए खडे हुए है। पर यह सोचते नही कि उस तरफ भी मागने वाला खडा है

और इस तरफ भी मागने वाला खडा है। जीवन मे कलह, द्वन्द्व और युद्ध न होगा तो और क्या होगा ? जहा सभी भिखारी है वहां जीवन बरबाद नही होगा तो क्या होगा ?

प्रेम के जन्म का पहला सूत्र है---प्रेम दान है, भिक्षा नही। इसलिए जीवन मे देने की तरफ दृष्टि जगनी चाहिए। यह मत कहें कि पति मुझे प्रेम नही देता। उसका एक ही मतलब है, आप प्रेम नही दे रहा हैं। यह मत कहे कि पत्नी मुझे प्रेम नही दे रही है। इसका मतलब है कि आप प्रेम नही दे रह है। क्योंकि जहा प्रेम दिया जाता है वहा तो वह अनत गना होकर वापस लौटता है, जीवन का यही शाश्वत नियम है। गाली दी जाती है, तो गालिया अनत गुना होकर वापस लौटती हैं और प्रेम दिया जाता है तो प्रेम अनत गुना होकर वापस लौट आता है। जीवन एक इकोप्वाइंट से ज्यादा नही है। जहा हम जो ध्वनि करते हैं, वह गूजकर वापस हम पर आ जाती है। और हर व्यक्ति एक इकोप्वाइंट है। उसके पास जो हम करते है, वही वापस लौट आता है। वही अनत गुना होकर वापस लौट आता है। प्रेम मिलता है उन्हे, जो देते हैं। प्रेम उन्हे कभी भी नही मिलता है जो मागते हैं। जब मागने से प्रेम नहीं मिलता तो और माग बढती चली जाती है और माग से प्रेम कभी मिलना नही है। प्रेम उनको मिलता है जो देते है जो बाटते है। लेकिन हमे हमेशा बचपन से यह सिखाया जा रहा है मागो, मागो, मागो! इस माग ने हमारे भीतर के बीज को नष्ट कर दिया है। इसलिए पहला सूत्र है प्रेम दो। दूसरा सूत्र यह है कि देने मे अगर अपेक्षा रखेंगे देने मे अगर कोई प्रत्याशा (expectation) रखेंगे, देने मे अगर कोई ख्याल है कि लौटना चाहिए तो कभी नहीं लौटेगा। लौटेगा नही और भीतर जो पैदा हो सकता था वह भी पैदा नही क्योंकि देना कभी भी सशर्त (conditional) नही हो सकता है। दान हमेशा बेशर्त है।

तो दूसरा सूत्र है---प्रेम का जन्म होगा अगर प्रेम का बेशर्त दान हो। बेशर्त दान प्रेम की शिक्षा की दूसरी सीढी है। लेकिन हम हमेशा शर्त बन्द हैं। देने के पहले हमारी माग खडी है। देने के वक्त हमारी अपेक्षा खडी है। दिया नहीं और हम तैयार है कि उत्तर वापस आना चाहिए। ऐसा जो मन है, जो उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा है, उसे पता नही है कि उस उत्तर की प्रतीक्षा मे देने के कारण उसके भीतर जो पैदा

होता है, वह उसे दिखाई ही नहीं पड़ेगा। जब मैं किसी को प्रेम दूं तो अगर उससे कोई अपेक्षा है तो नजर उस पर लगी रहती है कि वह क्या करता है और अगर उससे कोई अपेक्षा नहीं है तो देने के बाद नजर खुद पर जाती है, कि देने मे क्या हुआ है। देने से भीतर के फूल खिल उठते हैं। उसके लिए ध्यान (Meditation) चाहिए। जिसकी नजर दूसरे पर होती है उसका ध्यान तो उस पर कभी जाता ही नही, जो स्वय उसके भीतर हो रहा है। ध्यान उस पर जाता है जिसके साथ हमने किया है। चूक गये एक मौका। जैसे बीज के लिए सूरज की किरणें चाहिए ऐसे ही भीतर प्रेम के बीज के लिए ध्यान की किरणे चाहिए। ध्यानपूर्ण चेतना चाहिए ताकि मेरा ध्यान भीतर जाये। ध्यान की किरणे भीतर जायें। भूमि चाहिए दान की किरणे चाहिए ध्यान की। तो भीतर किरणे चाहिए लेकिन मेरा ध्यान तो लगा हुआ है उस पर जिसको मैंने प्रेम दिया है।

मैंने किसी को हाथ का सहारा देकर जमीन से उठा दिया तो देख रहा हूं कि आसपास फोटोग्राफर है या नही। कोई अखबार वाला है या नहीं। वह आदमी उठकर धन्यवाद देता है या नहीं। चूक गया मैं मौका। एक क्षण आया था जब मैं भीतर जा सकता था। और जो दान घटित हुआ था उस दान के पीछे जो भीतर फूल खिल सकता था उसे देखता। मेरे देखने के साथ ही वहा भीतर कोई कली खिल जाती, लेकिन मै चूक गया। देखने का मौका भूल गया। मै बाहर देखने लगा। मैं फोटोग्राफर खोजने लगा। मै अखबार वाले को देखने लगा। मै उस आदमी को देखने लगा कि बेइमान कुछ कहता है कि चुपचाप चला जाता है? धन्यवाद देता है कि नहीं? चूक गया एक क्षण, एक पल आया था जब भीतर नजर जाती तो कोई चीज खिल जाती। आपको शायद पता न हो आख जहा चली जाती है वही चीज खिल जाती है।

मनुष्य के पास जो सबसे बड़ी ताकत है वह आंख की ताकत है, देखने की ताकत है, और कोई बड़ी ताकत नहीं है। सबसे बड़ी, सबसे सूक्ष्म, सबसे मूल्यवान ताकत जो है वह देखने की है। किसी को जरा प्रेम से देखे, जैसे वहा कोई चीज खिल जाती है। कोई उदासी मिट गई, कोई रोशनी हो गई। तो जरा प्रेम से देखिये वहा जैसे कोई फूल खिल गया है, कोई सुगन्ध आ गई है। ऐसे ही जब कोई भीतर, अपने भीतर दान के क्षण मे

प्रेम से देखता है, निहारता है तो वहा भी कोई चीज खिल जाती है, हृदय मे कोई फूल खिल जाता है।

दूसरा सूत्र है दान के क्षण मे बेशर्त, बिना किसी अपेक्षा के, चुपचाप मौन, बिना किसी उत्तर के रह जाना। तीसरा सूत्र है -जो आपके प्रेम को स्वीकार करले उसके प्रति अनुग्रह का भाव (Gratitude) कि उसने स्वीकार किया। हम तो यह चाहते है कि वह हमारा धन्यवाद करे कि हमने उसे प्रेम दिया। लेकिन प्रेम का बीज यह चाहता है कि हम अनुग्रह स्वीकार करे। कोई इन्कार भी कर सकता था। एक गिरा हुआ आदमी यह भी कह सकता था कि नहीं, मत उठाओ। फिर मेरी क्या सामर्थ्य कि मैं उसे उठाने का मौका पाता। लेकिन नही उसने मुझे उठाने दिया। उसने एक अवसर दिया कि मेरे भीतर जो प्रेम है वह बह सके। उसने एक मौका (opportunity) दिया उसके लिए धन्यवाद देना चाहिए। यह नही कि वह मेरा धन्यवाद करे। मैं उसे धन्यवाद दू कि मैं कृतज्ञ हुआ, मैं अनुगृहीत हुआ। तो मैं अनुगृहीत हू कि तुमने मेरे प्रेम को स्वीकार कर लिया। यह तीसरा सूत्र है जो प्रेम को स्वीकार करे उसके प्रति अनुग्रह भाव। इस अनुग्रह के भाव मे भीतर की कली और जोर से चटखेगी और खिलेगी। क्योकि अनुग्रह के भाव मे ही जीवन मे जो भी महत्वपूर्ण है वह खिलता है और विकसित होता है।

अनुग्रह से बडा कोई भाव नही, कोई प्रार्थना नहीं। लेकिन हाथ जोडे बैठे है भगवान के सामने और कुछ शब्द दोहरा रहे हैं, यह प्रार्थना नही है। जीवन के समक्ष अनुग्रह का भाव, तारो के समक्ष सूरज के समक्ष, फूलो के समक्ष, लोगो के समक्ष, चारो तरफ यह जो विराट जीवन है, इसके प्रति कृतज्ञता का भाव क्योंकि वह प्रेम को स्वीकार करता है। यह मेरे प्रेम को बहने का मौका देता है। यह मेरी आत्म-उपलब्धि मे सहयोगी और मित्र बन गया है। इस सब का अनुग्रह, इस सब का धन्यवाद जब मन मे होगा तो भीतर के झरने फूट पडेगे और जिस दिन प्रेम का झरना भीतर बहने लगता है उसी दिन पाया जाता है कि भय कही भी नही है। है ही नही। वह था ही नही। वह प्रेम की अनुपस्थिति थी। वह गैर मौजूदगी थी।

जब प्रेम से हृदय भर आता है तो इस जगत मे कोई भय नहीं रह जाता। तब हाथ मे तलवार उठाने की जरूरत नही। तब राम-राम जपकर मन को बोथला करने की कोई जरूरत नही है। तब तो सब तरफ राम ही

दिखाई पड़ने लगता है। तब तो सब तरफ उसी परमात्मा के दर्शन होने लगते हैं। जब भीतर परमात्मा होता है तो सारा जगत परमात्मा हो जाता है। और जब भीतर भय होता है तो सारा जगत शत्रु हो जाता है। भीतर जो है वही बाहर हो जाता है। भीतर भय है तो बाहर खतरा है। भीतर प्रेम है तो बाहर प्रभु है। वह प्रीतम, फिर सब तरफ वही है, हर इशारे में, हर दृष्टि में, जीवन में मौत में, काटे में, फूल में, पत्थर में सब में वही है।

जिस दिन हृदय इतने प्रेम से भर जाता है कि चारों ओर परमात्मा के दर्शन होने लगते हैं, उसी दिन भय का अधकार विलीन हो जाता है। और जहा भय नहीं है वहा जीवन का सत्य है। जहा भय नहीं है वहा जीवन का आनद है। जहा भय नहीं है वहा जीवन का सौन्दर्य है। और जहा भय नहीं है वहा जीवन का सगीत है। लेकिन अभी तो हम सब विसगीत में हैं, दुख में हैं, चिन्ता में हैं भय में हैं, क्योंकि प्रेम का मदिर हम नहीं बना पाये। आज तक की पूरी मनुष्यता ही गलत रही है। ठीक और स्वस्थ मनुष्यता का जन्म हो सकता है। उसके लिए मनुष्य के प्राणों से भय को हटाकर प्रेम को स्थापित करना होगा।

दो : जीवन की कला

जीवन की कला

मैं अत्यन्त आनन्दित हूं। छोटे छोटे बच्चो के बीच बोलना अत्यत आनन्दपूर्ण होता है। एक अर्थ में अत्यन्त सृजनात्मक होता है। बूढ़ो के बीच मुझे बोलना इतना सुखद प्रतीत नही होता। क्योकि उनमे साहस की कमी होती है, जिसके कारण उनके जीवन मे क्राति होना करीब करीब असभव है। छोटे बच्चो मे तो साहस अभी जन्म लेने को होता है। इसलिए उनके साहस को पुकारा जा सकता है और उनसे आशा भी बाधी जा सकती है। एक बिल्कुल ही नई मनुष्यता की जरूरत है। शायद उस दिशा मे तुम्हें प्रेरित कर सकू इसलिए मे खुश हू।

मे थोडी सी बातें बच्चो से कहना चाहूगा, कुछ अध्यापको से और कुछ अभिभावको से जो यहा मौजूद हैं, क्योकि शिक्षा इन तीनो पर ही निर्भर होती है।

पहली बात तो मे यह कहू कि विद्यालय सारी दुनिया मे बनाये जा रहे हैं, विश्वविद्यालय बनाये जा रहे हैं। सारी दुनिया का ध्यान बच्चो की शिक्षा पर दिया जा रहा है और ज्यादा मे ज्यादा लोग शिक्षित भी होते जा रहे हैं लेकिन परिणाम बहुत शुभ नही है। अभी हमारे मुल्क मे शिक्षा कुछ कम है, कुछ दिनो मे बढ जायेगी, लेकिन शिक्षा के साथ-साथ जगत मे न शांति आ रही है, न आनन्द आ रहा है। हम मानते हैं कि शिक्षा देकर बहुत कुछ हो जायेगा लेकिन ऐसा होता नहीं। जरूर शिक्षा के आधारो मे भूलें होगी, निश्चित ही कुछ आधारभूत गडबड होगी। शिक्षा का उपक्रम असफल ही है। एक विवेकपूर्ण सस्कृति पैदा करने मे वह बिल्कुल विफल है। हम देखते हैं कि जो मनुष्य शिक्षित हैं, वे मनुष्यता की दृष्टि से उन मनुष्यो से भी नीचे हो गये हैं, जो कि अशिक्षित हैं। पहाड़ो मे जो आदिवासी हैं, वे हमसे ज्यादा प्रेमपूर्ण हैं। हम जो बहुत ज्यादा कठोर, असभ्य वा पाषाण-हृदय होते जा रहे हैं, वह सब शिक्षा से ही हो रहा है। वही शिक्षा तुम्हें भी मिल रही है, वही शिक्षा सारी दुनिया मे सारे बच्चो को मिल रही है। इससे डर मालूम हो रहा है। तुम्हारा भविष्य कुछ बहुत प्रकाशपूर्ण नही है। अगर इस शिक्षा पर तुम निर्भर रहे तो तुम्हारे सबध मे बहुत आशा नहीं बांधी जा सकती।

क्योकि आज तक इस शिक्षा से जो कुछ पैदा हुआ है वह किसी भी भाति सुखद नही है।

जैसा कि अभी यहा कहा गया कि विद्याक्रम मे धार्मिक शिक्षा जोडी जाये, लेकिन वह भी हो तो भी कुछ होने वाला नहीं है। क्योकि दुनिया मे धार्मिक शिक्षा बहुत दिनो से दी जा रही है, उसके परिणाम अच्छे नहीं हुए हैं। धर्म की शिक्षा के नाम पर क्या सिखाया जाता है ? अगर जैन धर्म से सबधित विद्यालय है तो जैन धर्म की शिक्षा सिखाई जाती है और किसी दूसरे धर्म का, तो दूसरे धर्म के शास्त्र पढाये जाते हैं। लेकिन शास्त्र जानने से क्या होता है ? सिखाने के नाम पर बच्चो से शब्द और शास्त्र कठस्थ करा लिये जाते हैं। कोरी बाते तुम्हारे दिमाग मे डाल दी जाती हैं। तुम्हें बता दिया जाता है कि आत्मा है, स्वर्ग है, मोक्ष है। तुम्हें बता दिया जाता है कि कैवल्य-ज्ञान का क्या अर्थ है, सम्यक् दर्शन क्या है, सम्यक् चारित्र क्या है। यह सब तुम सीख लेते हो, उसकी परीक्षा दे देते हो और परीक्षा मे उत्तीर्ण भी हो जाते हो। लेकिन इससे कोई बेहतर आदमी पैदा नही होता। मै ऐसी धार्मिक शिक्षा के विरोध मे हू, क्योकि उससे परिणाम भले की जगह बुरे ही निकलते हैं।

ऐसी शिक्षा के परिणामस्वरूप छोटे छोटे बच्चे यदि जैन स्कूल मे पढें तो जैन हो जाते हैं, मुसलमान स्कूल मे पढें तो मुसलमान हो जाते है, ईसाई स्कूल मे पढे तो ईसाई हो जाते हैं, और फिर ये जैन, मुसलमान, ईसाई आपस मे झगडकर परेशानी पैदा करते है। इन साम्प्रदायिक बुद्धि के लोगो मे मनुष्यता का निरतर घात होता है। इस भाति की शिक्षा मे तुम्हारे भीतर धर्म का नही, वरन धार्मिक सकीर्णता और जडता का जन्म होता है। तुम सम्प्रदायो से बध जाते हो सारी मनुष्यता के साथ एकात्मकता के साथ न बधकर एक अलग छोटे से टुकडे के साथ बध जाते हो और इन टुकडो के कारण दुनिया मे बहुत सघर्ष, बहुत वैमनस्य और बहुत ईर्ष्या चली है। इसके इतने दुखद परिणाम हुए हैं, इतनी हिंसा बढी है, जिसका कोई हिसाब नही। तो फिर क्या करे ? मै यह निवेदन करना चाहता हू कि धार्मिक शिक्षा की जरूरत नहीं है, धार्मिक साधना की जरूरत है। और यह बडे आश्चर्य की बात है कि धार्मिक शिक्षा या तो जैनियो की होगी या मुसलमानो की होगी या हिन्दुओ की होगी—लेकिन धार्मिक साधना न तो जैन की होती है, न मुसलमान की होती है, न हिन्दू की होती है। धार्मिक साधना तो बात ही अलग है—उसका सम्प्रदाय से कोई सबध नही है। धार्मिक साधना का क्या अर्थ है ?

धार्मिक साधना का अर्थ है बच्चो को सत्य के लिए तैयार करो, प्रेम के लिए तैयार करो। धार्मिक साधना का अर्थ है बच्चो को शांति के लिए तैयार करो, ध्यान के लिए तैयार करो, आत्मा के भीतर जाने के लिए तैयार करो। सत्य न तो जैन का होता है, न मुसलमान का होता है, न हिन्दू का होता है। प्रेम न तो जैन का होता है, न मुसलमान का होता है, न हिन्दू का होता है। ध्यान किसी सप्रदाय का नही होता। लेकिन हम देते हैं धार्मिक शिक्षा और देनी चाहिये धार्मिक साधना। लेकिन आज धार्मिक साधना देने के लिए कोई उत्सुक नही है। बच्चो को मनुष्य बनाने की किसी की भी उत्सुकता नही है। हिन्दू डरा हुआ है कि उसका लडका ईसाई न हो जाये इसलिये उसके दिमाग मे रामायण और गीता भर दी जाती है। ऐसे ही ईसाई भी भयभीत है। यह भय है सारी दुनिया मे। और इस भय की वजह से सभी धर्म कहते हैं कि बच्चो को धार्मिक शिक्षा दी जाय। उनकी कोई इच्छा मनुष्य को बेहतर मनुष्य बनाने की नही है। उनकी इच्छा तो हिन्दू बनाने की है, जैन बनाने की है, मुसलमान बनाने की है। और जो मनुष्य ऐसे विशेषणो के साथ है, वह ठीक मनुष्य नही है। मै पूछना चाहता हू कि क्यो बच्चो को हिन्दू बनाना है, जैन बनाना है, ईसाई बनाना है—क्या साप्रदायिक मूढताओ और सकीर्णताओ और वैमनस्यो ने मनुष्य जाति की काफी हानि नही कर ली है ? धर्म का जन्म इन धर्मों के कारण ही तो नही हो पाता है। इसलिए जिनका धर्म से प्रेम है, उनके सामने पहला लक्ष्य है मनुष्य जाति की धर्मों से मुक्ति। जिसे धर्म का होना है, उसके लिए धर्मों के होने का कोई भी मार्ग नही है।

अगर मनुष्य बनाना है तो धार्मिक शिक्षा मे नही, धार्मिक साधना मे जाना पडेगा। और धार्मिक साधना का रास्ता बिल्कुल अलग है धार्मिक शिक्षा से। धार्मिक शिक्षा से थोथा पाडित्य पैदा होता है, धार्मिक साधना से धार्मिक चित्त पैदा होता है। पांडित्य और ज्ञान मे अतर है। थोथा पाडित्य दुनिया से मिट जाये तो बेहतर। दुनिया मे ज्ञान चाहिये। धार्मिक चित्त से सतत्व पैदा होता है। और सतत्व बहुत कम है, क्योकि जिस सत को यह ख्याल हो कि मै जैन हू, हिन्दू हू, मुसलमान हू, तो समझ लेना कि वह अभी पडित ही है। अभी तो तथाकथित सत भी इस हालत मे नही है कि पूर्ण मनुष्यता के साथ अपना तादात्म्य कर सके। सत घर द्वार को छोड देता है, बच्चे छोड देता है, पत्नी को छोड देता है, वस्त्र भी छोड देता है लेकिन मुझे शक है उसने समाज को छोड़ा या नहीं ! अगर वह हिन्दू घर मे पैदा हुआ तो उसने हिन्दूपन

को तो छोड़ा ही नही और यदि वह जैन घर मे पैदा हुआ है तो वह अभी भी जैन बना हुआ है। वह कहता है कि मैने समाज को छोड़ा लेकिन समाज को कहा छोडा ? जिस समाज ने सिखाया कि तुम जैन हो, हिन्दू हो, मुसलमान हो—वह उसी का तो हिस्सा बना हुआ है। पत्नी को छोडना बहुत आसान है, पत्नी को छोडना बहुत कठिन नही है। यदि मौका मिल जाये तो पत्नी को छोडने को हर कोई राजी हो सकता है। पत्नी को छोडना कठिन नही है, क्योकि पत्नी को झेलना एक उत्तरदायित्व है। अपने बच्चो को छोडकर भागना भी कठिन नही है, हर कोई कमजोर और काहिल बच्चो को छोडकर भागना भी चाहेगा। यह कोई कठिनाइया नही हैं। और जिस समाज मे छोडकर भागनेवाले को आदर मिलता हो वहा तो यह बहुत ही सरल बात है। छोडने मे व्यक्ति उत्तरदायित्व से तो बच ही जाता है और आदर को भी उपलब्ध हो जाता है। अहकार की भी तृप्ति होती है और बोझ भी कम हो जाता है।

यदि छोडना है तो समाज के उन सस्कारो को, उसके दिये गये विचारो को, समाज के द्वारा भीतर डाले गये ख्यालो को छोडो, किन्तु समाज के द्वारा डाले गये घेरे को तोडना कठिन है। इसे जो तोडता है मेरी दृष्टि मे वही साधु है। और जो उसके भीतर खडा है, वह पण्डित से ज्यादा कभी नही है। दुनिया मे साधना की जरूरत है। ऐसे साधु यदि दुनिया मे हो सकें तो दुनिया एक अलग ढग की दुनिया हो सकती है। एक बहुत बडी दुनिया का निर्माण हो सकता है जहा सारी दुनिया के बीच प्रेम का सागर लहरा सके। यह कौन करेगा ? अगर यह छोटे छोटे बच्चे नये ढग से तैयार किये जायें तो यह हो सकता है। नही तो नही हो सकता है। मगर यह छोटे बच्चे भी उन्ही ढाचो मे ढाले जा रहे हैं, जिनमे हजारो सालो से ढलाई चल रही है। ये भी उन्ही ढाचो मे डालकर तैयार किये जायेंगे और उन्ही लडाइयो को लडेंगे, ईर्ष्याओ को पालेंगे और उन्ही घृणाओ मे जियेंगे जिनमे इनके मा-बाप जिये थे।

दुनिया को बदलने के लिये शिक्षा बुनियादी रूप से धार्मिक होनी चाहिये, लेकिन धार्मिक शिक्षण नही, धार्मिक साधना। इन बातो का स्पष्टीकरण हो जाये तो इस गुरुकुल मे भी एक क्राति हो सकती है। धार्मिक साधना की फिक्र कीजिये। बच्चो को हिन्दू या जैन बनाने की कोशिश छोड दीजिये। बहुत दिन दुनिया में हिन्दू, जैन टिकने वाले नही हैं। दुनिया मे धर्म बचेगा, हिन्दू, जैन नहीं। न यह दुनिया मे बचने ही चाहिये। क्योकि इनके कारण

दुनिया में परेशानियां ही हुई हैं। यह भी मै निवेदन करना चाहता हू कि दुनिया से अगर हिन्दू, जैन, मुसलमान, बौद्ध, ईसाई चले जायें तो कोई हर्जा नही, महावीर, बुद्ध, कृष्ण और क्राइस्ट कही भी नही जाते। जैन के मिटने से महावीर नहीं मिटते बल्कि जैनो के होने से महावीर मिटे हुये हैं। जैनो की वजह से महावीर सबके हो नही पाते। एक घेरा डाले हैं जैनी महावीर के चारो तरफ और इनकी वजह से दूसरो के लिये दरवाजा बद है। कितने जैन हैं जिन्होने बाईबिल को पढा हो, क्योकि बाईबिल को ईसाईयों ने बाधकर रखा है। क्या आपको पता नही कि बाईबिल मे अद्‌भुत हीरे भरे है ? कितने ईसाई हैं जिन्होने महावीर की वाणी पढी है, क्योकि महावीर को जैन बाधकर रखे हुये हैं। और महावीर की वाणी मे अद्‌भुत खजाने भरे हैं। दुनिया मे जितने भी महत्वपूर्ण खजाने थे उन खजानो पर दुष्टो ने कब्जा कर लिया है, और पूर्ण मनुष्य जाति को उससे वचित कर दिया है। यह घेरे टूटने चाहिये ताकि यह सारी सपत्ति सबकी हो जाये। महावीर सबके हो, राम सबके हो, कृष्ण सबके हो, क्राइस्ट सबके हो।

विज्ञान तो तुम सब पढते होगे। विज्ञान की खोज तो सारी दुनिया की खोज होती है। एडीसन अगर कोई खोज करता है तो वह किसकी होती है ? आईन्स्टीन अगर कोई खोज करे तो वह खोज सारी दुनिया की हो जाती है। कोई भी वैज्ञानिक दुनिया मे खोज करता है तो सारी दुनिया की हो जाती है। लेकिन धर्म के सबध मे जो कोई बहुमूल्य खोज हुई है वह सारी दुनिया की अभी तक नही हो पाई है। इससे दुनिया बहुत दरिद्र है। इससे दुनिया की जो आध्यात्मिक समृद्धि हो सकती थी वह नहीं हो पाई।

बच्चो को इस भाति तैयार किया जाना चाहिये कि वे मनुष्य बनें, धार्मिक बने। धार्मिक होना तथाकथित धर्मभेदो मे उलझने मे दूसरी बात है। एक दिन एक साधु मेरे पास ठहरे हुये थे। सवेरे ही उठकर उन्होने पूछा कि जैन मदिर कहा है ? मैने पूछा कि क्या करियेगा जैन मदिर को जानकर ? उन्होने कहा कि मैं आत्मध्यान के लिए वहा जाना चाहता हू, सामायिक के लिये वहा जाना चाहता हू। मैने कहा कि आप निश्चित हैं कि आपको आत्मध्यान ही करना है ? और कोई बात तो नही है ? उन्होने कहा कि "निश्चित हू, मुझे शाति चाहिये और आत्मध्यान करना चाहता हू, और कुछ नही।" मैने कहा कि "यहा जो जैन मदिर है, वह तो बाजार मे है, हमारे बगल मे एक चर्च है, वहा एकदम सन्नाटा है, एकदम शाति है और आज रविवार भी नही है, इस

लिये वहा कोई ईसाई भी नहीं आयेगा, आप वहा जाये और आत्मध्यान करें।" चर्च का नाम सुनते ही साधु सटपटाये और कहने लगे "चर्च में" ? मैंने कहा आपको तब आत्मध्यान से कोई सबध नही है। जिसे चर्च शब्द से बाधा है, वह आत्मा को जान सकेगा यह असभव है। यह हमारे साधु की बुद्धि है। जिसको चर्च जैसी छोटी चीज से बाधा है वह आत्मा जैसी विराट शक्ति से कैसे परिचित हो सकता है ? यह असभव है। मैंने कहा कि आपको जैन मदिर जाना है, आपको आत्मध्यान मे कोई मतलब नहीं है, न ध्यान से कोई मतलब है। जैन मदिर इसलिए जाना है कि बचपन से ही सिखाया गया है कि "मदिर जाना धर्म है।"

मैं आपसे कहना चाहूगा कि आत्मा मे जाना धर्म है, किसी मदिर मे जाना धर्म नही है। लेकिन शिक्षा अगर होगी तो वह सिखायेगी कि जैन मदिर मे जाना धर्म है, और साधना अगर होगी तो वह सिखायेगी कि भीतर जाना धर्म है। एक ईसाई से भी मैं यही कहता हू कि चर्च अगर दूर है और जैन मदिर पडोस मे है तो वहीं बैठ जाओ, हिन्दू मदिर पडोस मे है तो वहीं बैठ जाओ। सवाल महत्त्वपूर्ण यह नही है कि आप किस मदिर मे बैठे हैं, सवाल महत्त्वपूर्ण यह है कि आप अपने भीतर प्रवेश करते है या नही ? जहा आप अपने भीतर प्रवेश करते हो वहा धर्म से सबधित होते है और जहा आप मकानो का हिसाब-किताब रखते है वहा आपका धर्म से कोई सबध नहीं है।

मै एक महानगरी मे जाता था। वहा एक मित्र के यहा ठहरता था। उनकी बगल मे ही चर्च था। बहुत सन्नाटे का स्थान था। मैं सुबह ही उठता और चर्च मे चला जाता। मेरे मित्र ने कहा 'आपने मुझसे क्यो नही कहा, मै आपको मदिर ले चलता।" मैंने कहा "मेरा काम तो यही पूरा हुआ।" लेकिन मैं चर्च मे गया इस कारण वे बहुत दुखी हुए। फिर पाच वर्षों के बाद दोबारा उनके यहा मेहमान हुआ। सुबह वे मुझ से बोले 'धर्मस्थान चलिये।' गया तो हैरान हो गया। वे उसी चर्च मे ले गये थे जिसको अब ईसाइयो ने बेच दिया था। अब वह स्थान मदिर हो गया था। मैने उनसे पूछा, यह वही जगह है, जहा मैं पहले आया था। उस समय आप नाराज हुए थे। इस बार इस जगह आप बडी खुशी से मुझे लेकर आये हैं। इस जगह मे तो कोई भी फर्क नही पडा है। उन्होने कहा "बहुत फर्क पड गया है, पहले चर्च था अब पवित्र मदिर है।"

जिनकी बुद्धि इन तख्तियो मे लटकी हो, उनको भी कभी आत्मा से

सबध हो सकता है ? यह असभव है लेकिन यह तख्ती तुम्हें भी सिखाई जा सकती है, इस नाम पर कि तुम्हें धार्मिक शिक्षा दी जा रही है और यह खतरनाक होगी। यह कोई धार्मिक शिक्षा नहीं है। बच्चो को सिखाया जाना चाहिये कि तुम भीतर कैसे जा सको और यह बड़े मजे की बात है कि बूढे की बजाय बच्चे बड़ी आसानी से आत्मप्रवेश कर सकते हैं, क्योकि बूढ़ो की बजाय बच्चे ज्यादा सरल हैं, ज्यादा सौम्य हैं, ज्यादा भावयुक्त हैं। इसलिए बच्चो मे बहुत शीघ्रता से भीतर प्रवेश हो सकता है। बच्चे बहुत शीघ्रता से ध्यान मे और सामायिक मे प्रवेश पा सकते हैं। लेकिन बच्चो को कोई सिखाने वाला नही है। और सिखायेगा कौन ? क्योकि जो सिखानेवाला है उसे भी कोई पता नहीं। वह शिक्षक जो बच्चो के लिये धर्मशिक्षा के लिये नियुक्त किया गया है उसका भी आत्मा से कोई सबध नही। और यही सारी कठिनाई हो गई है।

शिक्षको को भी पुन शिक्षित होने की आवश्यकता है। लेकिन यदि वे मात्र विचार करें तो वे स्वय ही सम्यक् दिशा मे दीक्षित हो सकते हैं। वे स्वय ही अपने विवेक को जागृत कर सकते हैं। और जिन शिक्षको की ध्यान मे गति हो, वे छोटे छोटे बच्चो को ध्यान मे ले जा सकते हैं। ध्यान कठिन भी नही है। ध्यान अत्यत सरल प्रक्रिया है और एक बार उसकी छोटी सी भी झलक मिल जाये तो उसे छोडना कठिन है। एक बार थोडा सा आनन्द मिल जाये तो मनुष्य का मन ऐसा है कि वह अपने आप आनन्द की तरफ बहता है। मैं यहा बोल रहा हू और एक व्यक्ति पास मे वीणा बजाने लगे तो आपमे से बहुतो का मन उसकी तरफ अपने आप बह जायगा। क्योकि वीणा मे जो आनद की झलक है वह मन को अपने भीतर की ओर ले जाती है एक बार पता चल जाये कि भीतर एक आनन्द है, उसकी थोडी सी भी झलक तुम्हें मिल जाये तो तुम्हारा मन बार-बार वहीं लौट जाता है। दुनिया मे बहुत से कामो के बीच चौबीस घटे मे यदि दो चार बार भी मन भीतर प्रवेश कर जाये तो जीवन मे एक ताजगी होगी, एक आनन्द होगा, जो अद्भुत होगा। इस ताजगी और आनन्द का यह परिणाम होगा कि तुम्हारे भीतर क्रोध और वासनाए क्षीण होती चली जायेगी।

गुरुकुल के भीतर सर्वाधिक महत्वपूर्ण यह नहीं है कि बहुत बड़े मकान बनाये जाये, यह भी महत्वपूर्ण नही है कि वहा धर्म की शिक्षा दी जाये। यह भी महत्वपूर्ण नहीं है कि वहा खास ढग के कपड़े पहनाये जाये, खास तरह का खाना खिलाया जाये, खास समय पर उठा जाये, ये सब बातें बहुत महत्वपूर्ण नहीं हैं। यह जीवन का अत्यन्त क्षुद्र अनुशासन है। और इनमे ही यदि

विद्यार्थियों को बहुत अधिक बाध दिया जाये तो बाद मे वे ऊचा उठने मे असमर्थ हो जाते हैं। विवेकानन्द से किसी ने अमेरीका मे पूछा कि आपके देश मे धर्म की बहुत चर्चा है, लेकिन धार्मिक लोग तो दिखाई नहीं पड़ते? विवेकानन्द ने कहा कि मेरे देश मे दुर्भाग्य हो गया है, मेरे देश का सारा धर्म चौके और चूल्हे का धर्म हो गया है। इसलिए सब गड़बड़ हो गई है। हमारा मन चौके और चूल्हे मे उलझ गया है। हमारा सारा चिन्तन एक जगह केन्द्रित है क्या खाओ, क्या न खाओ, किस समय खाओ और किस समय न खाओ। यह सब अच्छी बाते हो सकती हैं लेकिन खतरा यह है कि तुम्हारा मन इन्ही सारी बातो मे उलझ जाये तो तुम इनसे ऊपर उठकर विराट शक्ति तक न पहुच पाओगे।

गुरुकुल मे जीवन की बहुत बुनियादी शिक्षा दी जानी चाहिये। मात्र आजीविका की शिक्षा पूरी शिक्षा नही है। तुम पाच-छ वर्षों तक यहा रहोगे इस बीच तुम किसी न किसी तरह आत्मा से सबधित होने के मार्ग को पा जाओ तो इसको मे जीवन की शिक्षा और साधना कहूगा। यही धर्म की साधना है। जीवन जीने की सम्यक् कला ही तो धर्म है। धर्म जीवन विरोधी नही है। और जो धर्म जीवन विरोधी हो उसे धर्म ही न जानना। वह जरूर मृत्यून्मुख रुग्ण मस्तिष्को की उपज होगा। ऐसी मृत्यून्मुखी शिक्षाओ ने ही जीवन मे धर्म का सबध तोड दिया है। फिर ऐसी शिक्षाओ को जबरदस्ती ही थोपना पडता है। क्योकि हमारे भीतर जो जीवन है, वह उनका विरोध करता है।

सम्यक् धर्म का तो जीवन मे सदा स्वागत है क्योकि वैसे धर्म के आधारो पर ही तो जीवन आनन्द को, सौन्दर्य को, सत्य को और अमृतत्व को उपलब्ध होता है। मिथ्या धर्म सदा ही नकारात्मक होता है। यही उसकी पहचान है। सम्यक् धर्म होता है सदा विधायक। मिथ्या धर्म आत्म-कलह मे डालता है। वह कहता है यह न करो, वह न करो। विधायक धर्म आत्म-सृजन मे सलग्न करता है। वह जीवन की सभी शक्तियो को ऊर्ध्वमुखी बनाता है। वह कहता है यह करो यह करो, यह करो। वह छोडने को नहीं, पाने को कहता है। उसका जोर सदा ऊपर उठने पर होता है। निश्चय ही जो ऊपर उठता है, उससे बहुत कुछ अपने आप छूटता जाता है। लेकिन बल पाने के लिए है, खोने के लिए नही। वह कहता है ससार को नही छोडना है बल्कि परमात्मा को पाना है।

इस सबध मे यह ध्यान रहे कि धर्म की साधना बच्चो पर थोपी न

जाये क्योंकि जो थोपा जाता है प्राण उसके प्रति विरोध से भर जाते हैं। छोटे छोटे बच्चों के प्राण भी विरोध से भर जाते हैं और फिर यह विरोध जीवन भर उनके साथ रहता है। मैं एक बार थोड़े दिनों के लिए एक संस्कृत महा-विद्यालय मे था। वहा के छात्रावास मे १०० के करीब विद्यार्थी थे। वे सभी विद्यार्थी शासन से छात्रवृत्ति पाते थे। छात्रवृत्ति के कारण उनसे कुछ भी करवाया जा सकता था। उन्हें तीन बजे रात्रि से उठकर स्नान करके प्रार्थना करनी पड़ती थी। सर्दियों के दिन थे। पहले ही दिन जब मैं स्नान करने कुए पर गया तो एकदम अंधकार था। मैंने देखा कि विद्यार्थी वहा स्नान भी करने जाते थे और प्रिन्सिपल से लेकर परमात्मा तक को गालिया भी देते जाते थे। यह स्वाभाविक ही था। उस गहरी सर्दी मे स्नान करने के लिए बाध्य करने मे प्रिन्सिपल का हाथ था, इसलिए वे पुरस्कार स्वरूप प्रिन्सिपल को गालिया देते थे और प्रिन्सिपल के सत्संग के कारण बेचारे परमात्मा को भी गालिया खानी पड़ती थीं।

धर्म के प्रति अरुचि पैदा करना बहुत आसान है। प्रश्न तो है रुचि पैदा करने का। और धार्मिक शिक्षा देनेवाले रुचि पैदा करने में अक्सर ही असफल होते हैं। शायद मनुष्य के मन के अत्यंत सीधेसादे नियमो पर भी हम ध्यान नहीं देते हैं, इसीलिए। उस महाविद्यालय मे जिस भाति प्रार्थना करवाई जा रही थी, उसमे प्रार्थना के साथ अच्छे भावो का संबंध होना असंभव है। प्रार्थना तो प्रेम और आनन्द से स्फुरित हो, तो ही सार्थक हो सकती है। इसलिए मेरा कहना है बच्चो के साथ जल्दबाजी न करना। भय से, दंड से, धर्म का संबंध न जोड़ना। ऐसी बाते उनके चित्त को सदा के लिए अधार्मिक बना देती हैं। मैंने उस महाविद्यालय के प्रिन्सिपल को यह कहा था तो वे मानने को राजी नही हुए थे, उल्टे उन्होने कहा हम कोई जबरदस्ती नही करते है। मैंने कहा एक सूचना निकालिये कि कल से जिसे स्वेच्छा से प्रार्थना मे आना हो वे ही आवे। सूचना निकाली गई। दूसरे दिन १०० मे से एक भी नही आया। तब वे हैरान हुए। मैंने कहा ऐसी प्रार्थना का क्या मूल्य है? फिर मैं उन बच्चो को सुबह ७ बजे लेकर प्रार्थना के लिये बैठता था। प्रार्थना क्या थी, बस हम मौन होकर बैठते और सुबह की चिड़ियो के गीत सुनते। प्रभातकालीन मौन मे बच्चो को आनन्द आने लगा। धीरे धीरे वे सभी बच्चे स्वेच्छा से सम्मिलित होने लगे। यदि किसी दिन कोई बच्चा न आ पाता तो दुखी होता, क्योकि सुबह की प्रार्थना का जो आनन्द था, उसकी कमी उसे दिन भर खलती। उस

छात्रावास में प्रार्थना एक आनन्द हो गई। व क्षण अमूल्य हो गये। उस आनन्द और शांति के लिए बच्चों के हृदय सहज ही परमात्मा के प्रति कृतज्ञता से भर जाते थे। और ये वे ही बच्चे थे जो पहले परमात्मा को गालियां देते थे।

गुरुकुल जैसे स्थानों में जबरदस्ती जरा भी नहीं होनी चाहिये। और धर्म के संबंध में तो जरा भी नहीं होनी चाहिये। इस बात से बहुत बड़ी हानि नहीं है कि बच्चा देर तक सोता रहा, लेकिन इस बात से हानि है कि बच्चा जबरदस्ती उठाया गया। देर से सोने में दुनिया में कोई हानि नहीं हुई। दुनिया में बहुत से महापुरुष देर से सोकर उठते रहे हैं। देर से उठने या जल्दी उठने का इतना महत्वपूर्ण मामला नहीं है। यह ठीक है कि कोई जल्दी उठे, सुखद है, स्वास्थ्यप्रद है, लेकिन इससे कोई बड़ी हानि नहीं होती है। लेकिन मैं यह कहना चाहता हूं कि बच्चों के साथ किसी भी प्रकार की हिंसा नहीं होनी चाहिये। शिक्षक और मां-बाप बच्चों के साथ बहुत प्रकार की हिंसा करते हैं, और उनको ख्याल नहीं होता कि वे हिंसा कर रहे हैं। वे समझते हैं कि बहुत प्रेम प्रकट कर रहे हैं। वे समझते हैं कि हम बच्चों को बड़ा सुधार रहे हैं। अगर इस ढंग से बच्चे सुधरे होते तो आज सारी दुनिया सुधर गई होती। दुनिया तो सुधरती नहीं और आप उन्हें सुधारे जा रहे हैं। आपके सुधार में जरूर गड़बड़ होगी। और अक्सर यह होता है कि जो मां-बाप बच्चों को सुधारने में लगे हैं, उनके बच्चे उतने बिगड़ते हैं, जितने दूसरे के नहीं बिगड़ते हैं।

अति-अनुशासन के घातक परिणाम होते हैं। अनुशासन की जगह बच्चों के विवेक को जगायें। उनमें स्वयं की विचारशक्ति को पैदा करें। यांत्रिक अनुशासन नहीं, चाहिये सजग विवेक। लेकिन यांत्रिक अनुशासन थोपना आसान है, इसलिए हम उसे ही चुन लेते हैं। नहीं मित्रो, चाहे विवेक जगाना कितना ही कठिन हो, और उसके लिए कितना ही श्रम और प्रतीक्षा करनी पड़े, तो भी यांत्रिक अनुशासन चुनना उचित नहीं है। मनुष्य की विकृति में यांत्रिक अनुशासन से अधिक और किसी चीज का हाथ नहीं है। यांत्रिक अनुशासन की प्रतिक्रिया स्वरूप ही उच्छृंखलता खड़ी होती है। क्या आज तक यही नहीं देखा गया कि जिनके मां-बाप बच्चों को सुधारने में लग जाते हैं, उसके विपरीत ही बच्चे खड़े हो जाते हैं? इसके पीछे कारण हैं। क्योंकि अच्छा करने के पीछे आप बच्चों के साथ हिंसा करने लगते हैं, क्योंकि आपके पास ताकत है—लेकिन बच्चा प्रतिहिंसा को इकट्ठी करता रहेगा और वह आज नहीं कल उसका बदला लेगा और बदला खतरनाक होगा। जब भी लड़के के हाथ में ताकत आयेगी वह

आपके विरोध में खडा हो जायेगा। और जो जो आपने सिखाया था, उसके उल्टा वह चलने लगेगा। दुनिया में इतनी अनैतिकता है, दुनिया मे इतनी अनुशासनहीनता है, लडके आज्ञा तोड रहे हैं लडके मा-बाप की मर्यादाए नष्ट कर रहे हैं। इसमे मा-बाप और शिक्षको का ही हाथ है। सारी मर्यादाए जबरदस्ती थोपी जा रही हैं और उनके विरोध मे प्रतिक्रिया खडी होती है।

इन बच्चो के साथ आपकी बहुत बडी कृपा यह होगी कि इन बच्चो के साथ किसी भी तरह हिंसा का वातावरण गुरुकुल मे न हो। इन पर किसी भी प्रकार का दबाव, इन पर किसी भी प्रकार का बलपूर्वक अनुशासन न हो। अच्छे करने के लिए भी नहीं, क्योंकि दुनिया मे जबरदस्ती से कोई कभी अच्छा हुआ ही नही है। आप कहेंगे कि फिर तो स्वच्छन्दता हो जायेगी, फिर इन बच्चो का क्या होगा ? तो मै यह निवेदन करू कि बच्चे प्रेम से बदलते हैं, जबरदस्ती से नही। जितना ज्यादा से ज्यादा प्रेम दिया जा सके, उतना वे अनुगृहीत होते हैं। जितनी स्वतंत्रता दी जा सके, उतना वे आदर से भरते है। जितना बच्चो को ज्यादा से ज्यादा प्रोत्साहन दिया जा सके, मुक्त किया जा सके, उतना ही उनके मन मे सदिच्छा पैदा होती है और वे मानने को तैयार होते हैं। बच्चो को जितना ज्यादा दबाया जाये उतना ही विरोध पैदा होता है।

फ्रायड का नाम आपने सुना होगा। वह बहुत बडा मनोवैज्ञानिक हो गया है। एक दिन वह, उसकी पत्नी और उसका बच्चा बगीचे मे घूमने गये। जब रात हो गई और वे घर को लौटने लगे तो बच्चा दिखाई नही दिया। पत्नी घबडा गई और बोली "अब बच्चे को कहा खोजें ?" क्या आप सोच सकते हैं कि फ्रायड ने क्या पूछा ? उसने पूछा तुमने बच्चे को कहीं जाने के लिये मना तो नही किया था ?" पत्नी ने कहा बडे फुहारे पर जाने के लिये मना किया था। फ्रायड बोला तो चलें, वहीं चल कर देख लें। वह वहा फव्वारे पर पैर लटकाये बैठा हुआ था। उसकी पत्नी बोली कि आपने कैसे पहचान लिया कि बच्चा बडे फव्वारे पर ही गया होगा ? फ्रायड ने कहा कि पूरी मनुष्य जाति का अनुभव यही है। जिन बातो के लिये मा-बापो ने मना किया, बच्चे वही गये। इसलिये मना करनेवाले मा-बाप जिम्मेवार हैं। उनकी मनाही मे जिम्मा है।

बच्चे वहा जायेंगे जहा मना किया गया है। मना करते वक्त जरा सोच समझ कर ही मना करना। क्योंकि हम जिस बात को कह रहे हैं मत करो, वह करने की प्रेरणा बन रही है। बच्चे के मन मे यह बात बल पकड

रही है कि वहां कुछ होगा, कुछ रहस्यपूर्ण, जानने जैसा और कुछ करने जैसा। आप उसके भीतर खोज को जगा रहे हैं। भीतर जिज्ञासा को जगा रहे हैं। दुनिया मे जो पतन हुआ है, वह 'मत करो' की शिक्षा के कारण ही हुआ है। अभी भी धर्म-गुरु, सन्यासी यह कहते हैं कि 'यह मत करो', 'वह मत करो,' इन सब बातो का परिणाम यह हो रहा है कि पतन रोज करीब आता जा रहा है। मनुष्य नीचे गिरता जा रहा है।

'मत करो' कि शिक्षा से विषाक्त और जहरीली शिक्षा न कोई है, न हो सकती है। इसलिए इन बच्चो को 'मत करो' की शिक्षा देना ही नहीं। इन बच्चो को यह सिखाना कि कुछ चीजे करने जैसी है। यह मत सिखाओ कि कौनसी चीजे न करने जैसी है। नकारात्मक नही, विधायक शिक्षा होनी चाहिये। दुनिया मे कौन सी चीजे करने जैसी हैं और उन चीजो मे कौन सा आनन्द है, उस आनन्द की ओर इन्हे प्रेरित करे। बच्चो से यदि यह कहे कि मास मत खाना तो वह मास अवश्य ही खायेगे। उन्हे यह कहा जाये कि शराब मत पीना तो वे आज नही कल शराब जरूर पियेगे। इसमे कसूर होगा उन लोगो का जो इन्हे समझा रहे है, सिखा रहे हैं। उनको क्या सिखाया जाय फिर ?

बच्चो को कुछ करने के लिए बताया जाये, न करने के लिये नही। जीवन के सृजनात्मक द्वार उनके लिए खोले जावे। निषेध नही, विधेय ही शिक्षा का लक्ष्य हो। उन्हे सृजनात्मक आनन्द की ओर उन्मुख किया जाये। फिर तो वे दुख से और अशाति से स्वय ही दूर रहेगे। उन्हे प्रकाश के लिए दीक्षित किया जाये फिर तो अधकार उन्हे खुद ही प्रीतिकर न रहेगा। और हम करते हैं उल्टा ही। प्रकाश की दीक्षा तो नहीं देते, हा अधकार से बचने की शिक्षा जरूर देते हैं।

एक बार एक मित्र मेरे पास आये। उन्होने आकर कहा कि मै बहुत दिनो से आपके पास आना चाहता था, लेकिन नही आया कि आपके पास आऊगा तो आप मास और शराब छोडने के लिए कहेगे। ये दोनो काम मै करता हू। मैने कहा कि जिन्दगी मे मैने तो कभी नही कहा कि 'यह छोडो, यह मत करो' वे बोले कि यह जैसे ही ज्ञात हुआ मै आपके पास आ गया हू। उन्होने कहा, मेरा मन बडा अशान्त है। मैने उनसे ध्यान करने के लिये कहा। मन कैसे शात हो, इसके बारे मे कहा। उन्होने कहा कि इसके लिए मास और शराब पीना छोडना तो जरूरी नही है ? मैने कहा बिल्कुल नही। तीन माह बाद वापिस लौटे, तो कहने लगे कि जैसे जैसे मन शात होता गया, शराब पीना

मुश्किल हो गया। शात मन का व्यक्ति शराब नही पी सकता। छोडनी ही पडती है। पीने का कारण ही नहीं रह जाता। अशात मन भूलना चाहता है अपने को, इसलिए शराब पीता है, सिनेमा देखता है, गाना सुनता है। यह सब भूलने की तरकीबें है। अगर भूलने की तरकीबे छीन ली जाये तो वह पागल हो जायेगा। मन अगर शात है तो भुलाने के लिये उपाय करने की जरूरत ही नही है। उन्होने मुझसे कहा शराब तो गई, क्या मासाहार भी छोडना पडेगा ? मैंने कहा मुझको पता नहीं। अभी भी आपकी मर्जी हो तो ध्यान छोड दे। उन्होने कहा अब ध्यान छोडना कठिन है। क्योकि भीतर मुझे आनद झरता हुआ मालूम होता है। वे तीन माह बाद वापिस लौटे और कहने लगे कि मास खाना भी कठिन हो गया है। कल एक मित्र के साथ पार्टी मे गया था। पार्टी मे मास खाने का आग्रह हुआ। मुझे विश्वास ही नहीं हुआ कि मैंने पहले मास कैसे खाया होगा। और मुझे ग्लानि होने लगी। घर लौटते ही मुझे कै हो गई।

यह निश्चित है कि मन जब शात होगा तो दूसरे को दुख देना असभव हो जाता है। मन जब अशात होता है, तो दूसरो को दुख देने मे मजा आता है। यह सब भीतर अशांति के कारण होता है। तो बच्चो को विधायक रूप से शात होने का उपाय समझाइये। उन्हें जीवन मे शात होने की प्रक्रिया दें। शात चित्त ही समग्र बुराइयो और पापो के प्रति एकमात्र सुरक्षा है। इसके लिए एक ही उपाय है कि नकारात्मक शिक्षा को क्षीण करें। बच्चो के जीवन मे आनन्द जगाये। और जहा आनन्द है, जहा शाति है, जहा बच्चो के भीतर विवेक है, वहा बच्चो का बुरे काम करने की कोई गुजाइश नही रह जाती। लेकिन हम सिखाते है बुरे काम मत करो। हम गल्त ही बात सिखाते है। और जब आदमी को गल्त बातें करता देखते हैं तो जमाने को दोष देते हैं। कोई जमाने की खराबी नही है। क्योकि हमारे दृष्टिकोण, हमारे आधार सबके सब गल्त हैं। ये ही बच्चे अद्भुत रूप से शात, अद्भुत रूप से मानवी गुणो को उपलब्ध हो सकते है। क्योकि आज हम जो भी कर रहे है गल्त है, परिणाम भी गल्त निकल रहे हैं।

विधायक रूप से बच्चो के जीवन मे कुछ करने की चेष्टा की जाये तो यह गुरुकुल है, वरना गुरुकुल नाम ही रह जाता है। जैसे और स्कूल हैं, वैसे ही यह भी स्कूल है। हो सकता है, आप इस पर चिन्तन करेंगे, विचार करेंगे, कुछ रास्ता खोजेगे तो बच्चो को तेजस्वी जीवन दिया जा सकता है

कि सारे देश मे गुरुकुल के बच्चे अलग से दिखाई पड़ें। गुरुकुल के बच्चे यहा की खबर ले जावें, यहा की हवा ले जावें, यहा की सुगन्ध ले जावें और जहा जावें वहा यह स्पष्ट प्रतीति हो कि इन्होने जीवन दृष्टि और तरह की पाई है, इन्होने और तरह का व्यक्तित्व पाया है।

इससे कोई फर्क नही पड़ता कि आप मे से दो चार डाक्टर हो जायेंगे। बहुत डाक्टर हैं--दुनिया मे, उससे क्या फर्क पड़ने वाला है। तुममे से दो-चार इजीनियर हो जावेंगे, दो चार योरोप चले जायेंगे। इससे क्या फर्क पड़ने वाला है ? लौटकर आयेंगे तो और शोषण करेंगे, और उपद्रव करेंगे, समाज का और पैसा छीनेंगे और कुछ नही करेंगे। यह कोई मूल्य की बात नही कि हमारे गुरुकुल से इतने डाक्टर हो गये, इतने इजीनियर हो गये, इतने मिनिस्टर हो गये। क्या मिनिस्टर होना बहुत अच्छी बात है ? रोज मिनिस्टरो को देखते हो और फिर भी ऐसा सोचते हो तो अंधे हो। राजनीतिज्ञो के कारण ही तो मनुष्यता सकट मे है। राजनीतिज्ञो के कारण ही दुनिया युद्धो मे है। सो इस बात का बिल्कुल गौरव मत मानना कि तुम्हारे गुरुकुल से कोई बड़ा राजनीतिज्ञ पैदा हो गया है। इससे तो शर्मिंदा ही होना है। डाक्टर और इजीनियर तो फिर भी ठीक हैं, यह मिनिस्टर तो बिल्कुल भी ठीक नहीं है। मै तो चाहूगा कि तुम इतने अच्छे आदमी बनना कि तुम मे से कोई भी मिनिस्टर न होना चाहे।

महत्वाकाक्षा तो रोग है और वह केवल उनमे ही जड पकड़ता है जो कि स्वय मे हीन-ग्रंथि मे पीडित होते है। महत्वाकाक्षा भी विक्षिप्तता का एक प्रकार है। स्वस्थ चित्त व्यक्ति महत्वाकाक्षी नहीं होता है। शिक्षा सम्यक् हो तो जीवन मे महत्वाकाक्षा का कोई स्थान न होना चाहिये। जिओ—गहरा से गहरा जीवन जिओ। लेकिन पद और यश के लिए जो जीता है, वह तो गहरा कभी भी नही जी पाता है। वह तो अत्यत उथले मे जीता है। उसका कोई जीवन थोड़े ही है। वह तो महत्वाकाक्षा से खीचा जाता है। जीवन उसका एक शांति और आनन्द नहीं बल्कि एक तनाव और पीड़ा है। इसलिए कितने महत्वाकाक्षी पागल पैदा किये गये, इससे गुरुकुल की प्रतिष्ठा बढ़ने वाली नही है। यह एक धर्म प्रतिष्ठान है, इसके लिये कोई और गौरव निर्मित करें। यह एक आदर की बात होगी कि गुरुकुल से निकला हुआ विद्यार्थी महत्वाकाक्षी न हो, पदाकाक्षी न हो, धनाकाक्षी न हो तो हम कह सकते हैं कि हमारे गुरुकुल से निकला विद्यार्थी विक्षिप्त नहीं है, स्वस्थ चित्त है।

बच्चो को महत्वाकाक्षा नहीं, प्रेम सिखाइये । बच्चो को प्रथम आने की दौड मे मत लगाइये । बच्चो को अतिम खडा होने की सामर्थ्य और बल सिखाइये। क्राइस्ट ने कहा है 'धन्य हैं वे लोग जो अतिम खडा होने मे समर्थ हैं।' उन लोगो को धन्य नही कहा जो प्रथम खडे हो जाते हैं। क्राइस्ट ने उन लोगो को धन्य कहा है जो अतिम खडे होने मे समर्थ हैं। गुरुकुल तो वह होगी कि बच्चे को हम यह सिखायें कि वह सब भाति के पागलपनो मे दूर पीछे खडे रहने मे समर्थ हो । वह प्रेम मे इतना आगे हो कि प्रतिस्पर्धा मे पीछे खडा हो सके । लेकिन हम तो प्रतिस्पर्धा सिखाते हैं, प्रेम नही, और तब यदि हमारी सभ्यता रोज युद्धो मे पड जाती हो तो आश्चर्य नही । शायद हम सोचते हैं कि बिना स्पर्धा के तो कुछ सिखाया ही नही जा सकता है, लेकिन यह भूल है। स्पर्धा का ज्वर पैदा करके जो भी सिखाया जाता है, वह सब घातक है, क्योकि फिर वह ज्वर जीवन भर नहीं उतरता है । सहयोगियो से स्पर्द्धा नही, वरन् जो सिखाया जा रहा है, उसके प्रति प्रेम और आनन्द पैदा करें। सगीत साथियो से स्पर्धा मे भी सीखा जा सकता है और सगीत के प्रेम मे भी। ऐसे ही गणित भी और ऐसे ही शेष सब कुछ । निश्चय ही सगीत के प्रेम मे भी एक स्पर्धा होगी, लेकिन वह स्वय से ही होगी । वह होगी स्वय को ही निरतर अतिक्रमण करने की। मै जहा आज हू वहा कल मै न रहू । मै जहा कल था, वही आज भी न ठहरा रहू । ऐसी आत्मस्पर्धा शुभ है । लेकिन दूसरो से जो प्रतियोगिता है वह जीवन को बहुत दुखो और तनावो मे ले जाती है, क्योकि उस सारी दौड का केन्द्र अहकार है और अहकार नरक का मार्ग है।

लेकिन अभी तो सभी भाति परोक्ष अपरोक्ष अहकार ही सिखाया जाता है। वह देखो—दीवाल पर क्या लिखा है ? लिखा है राजा तो केवल अपने ही देश मे लेकिन विद्वान सर्वत्र पुजता है । इसका क्या अर्थ है, क्या प्रयोजन है ? निश्चय ही एक ही अभिप्राय है कि विद्वान बनो । लेकिन क्या पुजने की, पूजा पाने की इच्छा कोई शुभेच्छा है ? इस भाति त्याग की शिक्षा भी दी जाती है। त्यागी बनो क्योंकि त्यागी पुजता है । लेकिन जो पूजना चाहता है क्या वह ज्ञानी या त्यागी हो सकता है ? पूजा पाने की इच्छा तो अत्यत गहरे अज्ञान और मूढ़ता से उत्पन्न होती है । वह तो निपट अहकार है । और अहकार से बडा न दुख है न दारिद्र्य है, न दुर्भाग्य है।

सम्यक् शिक्षा अहकार से मुक्तदायी होनी चाहिये। क्या यह गुरुकुल ऐसे बच्चे पैदा नही करेगा जो निरहकारी हो ? यह एक बात ही हो सके तो

जीवन मे क्राति हो जाती है। क्या हम ऐसे बच्चे तैयार नहीं कर सकते हैं जो सरल हो, सहज हो और जिन्हें जीवन मे—दैनन्दिन जीवन मे आनन्द हो ? परमात्मा के सौन्दर्य को जानने मे उसके सगीत को अनुभव करने मे केवल वे ही सफल हो सकते हैं जो कि सहज और सरल हैं।

मै बहुत आशाओं से भरा हुआ आपसे विदा लेता हू। मनुष्य तो अनगढ़ पत्थरो की भाति है। मै अभी यहा की गुफाओ से लौटा हू। उन पत्थरो को सृष्टा कारीगर मिल गये इसलिए वे साधारण से पाषाण प्रतिमाए बनकर अप्रतिम सौन्दर्य को उपलब्ध हो गये हैं। प्यारे बच्चो, तुम्हारा जीवन भी ऐसे ही सौंदर्य को प्राप्त कर सकता है। लेकिन तुम्हें अपना सृष्टा बनना होगा। निश्चय ही तुम्हारे शिक्षक, तुम्हारा गुरुकुल, तुम्हारे मा-बाप इसमे बहुत सहयोगी हो सकते हैं, लेकिन फिर भी अतिम जिम्मेवारी तो तुम पर ही है।

मनुष्य के निर्माण मे वह स्वय ही पत्थर है और स्वय ही कारीगर और स्वय ही वे उपकरण, जिनसे कि एक पाषाण प्रतिमा मे परिवर्तित होता है।

तीन : आनंद लोक की सम्यक् दिशा

आनंद खोज की सम्यक् दिशा

अनेक लोगो के मन मे यह प्रश्न उठता है कि जीवन मे सत्य को पाने की क्या जरूरत है ? जीवन इतना छोटा है उसमे सत्य को पाने का श्रम क्यो उठाया जाये ? जब सिनेमा देखकर और सगीत सुनकर ही आनद उपलब्ध हो सकता है, तो जीवन को ऐसे ही बिता देने मे क्या भूल है ?

यह प्रश्न इसलिए उठता है, क्योकि हमे शायद लगता है कि सत्य और आनद अलग अलग हैं। लेकिन नही, सत्य और आनद दो बातें नही हैं। जीवन मे सत्य उपलब्ध हो तो ही आनद उपलब्ध होता है। परमात्मा उपलब्ध हो तो ही आनद उपलब्ध होता है।। आनद, सत्य या परमात्मा एक ही बात को व्यक्त करने के अलग अलग तरीके हैं। तब इस भाति न सोचे कि सत्य की क्या जरूरत है ? सोचें इस भाति कि आनद की क्या जरूरत है ? और आनद की जरूरत तो सभी को मालूम पडती है उन्हें भी जिनके मन मे इस तरह के प्रश्न उठते हैं। सगीत और सिनेमा मे जिन्हे आनद दिखाई पडता है उन्हें यह बात समझ लेना जरूरी है कि मात्र दु ख को भूल जाना ही आनद नहीं है। सिनेमा, सगीत या इस तरह की और सारी व्यवस्थायें केवल दुख को भुलाती हैं, आनद को देती नही। शराब भी दु ख को भुला देती है, सगीत भी, सिनेमा भी, सेक्स भी। इस तरह दुख को भूल जाना एक बात है और आनद को उपलब्ध कर लेना बिल्कुल ही दूसरी बात है।

एक आदमी दरिद्र है और वह अपनी दरिद्रता को भूल जाए यह एक बात है, और वह समृद्ध हो जाए यह बिल्कुल ही दूसरी बात है। दुख को भूल जाने से सुख का भान पैदा होता है। सुख केवल दुख का विस्मरण (Forget-fulness) मात्र है। और आनद ? आनद बात ही अलग है, वह किसी चीज का विस्मरण नहीं, स्मरण है। वह किसी बीज की उपलब्धि है, विधायक उपलब्धि। आनद विधायक (Positive) है, सुख नकारात्मक (Negative) है।

एक आदमी दुखी है। इस दुख को हटाने के दो उपाय हैं। एक उपाय तो यह है कि वह जाये और सगीत सुने या किसी और चीज मे इस भाति डूब जाए कि दुख की उसे याद ही न रहे। सगीत मे इतना तन्मय हो जाए कि उसका चित्त दूसरी तरफ जाना बद कर दे, तो उतनी देर को उसे दुख भूला रहेगा

लेकिन इससे दुख मिटता नही है। सगीत से जैसे ही चित्त वापस लौटेगा, दुख अपनी पूरी ताकत से पुन खडा हो जायेगा। जितनी देर वह सगीत मे अपने को भूला था, उतनी देर भीतर दुख सरक रहा था, सगृहीत हो रहा था। जैसे ही सगीत से मन हटेगा दुख अपने दुगुने वेग से सामने खडा हो जायेगा। अब उसे पुन विस्मृत करने के लिए किसी ज्यादा गहरे भुलावे की जरूरत पडेगी। तो फिर शराब है, और दूसरे रास्ते हैं जिनसे चित्त को बेहोश किया जा सकता है। लेकिन स्मरण रहे यह बेहोशी आनद नहीं है। बल्कि सचाई तो यह है कि जो आदमी जितना ज्यादा दुखी होता है उतना ही स्वय को भूलने का रास्ता खोजता है। दुख से ही यह पलायन निकलता है। दुख से ही कही डूब जाने की, भागने की और मूर्छित हो जाने की आकाक्षा पैदा होती है।

दुख से ही लोग भागते हैं। सुख से तो कोई भागता नही। तो अगर आप यह कहते हैं कि जब मै सिनेमा मे बैठता हू तो बहुत सुख मिलता है तो स्वभावत ही प्रश्न उठता है कि जब आप सिनेमा मे नही होते तब क्या मिलता होगा? तब निश्चित ही दुख मिलता होगा। यह इस बात की ही घोषणा है कि आप दुखी हैं। लेकिन सिनेमा मे बैठकर दुख मिट कैसे जायगा? दुख की धारा तो भीतर सरकती रहेगी। हा, जितने ज्यादा आप दुखी होगे सिनेमा मे उतना ही ज्यादा सुख अनुभव होगा। जो सच मे आनदित है उसे तो शायद कोई सुख प्रतीत नही होगा। और ये जो हमारी दृष्टि है कि इसी तरह हम अपना पूरा जीवन क्यो न बिता दें-- मूर्छित होकर, भूल कर, तब तो उचित है कि एक आदमी जीवन भर सोया रहे सिनेमा की भी क्या जरूरत है? और अगर जीवन भर सोना कठिन है तो फिर जीने की भी क्या जरूरत है? मर जाये और कब्र मे सो जाये तो सारे दुख भूल जायेगे। इसी प्रवृत्ति से आत्मघात की भावना पैदा होती है। सिनेमा देखने वाला, शराब पीने वाला और सगीत मे डूबने वाला आदमी अगर अपने तर्क की अतिम सीमा पर पहुच जाये तो वह कहेगा जीने की जरूरत क्या है? जीने मे दुख है तो मै मरा जाता हू। यह सब आत्मघाती (Suicidal) प्रवृत्तिया है। जब भी हम जीवन को भूलना चाहते हैं तभी हम आत्मघाती हो जाते हैं। लेकिन जीवन का आनद उसे भूलने मे नही उसकी परिपूर्णता मे उसे जान लेने मे है।

एक बहुत बडा सगीतज्ञ हुआ। उसकी अनोखी शर्ते हुआ करती थी। एक राजमहल में वह अपना सगीत सुनाने को गया। उसने कहा कि मै एक ही शर्त पर अपनी वीणा बजाऊगा कि सुनने वालो मे से किसी का भी सिर न

हिले। और अगर कोई सिर हिला तो मै वीणा बजाना बद कर दूगा। वह राजा भी अपनी ही तरह का था। उसने कहा वीणा रोकने की कोई जरूरत नही। हमारे आदमी तैनात रहेंगे और जो सिर हिलेगा वे उस सिर को ही काट कर अलग कर देंगे।

सध्या सारे नगर में यह सूचना करवा दी गई कि जो लोग सुनने आये थोडा समझ कर आयें, अगर सगीत सुनते वक्त कोई सिर हिला तो वह अलग करवा दिया जायेगा। लाखो लोग सगीत सुनने को उत्सुक थे। उतना बडा सगीतज्ञ गाव मे आया था। सबको अपने दुख को भूलने का एक सुअवसर मिला था। कौन उसे चूकना चाहता ? लेकिन इतनी दूर तक सुख लेने को कोई भी राजी न था। गर्दन कटवाने के मूल्य पर सगीत सुनने को कौन राजी होता ? भूल से गर्दन हिल भी सकती थी। और हो सकता है सिर सगीत के लिये न हिला हो मक्खी बैठ गई हो और गर्दन हिल गई हो या हो सकता है किसी और कारण मे हिल गई हो। लोग जानते थे कि राजा पागल है और फिर बाद मे इस बात की कोई सुनवाई न होगी कि गर्दन किसलिये हिली थी। बस गर्दन का हिलना ही काफी हो जायेगा। इसके बावजूद भी उस रात्रि कोई दो तीन सौ लोग सगीत सुनने आये। वे लोग जो जीवन खोने के मूल्य पर भी सुख चाहते थे वहा आये। वीणा बजी। कोई घटे भर तक लोग ऐसे बैठे रहे जैसे मूर्तिया हो। लोगो ने जैसे डर के कारण सास भी न ली हो। दरवाजे बद करवा दिये गये थे ताकि कोई भाग न जाये। नगी तलवारें लिये हुये सैनिक खडे थे किसी की भी गर्दन एक क्षण मे अलग की जा सकती थी।

घटा बीता, दो घटे बीते, आधी रात होने के करीब आ गई। फिर राजा हैरान हुआ उसके सिपाही भी हैरान हुये जो कि नगी तलवारे लिये हुये खडे थे। उन्होने देखा दस-पन्द्रह सिर धीरे धीरे हिलने लगे। सख्या और बढी। रात पूरी होते होते कोई चालीस-पचास सिर हिलने लगे थे। वे पचास लोग पकड लिये गये। राजा ने उस सगीतज्ञ को कहा "इनकी गर्दन अलग करवा दें ?" उस सगीतज्ञ ने कहा "नहीं। मैने वह शर्त बहुत और अर्थों मे रखी थी। अब यही वे लोग हैं जो मेरे सगीत को सुनने के सच्चे अधिकारी हैं। कल सिर्फ ये ही लोग सगीत सुनने आ सकेंगे।"

राजा ने उन लोगो से कहा "ठीक है कि सगीतज्ञ की शर्त का यह अर्थ रहा हो, लेकिन तुम्हे तो यह पता न था ! पागलो ! तुमने गर्दन क्यो हिलाई ?" उन आदमियो ने कहा "हमने गर्दन नही हिलाई, गर्दन हिल गई

होगी। क्योकि जब तक हम मौजूद थे गर्दन नही हिली, लेकिन जब हम गैरमौजूद हो गये फिर हमे कोई पता नहीं। जब तक हम सजग थे, जब तक हमे होश था, हम गर्दन सभाले रहे। फिर एक घडी ऐसी आ गई जब मे कोई होश नहीं रहा। हम सगीत मे इतने डूब गये कि लगभग बेहोश ही हो गये। उस बीच फिर गर्दन हिली हो तो हमे कोई पता नहीं है। तो अब भला आप हमारी गर्दन कटवा ले लेकिन कसूरवार हम नही है। क्योकि हम मौजूद ही नही थे। हम बेहोश थे। अपने होश मे हमने गर्दन नही हिलाई।'

क्या इतनी बेहोशी सगीत से पैदा हो सकती है ?

जरूर हो सकती है। मनुष्य के जीवन मे बेहोशी के बहुत रास्ते हैं। जितनी इन्द्रिया हैं उतने ही बेहोश होने के रास्ते भी हैं। प्रत्येक इन्द्रिय का बेहोश होने का अपना रास्ता है। कान पर ध्वनियो के द्वारा बेहोशी लाई जा सकती है। अगर इस तरह के स्वर और इस तरह की ध्वनिया कान फेंकी जाये कि कान मे जो सचेतना है वह सो जाये, शिथिल हो जाये—तो धीरे धीरे कान तो बेहोश होगा ही उसके साथ ही पूरा चित्त भी सो जायेगा, क्योकि इस हालत मे कान के पास ही सारा मन एकाग्र और इकट्ठा हो जायेगा और जैसे ही कान मे शिथिलता आयेगी उसके साथ ही पूरा चित्त भी शिथिल होकर बेहोश हो जायगा। इसी तरह आखे बेहोश करवा सकती है। सौन्दय को देखकर आखे बेहोश हो सकती है। और आखें बेहोश हो जाये तो पीछे से पूरा चित्त बेहोश हो सकता है।

इस भाति अगर हम बेहोश हो जाये तो होश मे लौटने पर लगेगा कि कितना अच्छा हुआ ! क्योकि इस बीच किसी भी दुख का कोई पता न था, कोई चिंता न थी, कोई पीडा न थी, कोई कष्ट न था और कोई समस्या न थी। नही थी इसलिये क्योकि आप ही नही थे। आप होते तो ये सारी चीजे होती। आप गैरमौजूद थे इसलिये कोई चिन्ता न थी, कोई दुख न था कोई समस्या न थी। दुख तो था लेकिन उसे जानने के लिये जो होश चाहिये वह खो गया था। इसलिये उसका कोई पता नही चलता था। इसे, जो लोग आनद समझ लेते है, वे भूल मे पड जाते है। उनका जीवन बिना आनद को जाने एक बेहोशी मे ही बीत जाता है और आनद से वे सदा के लिये अपरिचित ही र जाते है।

इसीलिये मै कहता हू कि सत्य की खोज की जरूरत है, क्योकि उसके बिना आनद की कोई उपलब्धि न किसी को हुई है और न हो सकती है। अब

अगर कोई यही पूछने लगे कि आनद की खोज की क्या जरूरत है तो थोडी कठिनाई हो जायेगी । हालांकि अब तक किसी आदमी ने वस्तुत ऐसा प्रश्न पूछा नही है । दस हजार बर्षों मे आदमी ने बहुत प्रश्न पूछे हैं, लेकिन किसी आदमी ने यह नही पूछा कि आनद की खोज की जरूरत क्या है ? क्योकि इस बात को पूछने का अर्थ यह होगा कि हम दुख से तृप्त है। लेकिन दुख से तो कोई भी तृप्त नही है। अगर दुख से ही तृप्त होते तो फिर आप सिनेमा भी क्यो जाते ? सगीत भी क्यो सुनते ? वह आनद की ही खोज चल रही है, लेकिन गल्त दिशा मे। गल्त दिशा मे इसलिये क्योकि दुख को भूलने से आनद उपलब्ध नही होता । हा, आनद उपलब्ध हो जाये तो दुख जरूर विलीन हो जाता है । अधेरे को भूलने से प्रकाश उपलब्ध नही होता। कमरे मे अधकार हो और मे आख बद करके बैठ जाऊ और भूल जाऊ अधेरे को, तो भी कमरा अधेरा ही रहगा। लेकिन हा, दिया मे जला लू तो अधेरा जरूर विलीन हो जायगा ।

एक बात तय है कि हम जो हैं, जैसे हैं, वैसे होने से हम तृप्त नहीं है। इसीलिये खोज की जरूरत है । जो तृप्त है उसे खोज की कोई भी जरूरत नही है। हम जो है उससे तृप्त नही हैं। हम जहा हैं वहा से तृप्त नही है। भीतर एक बेचैनी है, एक पीडा है, जो निरन्तर कहे जा रही है कि कुछ गल्त है, कुछ गडबड है। वही बेचैनी कहती है—खोजो ! उसे फिर सत्य नाम दो, चाहे और कोई नाम दो उससे भेद नहीं पडता। सगीत मे और सिनेमा मे भी उसकी ही खोज चल रही है। लेकिन वह दिशा गलत और भ्रान्त है। जब कोई आत्मा की दिशा मे खोज करता है, तब ठीक और सम्यक् दिशा मे उसकी खोज शुरू होती है। क्योकि दुख को भूलने से आज तक कोई आनद को उपलब्ध नही हुआ है, लेकिन आत्मा को जान लेने से व्यक्ति जरूर आनद को उपलब्ध हो जाता है। जिन्होने उस सत्य की थोडी भी झलक पा ली है उनके पूरे जीवन मे एक क्राति हो जाती है । उनका सारा जीवन आनद और मगल की वर्षा बन जाता है । फिर वे बाहर सगीत मे भूलने नहीं जाते क्योकि उनके हृदय की वीणा पर स्वय एक सगीत बजने लगता है। फिर वे बाहर सुख की खोज मे नही भटकते है, क्योकि उनके भीतर एक आनद का झरना फूट जाता है।

जो भीतर दुखी है, वह बाहर सुख को खोजता है, लेकिन जो भीतर दुखी है वह बाहर सुख को कैसे पा सकेगा ? जो भीतर आनन्द से भर जाता है,

उसकी बाहर सुख की खोज जरूर बद हो जाती है, क्योकि जिसे वह खोजता था वह तो उसे स्वय के भीतर ही उपलब्ध हो गया है।

एक भिखारी एक बडी महानगरी में मरा। वह एक ही जगह पर बैठ भीख मागता रहा। जिंदगी भर वही बैठकर एक एक पैसे के लिये गिड-गिडाया। वही जिया और वहीं मरा भी। उसके मर जाने पर उसकी लाश को म्युनिसिपल कर्मचारी घसीटकर मरघट ले गये। उसके कपडे चिथडो मे आग लगा दी गई। लोगो ने सोचा—तीस साल तक उस भिखारी ने इस जमीन को खराब और अपवित्र किया है, क्यो न इस भूमि की थोडी सी मिट्टी को खुदवा कर फेंक दिया जाये? मिट्टी जब बदली गई तो वे हैरान रह गये। जहा वह भिखारी बैठा करता था वही एक बडा खजाना गडा मिला। वह उसी भूमि पर बैठकर, उसी खजाने के ऊपर बैठकर, तीस वर्षों तक एक-एक पैसे के लिये भीख मागता रहा। उसे कोई कल्पना भी न थी कि जिस भूमि पर वह बैठता है वहा कोई खजाना भी हो सकता है।

यह किसी एक भिखारी की कहानी नही है, यह हर आदमी की कहानी है। हर आदमी जहा बैठा है, जहा एक-एक पैसे के सुख के लिये गिडगिडा रहा है, माग रहा है और हाथ फैला रहा है, उसी जमीन मे, उसके ही नीचे बहुत बडे आनद के खजाने गडे हुये हैं। यह उसकी मर्जी है कि वह उन्हे खोजता है या नही, कोई उसे मजबूर नही कर सकता है।

अगर उस भिखमगे को जाकर मैने कहा होता—'मित्र, गडे हुय खजाने की खोज करो।' और वह मुझसे कहता "—क्या जरूरत है मुझे गडे हुये खजाने की खोज की? भीख माग लेता हू और मजे से जीता हू। मैं क्यो खोजू? मै तो ऐसे ही जिंदगी बिता दूगा।"

तो मै उससे क्या कहता? कहता कि ठीक है मागो भीख! लेकिन जो भीख माग रहा है वह कहे कि मुझे खजाने की कोई जरूरत नहीं है तो वह पागल है। अगर जरूरत नही है तो भीख क्यो माग रहा है?

सिनेमा और सगीत मे सुख खोज रहा है और कहे कि आनद की खोज की मुझे क्या जरूरत है? तो वह पागल है, नही तो फिर सिनेमा मे, सगीत मे, शराब मे और सेक्स मे किस की भीख माग रहा है? किसको खोज रहा है?

हम भीख मागने वाले लोग हैं और जब कोई हमे खजाने की खबर देता है तो हमे विश्वास नही आता क्योंकि जो एक-एक पैसे की भीख मागता रहा है उसे विश्वास ही नही हो सकता कि खजाना भी हो सकता है। भीख मागने

वाला मन खजाने पर विश्वास नही कर पाता । उसे खजाना मिल भी जाये तो वह यही सोचेगा कि कहीं मैं सपना तो नही देख रहा हू ? उसे यह विश्वास ही नही आता है कि मै भीख मागने वाला और मुझे खजाना भी मिल सकता है ! इसी बात को भुलाने के लिये वह कहना शुरू करता है कि जरूरत क्या है खजाने खोजने की ? मै तो अपनी भीख मागने मे मस्त हू । मै क्यो परेशान होऊ ? छोटी सी जिंदगी मिली है, उसे मै आनद की खोज मे क्यो गवा दू ? अगर आनद की खोज मे भी जिन्दगी गवाई जाती है, तो फिर मै यह पूछना चाहता हू कि कमाई किस बात मे की जायेगी ?

चार : यह अधूरी शिक्षा ?

यह अधूरी शिक्षा ?

मनुष्य जाति के ऊपर जो बडे से बडे दुर्भाग्य आये है उनमे सबसे बडे दुर्भाग्य वे हैं जिन्हे हम सौभाग्य समझते रहे हैं। सौभाग्य समझने के कारण उन दुर्भाग्यो से बचना भी सम्भव नही हुआ, उनको बदलना भी सम्भव नही हुआ, उनसे मुक्त होने का भी कोई उपाय नही किया गया, बल्कि सौभाग्य मानने के कारण, वरदान मानने के कारण हम अपने अभिशापो की जडो मे भी पानी सीचते रहे हैं। और अब परिणाम मे यह मनुष्य पैदा हुआ है जो हमारे सामने है। और जो निर्मित हुआ है वह हमारे चारो तरफ फैला हुआ है। उन बडे दुर्भाग्यो मे शिक्षा के नाम से जो चलता रहा है उसे मै बडे से बडा दुर्भाग्य मानता हू। सुनकर निश्चित ही आपको हैरानी होगी क्योकि शिक्षा तो वरदान है, शिक्षित सज्जन तो धन्यभाग ही हो जाते हैं, ऐसा ही अब तक हम मानते रहे हैं। लेकिन क्या आपको पता है शिक्षा ने मनुष्य के जीवन को सतुलन और स्वास्थ्य नहीं दिया है बल्कि मनुष्य जीवन के सारे सतुलन (Balance) को छीन लिया है और यह होना निश्चित ही था। क्योकि जो हम अब तक शिक्षा से समझते रहे हैं उसमे कुछ बुनियादी भूलें हैं।

पहली बुनियादी भूल यह है कि हमने आदमी को केवल बुद्धि (Intellect) समझ लिया है। इससे ज्यादा झूठी और गल्त बात नही हो सकती। आदमी अकेले बुद्धि नही हैं और शिक्षा केवल बुद्धि की है। शेष पूरा मनुष्य अधूरा और अछूता छूट जाता है। शेष पूरा मनुष्य अविकसित छूट जाता है। केवल बुद्धि विकसित होती है। यह वैसा ही है जैसे एक आदमी का सारा शरीर तो सूख जाय सिर्फ सिर बडा हो जाय, एक आदमी का सारा शरीर तो क्षीण हो जाय सिर्फ खोपडी बडी होती चली जाय। फिर वह आदमी केवल एक कुरूपता (ugliness) होगा। और वह आदमी चलने मे भी असमर्थ हो जाएगा। उसका बडा सिर उसके पूरे शरीर के सतुलन मे नहीं होगा तो उसका जीना कठिन हो जाएगा।

शिक्षा के नाम पर यही हुआ है। हमने सोच लिया कि मनुष्य है केवल बुद्धि, केवल इटलेक्ट। और तब हम पिछले तीन हजार वर्षों से मनुष्य की बुद्धि को ही विकसित करने के सब उपाय करते रहे हैं। बुद्धि विकसित

हो गई लेकिन शेष सारा मनुष्य बहुत पीछे छूट गया। शेष मनुष्य तीन हजार वर्ष पीछे छूट गया और बुद्धि तीन हजार वर्ष आगे चली गई। इन दोनो के बीच जो तनाव और खाई पैदा हो गई है वही हमारे प्राण ले रही है। इससे एक उल्टे ढग की पगुता (Inverted cripplehood) पैदा हुई है। एक आदमी के पास सब होता है लेकिन आखे नही होती तो हम उस आदमी को कहते हैं कि इसका एक अग पगु है, विकसित नही हुआ है। एक आदमी के पास सब होता है लेकिन उसके पास दो पैर नही होते तो उसे हम पगु कहते हैं। इससे उल्टे तरह की पगुता भी हो सकती है जिसका हमे ख्याल भी नहीं है। एक आदमी के पास कुछ न हो, केवल दो पैर हो तो वह आदमी इनवर्टेड क्रिपिल्ड है। वह उल्टे ढग से पगु हो गया है।

शिक्षा ने मनुष्य को स्वस्थ नही किया, पगु किया है। केवल बुद्धि का विकास हुआ है और शेष अग अविकसित रह गये है। बुद्धि बडी होती चली गई और जीवन के सब स्रोतो से उसके सम्बन्ध, उसके नाते विच्छिन्न हो गये। हम सीखते क्या है? हम शिक्षा के नाम पर देते क्या है? जीवन की कोई शिक्षा देते है हम? कोई जीवन की कला सिखाते है? जरा भी नही। हम कुछ सभ्यता सिखाते है, कुछ गणित सिखाते है, कुछ भाषा सिखाते हैं, कुछ केमेस्ट्री-फिजिक्स सिखाते हैं, कुछ भूगोल-इतिहास सिखाते हैं और इस सब सिखाने मे हम सिखाते क्या हैं? हम शब्द ही सिखाते है। शब्द जीवन नही है। जीवन को जीने मे शब्द की उपादेयता है। लेकिन शब्द मात्र की शिक्षा जीवन की शिक्षा नही हो सकती है। तब यह होता है कि शब्द बहुत हो जाते है।

शिक्षित व्यक्ति के पास शब्दो के अतिरिक्त कोई सम्पत्ति नहीं होती। वह उतना ही मूढ होता है जितना अशिक्षित व्यक्ति। एक फर्क होता है, सिर्फ उसे एक भ्रान्ति पैदा हो जाती है कि मै मूढ नहीं हू। जीवन के और सारे अगो के सम्बन्ध मे वह उतना ही अज्ञानी होता है जितना कोई और जगल का निवासी। जीवन की कला के सम्बन्ध मे उसकी कोई समझ नही होती। जीवन को जीने के रास्तो का उसे कोई पता नही होता। जीवन से उसका कोई परिचय ही नही होता। पुस्तकालयो और किताबो से जीवन का क्या नाता है? क्लास रूम से जो परिचित है वह जीवन से परिचित है ऐसा समझ लेने के भ्रम मे पड जाने की कोई जरूरत नहीं। और विद्यालय मे जिसने स्वर्ण पदक ले लिया है, जीवन उसे मिट्टी के पदक की भी कीमत नही देगा इसे ख्याल रखना जरूरी है।

शब्दो की शिक्षा मात्र, शब्दो का सग्रह मात्र, शब्दो की सम्पत्ति मस्तिष्क मे एक बोझ तो बन जाती है लेकिन मस्तिष्क को न तो मुक्त करती है, न जीवन्त बनाती है, न विचारपूर्ण बनाती है, न जीवन को देखने की मौलिकता देती है, न जीने की कला देती है न जीने का उपाय सिखाती है। इसको हम अब तक शिक्षा कहते रहे हैं। इस शिक्षा का फल यह आदमी है जो आज हमारे सामने खडा हो गया है—बीमार, विक्षिप्त, रुग्ण।

क्या आपको पता है जितनी शिक्षा बढती जाती है उतना आदमी विकृत होता चला जाता है ? अशिक्षित आदमी के पास एक तरह का सतुलन और स्वास्थ्य था जो शिक्षित आदमी के पास नही है। जगलो के वासियो के पास एक तरह का सौंदर्य था, एक तरह का सगीत था, एक तरह का आनन्द था, जीवन मे एक अर्थ और प्रयोजन था जो शिक्षित आदमी के पास नही है। यह बडी हैरानी की बात है। क्या हम आनन्द को खोने के मूल्य पर शिक्षित हो रहे हैं ? हमारी, आनन्द को अनुभव करने की क्षमता और पात्रता कम हो रही है। क्या हम जीवन के साथ अपनी जडो का सम्बन्ध तोड रहे हैं ?

शिक्षित आदमी को निष्पक्ष आखो से देखना कठिन है क्योकि हम भी शिक्षित आदमी हैं। बहुत कठिन है यह बात कि हम शिक्षित आदमी के रोग को देख सके। जहा सब लोगो को एक ही रोग होता है वहा पहचानना बहुत कठिन हो जाता है। हम सभी शिक्षित हैं, न केवल हम शिक्षित हैं बल्कि हम शिक्षक भी हैं। हम किसी शिक्षा को फैलाने और देने वाले लोग भी हैं। तो हमें यह देखना बहुत कठिन हो जाएगा, यह सोचना बहुत कठिन हो जाएगा कि जो हम फैला रहे हैं वह मनुष्य को स्वस्थ नही बना रहा है। लेकिन जिनके पास आखें हैं और जिन्होने शिक्षा मे शिक्षित होकर अपनी पूरी बुद्धिमत्ता नही खो दी है वे लोग कुछ बातें देखने मे समर्थ हो सकते हैं।

अमेरिका सर्वाधिक शिक्षित मुल्क है लेकिन सर्वाधिक पागलो की सख्या भी अमेरिका में है। उन दोनो के बीच कोई सम्बन्ध है या यह केवल सयोग है ? जो मुल्क जितने शिक्षित होते जा रहे हैं उन मुल्को का मानसिक तनाव भी बढता चला जा रहा है। जो मुल्क जितने शिक्षित होते जा रहे हैं उतने ही आत्मघात की सख्या वहा बढती चली जा रही है। केवल अमेरिका में ही प्रतिदिन १५ लाख से लेकर ३० लाख लोग मानसिक विकारो के लिए चिकित्सा की तलाश करते हैं। और ये सरकारी आंकडे हैं और हम भलीभांति जानते हैं कि सरकारी आंकडे कभी भी ठीक नहीं होते। १५ लाख से ३० लाख लोग अगर

रोज मानसिक चिकित्सा को खोज रहे हो तो हमे जानना चाहिए कि कोई व्यक्तिगत भूल नही हो रही है, कोई सामूहिक बीमारी मनुष्य के भीतर प्रविष्ट हो रही है। न्यूयार्क मे तीस प्रतिशत लोग बिना दवा लिये रात मे नहीं सोते हैं। और वहा के वैज्ञानिको की खोज-बीन का यह नतीजा है कि अगले पचास वर्षों मे न्यूयार्क में एक भी आदमी बिना दवा लिये नहीं सो सकेगा।

यह विकसित होते मनुष्य के लक्षण हैं। फिर न्यूयार्क से हमारा क्या वास्ता है, बम्बई भी बहुत दिन पीछे नही रहेगी। हम भी विकास करने मे, दौडने मे साथ खडे होगे। हिन्दुस्तान भी पीछे नही रहेगा। जो हिन्दुस्तान हर चीज मे जगत्‌गुरु रहा है वह पागलपन मे भी जगत्‌गुरु होकर ही रहेगा। हम बच नहीं सकते। हम दौड रहे हैं। हमार नेता पूरी कोशिश कर रहे हैं कि हम किसी से पीछे न रह जायें। पश्चिम पर जो एक काली छाया मानसिक तनावो और अशान्ति की पैदा हुई है वह कैसे पैदा हो गई है ?

जिन लोगो ने पिछले तीन सौ वर्षों मे पश्चिम को शिक्षित करने की कोशिश की है उन भले लोगो का, भली इच्छाओ के साथ इसके पीछे हाथ है। शायद उन्हें पूरी तरह जीवन का पता नही था। शायद अकेली बुद्धि विकसित हो जायेगी तो मनुष्य दुखी हो जाएगा यह उनके ख्याल मे नहीं था। जरूर बुद्धिमत्ता विकसित होनी चाहिए, बुद्धि विकसित होनी चाहिए। लेकिन जीवन के सारे अगो के अनुपात मे, सतुलन मे स्वास्थ्य के साथ, हृदय के साथ, प्राणो के साथ उसका विकास होना चाहिए। वह अकेली विकसित हो जाएगी तो खतरा होना निश्चित है।

बुद्धि के पास कोई हृदय नही होता है। बुद्धि जिस जीवन और जगत को बनायेगी वहा हृदय नहीं होगा। बुद्धि के पास गणित होता है, प्रेम नही। बुद्धि के पास हिसाब और आकडे होते हैं, भावना नही। बुद्धि सख्याओ मे सोचती है और तर्क मे सोचती है। जीवन तर्क, सख्याओ और गणित के पार चला जाता है। जीवन बहुत रहस्यपूर्ण है। कोई गणित जीवन को समझा नहीं पाता। कोई सख्या, कोई आकडा जीवन को हल नही कर पाता। जीवन बहुत रहस्यमय है लेकिन बुद्धि रहस्य (Mystery) को मानती ही नही। बुद्धि मानती है कि चीजें दो और दो चार जैसी सीधी और साफ है। बुद्धि की यह जो रहस्य-शून्य (Non-Mysterious) और हृदयहीन पहुच है जीवन के प्रति, उसने ही जीवन को यांत्रिकता प्रदान कर दी है।

मनुष्य रोज रोज मशीन की भांति होता चला आ रहा है। लेकिन जब कोई आदमी मशीन हो जाता है तो हम कहते हैं बहुत दक्ष है, हम कहते हैं बहुत कुशल है। मशीन आदमियो से हमेशा ज्यादा कुशल होती है। और आदमी की कुशलता पर ही हमारा जोर रहा तो एक न एक दिन आदमी मशीन जैसा कुशल हो जाएगा लेकिन अपनी आत्मा को खोकर। आदमी भूलचूक करता है, मशीन भूलचूक नहीं करती। हम ऐसे आदमी की कोशिश कर रहे हैं जिससे भूलचूक न हो सके, जो एकदम कुशल हो, जो एकदम गणित की लकीरो पर चलता हो। गणित की लकीरो पर चले, रेल जैसे पटरियो पर दौड़ती है उस भांति। लेकिन जीवन की सरिताए पटरियो पर नही दौडती, अनजान, अपरिचित मार्गों पर दौडती हैं। जीवन की सरिता की एक स्वतन्त्रता है जो बुद्धि के बधे हुए ढाचे मे समाविष्ट नहीं होती। लेकिन आज तक हमने यह किया है।

मै आपसे यह कहना चाहता हू कि अकेली बुद्धि की शिक्षा बुद्धिमत्ता नही है। जीवन के और पहलू भी हैं जो बुद्धि से भी ज्यादा महत्वपूर्ण हैं। क्योकि आदमी बुद्धि से नही जीता है। आदमी के जीने के स्रोत बुद्धि से कही अधिक गहरे हैं। न तो बुद्धि से हम प्रेम करते हैं, न बुद्धि से हम क्रोध करते हैं, न बुद्धि से हम घृणा करते हैं, न बुद्धि से हम सौन्दर्य को परखते हैं, न बुद्धि से हम गीत और काव्य को पढते हैं, और न ही बुद्धि से जीवन की कोई भी गहरी अनुभूति उपलब्ध होती है। अकेले बुद्धि की शिक्षा जीवन को सब तरह की अनुभूतियो से क्षीण और वचित कर दे तो कोई आश्चर्य नहीं। लेकिन हम बुद्धि की ही शिक्षा देते रहे हैं। इस शिक्षा ने एक अत्यन्त असतुलित मनुष्य को पैदा कर दिया है।

यह जो असतुलित मनुष्य है यह कुछ भी कर रहा है, इससे कुछ भी हो रहा है, यह कोई भी उपद्रव कर रहा है। यह उपद्रव बिल्कुल ही सुनिश्चित है क्योकि जब आदमी भीतर से असतुलित हो जाये तो उसकी बाहर की चर्या भी असतुलित हो जाती है। उसके जीवन में फिर कोई गति, कोई सुनिश्चित लक्ष्य, कोई लयबद्धता नही रह जाती। यह तो हमारे दुर्भाग्यों मे पहला दुर्भाग्य हुआ कि शिक्षा को हमने केवल बुद्धि की शिक्षा समझ रखा है, समग्र जीवन की नहीं, पूरे (total) जीवन की नही। पूरे जीवन की शिक्षा और ही अर्थ लेगी।

मेरी दृष्टि में बुद्धि पर अति भार मनुष्य के भीतर कुछ चीजों को

विकसित होने से ही रोक देता है। पाच वर्ष के बच्चे को हम स्कूल भेजते हैं। उसकी बुद्धि पर इतना भार पडता है कि उसके शरीर, उसके हृदय, उसकी भावनाओ की, जीवन मे रस और आनन्द लेने की सब क्षमताए क्षीण हो जाती हैं। सारे जीवन का रस बुद्धि ले लेती है और सारा जीवन सूख जाता है। ये बच्चे बडे होते हैं, हृदयहीन भावनाशून्य, प्रेम से रिक्त। मशीनो की भाति उनका एक ही मूल्य होता है कि वे कितने बडे पदो पर पहुच जाय, कितनी तनख्वाहें ले आयें, कितनी कुशलता से काम करे।

आदमी क्या केवल इसलिए पैदा होता है कि वह ज्यादा तनख्वाह कमाये और बडी कुर्सी पर बैठ जाये ? या आदमी किसी और आनन्द की सम्पदा को खोजने जीवन मे आता है ? निश्चित ही उसकी खोज किसी बडी सम्पत्ति की है। लेकिन उस सम्पदा को खोजने के लिए कुछ और चीजें विकसित होनी चाहिए। मेरी दृष्टि मे दस या बारह वर्ष तक या चौदह वर्ष तक बच्चे की बुद्धि पर कोई भार नही होना चाहिए। १४ वर्ष के बाद ही बच्चे की बुद्धि पर भार होना चाहिए। चौदह वर्ष तक उसके शरीर और उसकी भावनाओ के विकास पर सारा श्रम होना चाहिए। चौदह वर्ष बच्चे के जीवन के बहुत सक्रमणकारी हैं। जैसे ही यौन परिपक्वता (sex-maturity) उपलब्ध होती है, जैसे ही बच्चा यौन दृष्टि से परिपक्व होता है उसके बाद ही उसकी बुद्धि का सम्यक् विकास करना आसान और उचित है। उसके पहले उसके जीवन के और बहु-मूल्य हिस्से हैं वे विकसित होने चाहिए। उसका स्वास्थ्य विकसित होना चाहिए, उसकी भावनाए विकसित होनी चाहिए, उसके प्रेम करने की क्षमता विकसित होनी चाहिए। क्योकि बचपन मे जिन बच्चो की प्रेम करने की क्षमता विकसित नही हुई है वे बूढ़े भी हो जाए तो उनके भीतर प्रेम का विकास नही हो सकेगा।

बचपन सबसे सुखद और अद्भुत मौका है जब कि बच्चे के जीवन मे प्रेम विकसित हो सकता है। लेकिन वह अमूल्य समय हम गणित सिखाने मे, भूगोल सिखाने मे और इतिहास की बेवकूफिया सिखाने मे नष्ट करते हैं और समाप्त करते हैं। क्या प्रयोजन है यह सब सिखाने का ? बच्चा अगर नही जानेगा बहुत भूगोल तो कुछ हर्जा नहीं हुआ जाता है। और बच्चे ने अगर अकबर, नेपोलियन और सिकन्दर जैसे पागल लोगो के नाम नही सीखे तो कोई फर्क नहीं पडता है। किन लोगो ने कितने लोगो की हत्याए की हैं इसकी कोई योजना बच्चो ने नहीं सीखी तो कोई अन्तर नही पडता है। और किस सन् मे

कौन बादशाह पैदा हुआ और मरा इन नासमझियों के सीखने का कोई अर्थ नहीं, न कोई सार है। लेकिन इन सबके सिखाने मे बच्चे के प्रेम के विकसित होने के जो क्षण थे वे नष्ट हो जाते हैं।

क्या आपको पता है कि बचपन के बाद आपका सारा प्रेम सूखा, थोथा और धोखे से भरा हो जाता है? जिनको आपने बचपन मे चाहा है उस चाह मे और जिनको आप बड़े में चाहते हैं, बुनियादी फर्क है। बचपन की वह जो पवित्रता है प्रेम की, अगर एक बार खो गई, अगर वह निर्दोषता (Innocence) एक बार खो गई तो जीवन में उसे दोबारा पाना अत्यन्त दूभर, अत्यन्त असम्भव हो जाएगा। बचपन की सारी पवित्रता प्रेम के विकास मे लगनी चाहिए, बुद्धि के विकास मे नहीं। क्योंकि प्रेम के आधार पर, बुनियाद पर जो जीवन का भवन खडा होता है वही केवल आनन्द को उपलब्ध हो सकता है। बुद्धि से आनन्द का कोई भी नाता और सम्बन्ध नही है। बुद्धि को हम बुनियाद मे रख देते हैं तो फिर जो भवन खड़ा होता है वह मन्दिर नहीं होता है, वह एक फैक्टरी बन जाता है।

आदमी की जिन्दगी फैक्टरी बनानी हो तो बुद्धि पर भवन खडा होना चाहिए और आदमी की जिन्दगी को एक मदिर बनाना हो तो प्रेम पर बुनियाद रखी जानी चाहिए। बचपन के सारे क्षण हृदय के विकास मे दिये जाने चाहिए, सारा श्रम हृदय के विकास के लिए होना चाहिए। और हृदय के विकास के लिए कुछ और अवसर खोजने पडते हैं। वे अवसर नही जो हम स्कूल और विद्यालय मे खोजते हैं। हृदय के विकास के लिए जरूरी है कि बच्चा खुले आकाश के नीचे हो बजाय बन्द मकानो मे। क्योंकि बन्द मकान हृदय को भी बन्द और कुठित करते हैं। खुले आकाश के नीचे दरख्तो के पास हो, चाद तारो की छाया मे हो, नदी और समुद्र के किनारे हो, खुली मिट्टी और पृथ्वी के ससर्ग मे हो।

जितने विराट के निकट होगा बच्चा उतने ही प्रेम का उसके भीतर जन्म होगा, सौन्दर्य का बोध होगा और रस विकसित होगा। बन्द दीवालो में काले तख्तो के सामने बैठे हुए छोटे छोटे बच्चो पर जो अपराध हो रहा है, जो पाप हो रहा है उसकी गणना आज नहीं कल मनुष्य जाति कभी करेगी तो हम सब दोषी करार सिद्ध होंगे। बच्चे को होश आते ही हम बन्द कमरे और दीवालो में कैद कर देते हैं शिक्षा के नाम पर। कारागृह में बन्द कर देते हैं और क्या सिखाते हैं उन्हें हम? और कौन से जीवन का मूल्य सिखाते हैं? फिर

बचपन के ये अद्भुत क्षण जबकि जीवन से सम्पर्क हो सकता था, व्यर्थ खो जाते हैं।

रवीन्द्रनाथ ने लिखा है कि मुझे बन्द किया जाता था स्कूलो में। बाहर वृक्षो पर चिड़िया गीत गाती थी और मुझे काले तख्ते को ही देखते रहना पड़ता था। चिड़ियो के गीत बहुत अद्भुत थे लेकिन मुझे शिक्षक की ही बेसुरी आवाज में गणित और भूगोल पढ़ने पडते थे। अगर मेरे कान और मेरे प्राण पक्षियो के निकट पहुच जाते तो बहुत सजा झेलनी पडती थी। रवीन्द्रनाथ ने शान्ति-निकेतन में पहली दफा जब विद्यालय खोला तो कौन उनको अपने बच्चे देता बिगाडने के लिए ? रवीन्द्रनाथ खुद भी कोई उपाधि नही पा सके, किसी विद्यालय से। सौभाग्य था उनका, नही तो दुनिया एक महाकवि से वचित रह जाती। भाग्यशाली थे वे। उनके मा बाप असफल हो गये और रवीन्द्रनाथ को स्कूल से उठा लिया। अगर मा बाप सफल हो जाते तो दुनिया को एक बहुत बडा नुकसान सहना पडता। और इस दुनिया ने कितने-कितने नुकसान सहे होंगे मनुष्य के इतिहास में इसका कोई आकलन नही हो सकता। इसका कोई पता नही हो सकता कि कितने रवीन्द्रनाथ खो गये होंगे स्कूलो मे।

रवीन्द्रनाथ ने जब पहला स्कूल खोला कौन देता अपने बच्चो को बिगाडने के लिए। मै कोई स्कूल खोलू तो आप अपने बच्चे को भेजेंगे ? नही भेजेंगे। बच्चे को बिगाडने के लिए कौन भेजता ? लेकिन फिर भी रवीन्द्रनाथ के मित्रो के कुछ ऐसे बच्चे थे जिनको और बिगाडना सम्भव नही था। उनको रवीन्द्रनाथ के स्कूल मे भेज दिया गया। वे आखिरी सीमा पर थे। उनसे कोई आशा और नही थी। रामानन्द चटर्जी माडर्न रिव्यू के सम्पादक ने भी अपने लडके को भेजा था। उससे वे बाज आ गये थे। जिन लडको मे भी थोड़ी प्रतिभा होती है मां बाप उनसे बहुत परेशान हो जाते हैं। प्रतिभा और मेधा से रिक्त जडबुद्धि बच्चे मा बाप को बडे प्रीतिकर लगते हैं। क्योकि उनसे जहा कहो बैठ जाओ, वे वहीं बैठ जाते हैं और कहो उठ जाओ तो उठ जाते हैं। उनके पास न अपनी कोई आत्मा होती है, न अपने कोई प्राण होते हैं।

रामानन्द ने अपने लड़के को भी भेजा था। तीन महीने बाद रामानन्द देखने गये कि हालत क्या है ? स्कूल कैसा चलता है ? कोई आशा तो न थी स्कूल चलने की, लेकिन जो देखा उससे और बडी हैरानी हुई। एक बड़े वृक्ष के नीचे रवीन्द्रनाथ बैठे हैं। दस पन्द्रह बच्चे उनके आस पास बैठे हैं। पढ़ाई चलती है। पास जाकर रामानन्द ने देखा, दस पन्द्रह नीचे बैठे हैं, दस पन्द्रह

वृक्ष के ऊपर चढ़े हैं। यह कैसी कक्षा है ? रवीन्द्रनाथ से उन्होंने कहा, मुझे शक था पहले ही। यह क्या हो रहा है, यह कोई कक्षा है ? देखकर मुझे दुख होता है। लडके वृक्ष पर चढ़े हुए हैं।

रवीन्द्रनाथ ने कहा, "दुख मुझे भी होता है। फल पक गये हैं। जो लडके नीचे बैठे हैं उन पर मैं हैरान हूं। दुख मुझे भी होता है, दुखी मैं भी हूं। मैं बूढ़ा हो गया अन्यथा मैं भी वृक्ष के ऊपर होता। फल पक गये हैं। फलों की सुगन्ध हवाएं ले आई हैं। वृक्ष पुकार रहा है और अगर बच्चे नहीं चढ़ेंगे तो फिर कौन चढ़ेगा ? वृक्षो ने निमन्त्रण दे दिया है। ये बच्चे अभी से बूढे हो गये हैं जो नीचे बैठे हैं। इन्हें निमन्त्रण भी नही मिला है। इनकी नासापुटों मे खबर नहीं हो रही है कि फल पक गये हैं। वृक्ष बुलाता है कि आओ। दुखी हो गये वे जो असमर्थ हैं ऊपर चढ़ने मे, जो बूढे हो गये। लेकिन यह तो अभी बूढ़े नही हुए। मैं बैठा यही सोचता था। ये बच्चे अभी से बूढ़े हो गये हैं क्या ? क्या इन्हें वृक्ष की चुनौती नहीं मिली ? इन्हें कोई खबर नही मिली ?"

हम बच्चो को बचपन में ही बूढे कर देते हैं और फिर अगर जीवन से युवापन, ताजगी (Freshness) नष्ट हो जाती हो तो कौन जिम्मेवार है ? बहुत अनाचार हो रहा है, बहुत गल्त हो रहा है। बचपन के क्षण इतने अद्‌भुत हैं कि जीवन मे वे वापस नहीं लौटेंगे। हिसाब-किताब की बातें बाद में भी हो सकती हैं। पूरा जीवन पडा है लेकिन जीवन के कुछ मूल्यवान तत्त्व बचपन मे ही दिये जा सकते हैं जो फिर कभी नही दिये जा सकते।

प्रकृति का सान्निध्य जिन बच्चो को नही मिलता उन बच्चो को परमात्मा का सान्निध्य भी नहीं मिल सकेगा यह जान लेना चाहिए। क्योंकि प्रकृति द्वार है परमात्मा का। आकाश के तले, सूरज के निकट, समुद्र की रेत पर, वृक्षों के पास जो वहा मौजूद है, जो उपस्थिति है वहा परमात्मा की, उसे जिसने बचपन में अनुभव नहीं कर लिया है वह बुढापे तक मदिरो में पूजा करेगा, पत्थर की मूर्तियों के सामने सिर झुकायेगा, गीता, कुरान और बाइबिल कठस्थ कर लेगा लेकिन परमात्मा से उसका कोई सम्बन्ध नही हो सकता। जो द्वार था उसने उसको ही खो दिया है। जो रास्ता था वह उससे भटक गया है।

सम्यक् शिक्षा (Right Education) के लिए जो पहली बात जरूरी है वह यह कि हम बच्चो को प्रकृति का सान्निध्य उपलब्ध करा सकें। उन्हें हम मनुष्य निर्मित मकानों के पास नहीं, जीवन की ऊर्जा से जो निर्मित हुआ है

उसके निकट ला सकें, उसी से वे परमात्मा के निकट पहुच सकेंगे, उसी से वे प्रार्थना के सूत्र समझ सकेंगे। पीछे आनी चाहिए गणित, प्रेम पहले, क्योंकि जिस आदमी ने प्रेम सीख लिया है फिर गणित उसे धोखा नही दे सकेगी।

सत अगस्टीन से किसी ने पूछा, हम क्या करें कि हमसे बुरा न हो? अगस्टीन ने कहा, यह मत पूछें कि हम क्या करें, यह सवाल नही है। अगर भीतर प्रेम नही है तो तुम जो भी करोगे वह बुरा होगा। और अगर भीतर प्रेम है तो तुम जो भी करोगे वह बुरा नही हो सकता है। लेकिन प्रेम की हमने कौन सी शिक्षा दी है, हमने प्रेम के कौन से प्रमाणपत्र बाटें हैं, हमने प्रेम की कौन सी उपाधिया दी हैं? और अगर तीन हजार वर्षों मे आदमी बिल्कुल प्रेमशून्य ही हो गया हो, हत्यारा हो गया हो, हिंसक हो गया हो तो कौन है जिम्मेवार? हमारी शिक्षा के अतिरिक्त और किसी पर यह दोष नही दिया जा सकता, लेकिन इससे शिक्षक बुरा न मानें क्योकि शिक्षा को यह दोष देने का मतलब है मे शिक्षा को बहुत आदर दे रहा हू। मे यह कह रहा हू कि शिक्षा जीवन का केन्द्र है इसलिए केन्द्रीय दोष भी झेलने की तैयारी शिक्षक के पास होनी चाहिए क्योकि केन्द्रीय सम्मान भी केवल उसी को मिल सकता है।

कल अगर जीवन परिवर्तित होगा तो सम्मानित भी शिक्षा ही होगी और अगर आज जीवन दूषित और विषाक्त हो गया है तो उसके केन्द्रीय दोष को, जिम्मेवारी (Responsibility) को लेने को शिक्षाशास्त्री को तत्पर होना चाहिए। यह शिक्षा के केन्द्रीय होने का, शिक्षा के केन्द्र मे होने का प्रमाण है। यह सम्मानपूर्ण है। यह बात जो मै कह रहा हू इसलिये क्योकि शिक्षा केन्द्रीय है, न तो राजनीतिज्ञ जिम्मेवार है और न धर्मगुरु, उतना जितना शिक्षक जिम्मेवार है। लेकिन आनेवाली दुनिया भी शिक्षक को ही सम्मान देगी अगर वह जीवन को बदलने का कोई आधार रख सकता है। अगर आप नही बदल सकेंगे तो बच्चे खुद कल बदलना शुरू कर देंगे।

मेरे एक मित्र हालेंड और बेल्जियम से होकर लौटे। उन्होने मुझे कहा वहा हाईस्कूल के लडके और लडकियो ने आगे पढने मे इन्कार करना शुरू कर दिया है। उनके बडे सगठन हैं और वे कहते है कि आगे पढने से क्या होगा? मा बाप से भी वे यह पूछते हैं कि आप तो बहुत पढे लिखे हैं, आपके जीवन में क्या है? तो हमे व्यर्थ उसी मशीन से क्यो गुजारते हैं जिससे गुजर कर आपने कुछ भी नहीं पाया है? और मा बाप के पास उत्तर नहीं है इस बात का। अगर आपके बच्चे भी आपसे पूछेंगे कि शिक्षित होकर आपने

क्या पा लिया ? क्या उत्तर है आपके पास ? तिजोरी बता देंगे अपनी ? अपने बड़े मकान बता देंगे ? दिल्ली मे पाई गई अपनी कुर्सिया बतायेंगे ? क्या बतायेंगे बच्चो को ?

है कुछ आपके पास, जो शिक्षित होकर आपने पा लिया है ? किस बल से आप कह सकते हैं कि मेरा आत्मबल बडा है ? किस बल पर आप कह सकते हैं कि मेरा आनन्द विकसित हुआ है ? किस बल पर आप कह सकते हैं कि जीवन के प्रति मेरा अनुग्रह भाव विकसित हुआ है ? क्या आप कह सकते हैं कि मै धन्यभागी हुआ हू ? नहीं कह सकते हैं तो बच्चे आज नहीं कल आपसे पूछेंगे और अगर उत्तर नही है आपके पास तो मै आपको कहे देता हू बच्चे आज नहीं कल, आपकी शिक्षा की फैक्टरियो मे जाने से इन्कार करेंगे। उन्होने बहुत शिक्षित मुल्को मे इन्कार करना शुरू कर दिया है। ठीक भी है उनका इन्कार। लेकिन इसके पहले कि वे इन्कार करें, क्या हम सारे जीवन के सोचने का ढग बदल नहीं सकते ?

जब तक बच्चा यौन दृष्टि से परिपक्व नही हो जाता तब तक उसके जीवन की केन्द्रीय शिक्षा प्रेम और हृदय की होनी चाहिए। क्योकि सारा जीवन उससे निकलेगा फिर वह पत्नी बनेगी या पति बनेगा, वह बाप बनेगा या मा बनेगी, उसके जीवन के सारे रागात्मक सबध उसके प्रेम और हृदय के सम्बन्ध होगे, गणित के नही, भूगोल के नही, इतिहास के नही। इतिहास पढ़ने से कोई मा ज्यादा बेहतर मा नही बन सकती और न भूगोल पढने से कोई बाप ज्यादा बेहतर बाप बन सकता है। कुछ और चाहिए जो एक बेहतर मा को, बेहतर बाप को पैदा करे। कुछ और चाहिए जो एक पति को और पत्नी को पैदा करे।

आज न तो दुनिया मे मा है, न बाप, न पत्नी न पति। इनके नाम पर झूठे रिश्ते (pseudo-relationships) हैं। इनके नाम पर झूठे सबध हैं। जिसको आप पत्नी कहते हैं उसको कभी आपने प्रेम किया है ? यह तो हो भी सकता है कि जिसको आप पत्नी नहीं कहते हैं उसको आपने कभी प्रेम किया हो लेकिन जिसको आप पत्नी कहते है उसे कभी नही। जिसको पत्नी पति कहती है उसको कभी चाहा है ? कभी आदर दिया है ? उसे कभी प्रेम किया है ? प्राणो ने कभी उसके लिए प्रार्थना की है। कभी उसके जीवन को समृद्ध और सगीतपूर्ण बनाने के लिए कोई कदम उठाये हैं ? बिल्कुल नही, बल्कि उसके जीवन मे जितने काटे बो सके पत्नी, उतने काटे बोती है जितनी बाधाए खडी कर सके

उतनी बाधाए खड़ी करती है और पति भी यही करते हैं, मा बाप भी यही करते हैं।

कहते हैं कि हम अपने बच्चे को प्रेम करते हैं । हमने प्रेम जाना ही नही हम बच्चे को प्रेम कैसे करेंगे ? अगर हम बच्चे को प्रेम करते होते तो दुनिया मे इतने युद्ध नही हो सकते थे। कौन मा बाप हैं जो अपने बच्चे को युद्ध में भेजते ? अगर हम अपने बच्चे को प्रेम करते होते तो दुनिया इतनी कुरूप नही हो सकती थी। अगर हम अपने बच्चो को प्रेम करते होते तो मैं यह कहता हू कि आप बच्चे पैदा भी नहीं कर सकते थे। क्योकि इस कुरूप और गन्दी दुनिया मे बच्चो को किस मुह से लाते। मा बाप अपने बच्चे को पैदा करने को तैयार होगे ? वे हाथ जोड लेंगे कि इस दुनियां मे हम बच्चे को कैसे लायें ? किस मुह से लायें ? बहुत लाया। कल बच्चे बडे होगे तो हम बेशर्म मालूम होगे उनके सामने कि इस दुनिया में हमने तुमको पैदा किया। इस कुरूप, बदशक्ल, अनीति से, अन्धकार से भरी दुनिया मे हम तुम्हें कैसे भेजें ?

मा बाप बच्चे पैदा करने से इन्कार कर देते अगर उनके हृदय मे प्रेम होता। नहीं लेकिन वे बच्चे पैदा किये चले जाते हैं। उन्हें बच्चे से कोई प्रयोजन नहीं है। वे बच्चे को बडा किये चले जाते हैं । वे बच्चे को तोडकर बन्दूक का भोजन बनाये चले जाते हैं। नई नई तरकीबो और नये नये नामो पर बच्चो की हत्या करवाये चले जाते हैं—हिन्दुस्तान के नाम पर, पाकिस्तान के नाम पर, चीन के नाम पर, कम्युनिज्म के नाम पर, डेमोक्रेसी के नाम पर। किसी भी बडे नारे के नाम पर मा बाप अपने बच्चो की हत्या करवाने को हमेशा तैयार हैं। नाम बहुत बडे हैं, नारे बहुत बडे हैं, बच्चे बहुत छोटे हैं ।

अगर दुनिया मे प्रेम होता तो मा बाप के मन मे बच्चो के प्रति प्रेम के कारण एक दूसरी दुनिया पैदा होती जिसमे युद्ध नही हो सकते थे। क्यो ? क्योकि हर बच्चा किसी मा का बच्चा है और हर बच्चा किसी बाप का बेटा है। कौन बच्चे को युद्ध मे भेजने के लिए राजी होता ? हम कह देते मिट जाय पाकिस्तान, मिटे हिन्दुस्तान लेकिन बच्चे युद्ध मे नहीं जा सकते। न बचे चीन, न बचे रूस, न बचे अमरीका, लेकिन कोई मां अपने बच्चे को युद्ध पर भेजने के लिए तैयार नहीं है। दुनियां मे युद्ध भी खत्म होते, राजनीतिज्ञ भी, राष्ट्र भी। लेकिन कोई अपने बेटे को प्रेम नहीं करता है। प्रेम हम जानते ही नहीं हैं। प्रेम से हमारा परिचय भी नहीं है। प्रेम से हमारी मुलाकात ही नहीं हो पाई। प्रेम

से मुलाकात के क्षणों को हमने न मालूम क्या क्या फिजूल की बातें सीखने मे नष्ट कर दिया है। मेरी दृष्टि में शिक्षा की बुनियाद होनी चाहिए प्रेम, बुद्धि नही। बुद्धि केवल उपकरण है। अगर भीतर प्रेम होगा तो बुद्धि एक उपकरण बन जाती है प्रेम को फैलाने और विकसित करने का, और भीतर अगर प्रेम नही होगा तो बुद्धि उपकरण बन जाती है घृणा को फैलाने का।

ट्रूमेन ने हिरोशिमा पर एटम बम गिराने की आज्ञा दी। दूसरे दिन सुबह मैंने सुना है पत्रकारो ने ट्रूमेन को घेर लिया और पूछा, "रात आप शान्ति से सो सके?" ट्रूमेन ने कहा बहुत शान्ति से। जैसे ही मुझे खबर मिली कि हिरोशिमा, नागासाकी राख हो गये और जापान समर्पण कर देगा वैसे ही पहली दफा शान्ति से सो सका। उन पत्रकारो मे से किसी ने भी यह नही पूछा कि एक लाख बीस हजार आदमी नष्ट हो गये और तुम शान्ति से सो सके? तुम आदमी हो या कुछ और? लेकिन उस आदमी का नाम है ट्रूमेन (Truman) असली आदमी।

हमारी शिक्षा ऐसे ही ट्रूमेन पैदा कर रही है। जिनके भीतर कोई मनुष्यता, प्राणों की कोई ऊर्जा, कोई करुणा नही है। जिनके पास प्रेम का कोई झरना नहीं है वे हिसाब लगाने वाले कमप्यूटर्स, मशीन हो सकते हैं लेकिन आदमी नहीं। आदमी की पहली पहचान उसके भीतर का प्रेम है, जितना बडा प्रेम उतना बडा आदमी। जितना बडा प्रेम उतनी उस आदमी की परमात्मा से सन्निधि। इसलिए एक बात ही बुनियादी रूप से कहना चाहता हू कि शिक्षा के प्राथमिक क्षण प्रेम के क्षण होने चाहिए। और प्रेम के क्षण पाने के लिए बन्द दीवारें नहीं, खुला आकाश, पक्षी और वृक्ष, तारे और चाद चाहिए।

प्राथमिक शिक्षा गणित की नहीं काव्य की। प्राथमिक शिक्षा भूगोल की नही सौन्दर्य की। प्राथमिक शिक्षा विज्ञान की नही कला की। प्राथमिक शिक्षा तनाव की नही, विश्राम की और शान्ति की। अगर हम चौदह वर्ष तक की शिक्षा को इस भाति व्यवस्थित कर सके तो बाद मे इन बच्चो को बिगाडना कठिन है। इनको फिर किसी भी स्कूल और किसी भी युनिवर्सिटी मे भेजा जा सकता है। फिर इन्हें कुछ भी सिखाया जासकता है। उसमे फिर कोई खतरा नही होगा। इनके प्रेमपूर्ण हाथ में अगर तलवार दी जाएगी तो उस तलवार से कोई नुकसान नहीं होगा। एटम दे दिया जाएगा तो कोई नुकसान नहीं होगा। बड़ी से बडी शक्ति प्रेम के हाथो में सृजनात्मक (creative) हो जाती है। विज्ञान में शक्ति खोजते हैं बडी से बडी, लेकिन शिक्षक प्रेमपूर्ण हृदय नहीं दे

पाया। बड़ी शक्ति खतरनाक है उन हाथो मे जिनके पास प्रेम न हो।

नादिरशाह हिन्दुस्तान की तरफ आता था। एक ज्योतिषी को उसने पूछा कि मै सुनता हू कि ज्यादा सोचना, ज्यादा नीद लेना बहुत बुरा है और मुझे तो बहुत नीद आती है। क्या सच मे बहुत बुरी बात है ज्यादा देर सोये रहना? उस ज्योतिषी ने कहा "नहीं, आप जैसे लोग अगर चौबीस घटे सोये रहें तो बहुत अच्छा है। बुरे लोग अगर बिल्कुल सो जायें तो बहुत अच्छा है। भले लोगो का जागना अच्छा होता है। और बुरे लोगो का सोना।"

सुनते हैं नादिरशाह ने उस आदमी की गर्दन कटवा दी लेकिन उसने बात बडी सच्ची कही थी। सच्ची बात कहने वालो की गर्दन काटे जाने का पुराना रिवाज रहा है। उसने बात ठीक कही थी। बुरे आदमी का सोना अच्छा है, अच्छे आदमी का जागना। ऐसे ही मै कहता हू प्रेमपूर्ण व्यक्ति का शक्तिशाली होना अच्छा है, प्रेम शून्य व्यक्ति का शक्तिहीन नपुसक (Impotent) होना अच्छा है। प्रेमपूर्ण व्यक्ति के हाथ में शक्ति हो तो जीवन विकसित होता है। प्रेमशून्य व्यक्ति के हाथ मे शक्ति हो तो जीवन एक कब्रिस्तान बनेगा और कुछ भी नही बन सकता।

इस दिशा मे चिंतन करना जरूरी है। शिक्षको से मै यही प्रार्थना और निवेदन करने आया हू कि वे सोचें, वे इस सम्बन्ध मे सोचे कि हृदय का विकास कैसे हो और अगर जरूरी हो, जैसा मुझे लगता है कि है, तो सौ वर्ष के लिए सारी दुनिया के सारे विद्यालय और सारे विद्यापीठ बन्द कर दिये जायें और आदमी के मन को बिल्कुल ही अशिक्षित छोड दिया जाय तो भी नुकसान न होगा, जितना नुकसान सौ वर्षों मे जो शिक्षा चल रही है उसको देने से होने वाला है। आदमी हजारो वर्ष तक अशिक्षित था। उन अशिक्षित लोगो ने आनन्द जाना है, गीत जाने, प्रेम जाना। उन्होने भी एक दुनिया बनायी थी। उनके जीवन मे भी खुशी थी और मुस्कराहटें थीं, हमसे बहुत ज्यादा। हमने सब खो दिया है। आदमी के निसर्ग को वापस लौटा लेना जरूरी है।

मै यह नहीं कहता हू कि शिक्षा खत्म कर दी जाय। मै यह कह रहा हू कि शिक्षा की बुनियाद को बदल दिया जाय। और अगर यही शिक्षा चलती हो और कोई विकल्प (Alternative) शेष न हो, यही शिक्षा एकमात्र चुनाव हो तो मै कहता हू यह सारी शिक्षा बन्द हो जाय और आदमी वापस जगल में लौट जाय तो भी हम कुछ खोयेंगे नहीं। लेकिन मुझे लगता है कि विकल्प है, इस शिक्षा को परिपूर्ण किया जा सकता है। एक चीज इसमें जुड

जाय, इसके आधार प्रेम के, भाव के, हृदय के, करुणा और दया के हो जायें। मनुष्य के हृदय को हम पहले विकसित कर लें पीछे उसकी बुद्धि को। हृदय नेतृत्व करे, बुद्धि अनुगामी हो तो यह शिक्षा भी सम्यक् हो सकती है।

मैं निराश नहीं हू। निराश होता तो फिर आपसे यह बात नहीं कहता। शिक्षकों से यह बात इसी आशा से कहता हू कि वे सोचेंगे। उनके हाथ मे बडी शक्ति है। आज नहीं कल दुनिया उन्हें जिम्मेवार ठहरायेगी अगर गल्त हो या तो। उससे पहले चिन्तन कर लेना उचित है। जीवन का मदिर बनाना तो आधार प्रेम के रखने होगे और बचपन के चौदह वर्ष तक का समय प्रेम के लिए अद्भुत मौका है। उस वक्त अगर हम चूक जाते हैं तो हम हमेशा के लिए चूक जाते हैं। फिर कोई उपाय नहीं रह जाता कि हम उसमें बदलाहट ला सकें। जबकि बचपन मे बदलाहट लाने के लिए कुछ भी करना जरूरी नही था। प्रेम के झरने बहने को उत्सुक थे। हमने जानबूझकर उन्हें रोक दिया, बहने नही दिया। हम केवल मौका बन जायें उनके प्रेम के झरने को बहाने के लिए तो बिल्कुल ही नये तरह के मनुष्य को पैदा करने मे हम समर्थ हो सकते हैं।

एक नये मनुष्य की अत्यन्त जरूरत है। न तो इतनी जरूरत इस बात की है कि हम और नये एटम बम और हाइड्रोजन बम बनायें। न इस बात की जरूरत है कि हम चाद तारे पर पहुचने के लिए स्पुतनिक और यान बनायें। न इस बात की जरूरत है कि हम समुद्रो की गहराइया नाप ले, न इस बात की जरूरत है कि हम बहुत बडी फैक्टरिया, बहुत बडे बडे पुल, बहुत बडे बडे रास्ते बनाये। ये सब पडे रह जायेंगे। आदमी अगर गल्त हो गया तो ये सब व्यर्थ हो जायेंगे। इस वक्त तो एक ही जरूरत है और वह यह है कि हम ठीक आदमी बनायें। आदमी गल्त है, ठीक आदमी कैसे निर्मित हो इस दिशा मे हम सोचे।

पांच : शिक्षा : महत्वाकांक्षा और युवा पीढ़ी का विद्रोह

शिक्षा : महत्वाकांक्षा और युवा पीढ़ी का विद्रोह

मनुष्य की आज तक की सारी शिक्षा महत्वाकाक्षा की शिक्षा रही है। वह मनुष्य को ऐसी दौड मे गति देती है जो कभी भी पूरी नही होती। और जीवन भर की दौड के बाद भी हृदय खाली का खाली रह जाता है। मनुष्य के मन का पात्र जीवन भर की कोशिश के बाद भी अत मे अपने को खाली पाता है। इसीलिये मै ऐसी शिक्षा को सम्यक् नही कहता।

मै उसी शिक्षा को सम्यक् शिक्षा (Right education) कहता हू, जो मनुष्य की मन को भरने की इस व्यर्थ की दौड को समाप्त कर दे। मै उसी शिक्षा को सम्यक् कहता हू जो महत्वाकाक्षा के इस ज्वर से मनुष्य को मुक्त कर दे। मै उसी शिक्षा को ठीक शिक्षा कहता हू जो मनुष्य को इस बुनियादी भूल से छुटकारा दिलाने मे सहायक हो जाये। लेकिन ऐसी शिक्षा पृथ्वी पर कही भी नही है। उल्टे जिसे शिक्षा कहते हैं वह मनुष्य की महत्वाकाक्षा (Ambition) को बढाने का काम करती है। उसकी महत्वाकाक्षा की आग मे घी डालती है, उसकी आग को प्रज्वलित करती है, उसके भीतर जोर से त्वरा पैदा करती है, जोर से गति पैदा करती है कि वह व्यक्ति दौडे और अपनी महत्वाकाक्षाओ को पूरा करने में लग जाये। मन की वासनाओ को पूरा करने के लिए व्यक्ति को सक्षम बनाने की कोशिश करती है शिक्षा, मन को महत्वाकाक्षा से मुक्त होने के लिए नही। और इसके स्वाभाविक परिणाम फलित होने शुरू हुए है। सारे लोग अगर महत्वाकाक्षी हो जायेंगे तो जीवन एक द्वद्व और सघर्ष के अतिरिक्त कुछ भी नही हो सकता है। अगर सारे लोग अपनी महत्वाकाक्षा के पीछे पागल हो जायेगे तो जीवन एक बडे युद्ध के अतिरिक्त और कुछ भी नही हो सकता है।

पुराने जमाने के लोग अच्छे नही थे। आज के जमाने के लोग बुरे नही हो गये हैं। यह भ्रांति है बिल्कुल कि पहले के जमाने के लोग अच्छे थे और आज के लोग बुरे हो गये हैं। यह भी भ्राति है कि पहले जमाने के युवक अच्छे थे और आज के युवक पतित हो गये हैं और चरित्रहीन हो गये हैं। झूठी हैं ये बाते,

इनमें कोई भी तथ्य नहीं है। लेकिन एक फर्क जरूर पड़ा है। पुराने जमाने का जवान शिक्षित नहीं था, उसकी महत्वाकाक्षा बहुत कम थी। आज की दुनिया का युवक शिक्षित है। उसकी महत्वाकाक्षा की अग्नि मे घी डाला गया है। वह पागल होकर प्रज्ज्वलित हो उठी है और जितनी जोर से शिक्षा बढती जायेगी उतनी ही जोर से यह विक्षिप्तता और पागलपन भी बढता जायेगा। शिक्षा के साथ-साथ मनुष्य का पागलपन भी विकसित हो रहा है।

अतीत के लोग अशिक्षित थे, बेपढे लिखे लोग थे। उनकी महत्वाकाक्षा धीमे धीमे जलती थी। आज के युग की शिक्षा ने आदमी को, उसकी महत्वा-काक्षा को बहुत प्रज्ज्वलित कर दिया है। पहले कभी कोई एकाध आदमी पागल हो जाता था और सिकदर बनने की कोशिश करता था। अब सब आदमी पागल हैं और सभी सिकदर होना चाहते हैं। और हम सिकन्दर और पागल बनाने की इस कोशिश को शिक्षा का नाम देते है।

मैंने पुरानी से पुरानी किताबें देखी हैं और मै देखकर हैरान हो गया। चीन मे सभवत दुनिया की सबसे पुरानी किताब है जो साढे छ हजार वर्ष पुरानी है और उस किताब की भूमिका मे लिखा हुआ है कि आजकल के लोग बिल्कुल बिगड़ गये हैं, पहले के लोग बहुत अच्छे थे। मैं बहुत हैरान हुआ। वह भूमिका इतना आधुनिक मालूम पडती है कि लगता है आजकल के किसी लेखक ने किताब लिखी हो। साढे छ हजार वर्ष पहले कोई लिखता है कि आजकल के लोग बिगड गये हैं, पहले के लोग अच्छे थे! यह पहले के लोग कब थे?

आज तक जमीन पर एक भी किताब ऐसी नही है जिसमे यह लिखा हो कि आजकल के लोग अच्छे हैं। हर किताब कहती है कि पहले के लोग अच्छे थे। यह पहले की बात बिल्कुल कल्पना, बिल्कुल असत्य है। अगर पहले के लोग अच्छे थे तो ढाई हजार वर्ष पहले बुद्ध ने किन लोगो को सिखाया कि चोरी मत करो, झूठ मत बोलो हिंसा मत करो? किन लोगो को सिखाई है यह बात? अगर पहले के लोग अच्छे थे तो महाभारत कौन कराता था और सीता को कौन चुरा ले जाता था? और अगर पहले के लोग अच्छे थे तो दुनिया मे यह जो उपदेशक हुए जीसस क्राइस्ट, कृष्ण, बुद्ध और कन्फ्यूसियस इन्होने किन लोगो के सामने अपनी बातें समझाई? ये किनके लिए रोते थे? इनके हृदय में किनके लिए वेदना थी? ये किनसे कहते रहे कि तुम अच्छे हो जाओ? तो फिर ये सारे लोग पागल थे कि लोग अच्छे थे और ये व्यर्थ

ही उपदेश दिये जाते थे। अगर यहा सभी लोग सच बोलने वाले हो और मै आकर समझाने लगू कि आपको सच बोलना चाहिए तो लोग हसेगे कि आप किसको समझा रहे है ! यहा तो सभी लोग सच बोलते ही है ।

दुनिया भर के शिक्षको की शिक्षाए यह कहती है कि लोग कभी भी अच्छे नही थे । जो फर्क पडा है वह इस बात मे नही पडा कि लोग बुरे हो गये है । फर्क यह पडा है कि बुरे लोग शिक्षित हो गये है और शिक्षा ने बुरे लोगो को अपनी बुराई से बचाने के लिए कवच का रूप ले लिया है। शिक्षा उनकी बुराई को बचाने का माध्यम हो गई है। शिक्षा उनकी बुराई को बढाने का माध्यम हो गई है । शिक्षा उनकी बुराई की जडो को पानी डालने का कारण बन गई है। लोग बुरे नही हो गये लेकिन बुरे लोग ज्यादा सबल और ज्यादा शक्तिमान हो गये है और उनके हाथ मे शिक्षा ने बडे अस्त्र शस्त्र दे दिये है ।

एक बुरा आदमी हो और उसके पास तलवार न हो और एक बुरा आदमी हो उसके हाथ मे एटम बम आ जाय तो जिसके हाथ मे एटम बम है वह बहुत बडी बुराई कर सकेगा और शायद तब हम सोचेंगे जिनके पास एटम बम नही था वे बडे अच्छे लोग थे। उनके हाथ मे पत्थर थे तो उन्होने पत्थर फेके थे और एटम बम उनके हाथ मे आ गया तो वे एटम बम फेक रहे है । फेकने वाले वही के वही है। केवल फिकने वाली चीज की ताकत बढ गई है ।

आदमी शिक्षित हुआ है और शिक्षा गलत है। आदमी बुरा हमेशा से था । शिक्षा ने बुराई को हजार गुनी ताकत दे दी है। कहते है न, 'करेला नीम पर चढ जाये तो और कडवा हो जाता है ।' बुरे आदमी शिक्षा की नीम पर चढ गये। करेला तो पहले से ही कडवा था और शिक्षा की नीम ने और कडवा कर दिया है । और यह भी मत सोचना कि आज की शिक्षा ही गलत है, आज तक की सारी शिक्षा गलत रही है। यह भी मत सोचना कि पश्चिम के लोगो ने आकर शिक्षा गलत कर दी है। यह भूल से मत सोचना। शिक्षा हमेशा से गलत रही है । और यह भी मत सोचना कि विद्यार्थी गलत हो गये है। सब विद्यार्थी और सब गुरु हमेशा से गलत रहे है।

द्रोणाचार्य का नाम हम भलीभाति जानते है। अपने एक अमीर शिष्य के पक्ष मे गरीब शूद्र का अगूठा काट लाये थे। वे गुरु थे ! एकलव्य से

इसलिए अगूठा माग लिया था कि अगूठा दे दे तू, क्योकि एकलव्य था शूद्र, गरीब और दरिद्र। और अर्जुन था धनपति, सम्राट, राजकुमार। अगर एकलव्य धनुर्विद्या मे बडा हो जाय तो अर्जुन को कोई पूछेगा ही नही दुनिया मे। तो उस गरीब शूद्र लडके से अगूठा कटवा लिया ताकि अमीर शिष्य आगे बढ जाये। पहले से ही गुरु गरीब शिष्यो के अगूठे काटते रहे हैं यह कोई आज की बात नही है। लेकिन एक फर्क पड गया है। पुराना एकलव्य सीधा सादा था। उसने अगूठा दे दिया था। नये एकलव्य अगूठा देने से इन्कार कर रहे हैं। वे कहते हैं, 'हम अगूठा नही देगे' और वे कहते हैं कि यदि ज्यादा कोशिश की तो हम तुम्हारे अगूठे काट लेगे। यह फर्क पड गया है। इसके अतिरिक्त और कोई फर्क नही पडा है।

यह जो स्थिति है, यह जो आदमी की आज दशा है उससे चिन्ता होती है। हर तरफ विद्यार्थी आग लगा रहे हैं, पत्थर फेंक रहे हैं मकान तोड रहे हैं, यह कोई सामान्य घटना नही है। और यह घटना आज के विद्यार्थियो भर से सम्बन्धित नही है। यह पाच हजार वर्ष का युवको का रोष है जो इकट्ठा हो कर चरम सीमा पर पहुच गया है। यह पाच हजार वर्ष की गल्त शिक्षा का अतिम फल है। यह पाच हजार वर्षों के शोषण—यह पाच हजार वर्षों के दमित युवक के मन की पीडा और वेदना है और आज उसने वह जगह ले ली है कि अब उस वेदना को कोई ठीक मार्ग नही मिल रहा है तो वह गल्त मार्गों से प्रकट हो रही है।

असल बात यह है कि युवक मकान तोडना नही चाहता है। कौन पागल होगा जो मकान तोडेगा? क्योकि मकान अन्तत किसके टूटते हैं? बूढो के नहीं टूटते है, हमेशा युवको के ही टूटते है। क्योकि बूढे कल विदा हो जाएगे और मकान युवको के हाथ मे पडेगे। फिर कौन मकान तोडना चाहता है? कौन काच तोडना चाहता है? कौन बसे जलाना चाहता है? कोई नही जलाना चाहता। शायद मन के भीतर किन्ही और चीजो को जलाने की तीव्र भावना पैदा हो गई है और समझ मे नही आ रहा है कि हम किस चीज को जलायें तो हम किसी भी चीज को जला रहे हैं। सारे अतीत को जलाने का ख्याल आज मनुष्य के भीतर पैदा हो रहा है और समझ मे नही आ रहा है कि हम क्या जलाये, हम क्या करे, हम क्या तोड दे? कोई चीज तोडने जैसी हो गई है। कोई चीज मिटाने जैसी हो गई है। कोई चीज बिल्कुल जलाने जैसी हो गई है। हर युग मे कुछ चीजें जला देनी पडती हैं ताकि हम अतीत मे

मुक्त हो जायें और आगे बढ़ जायें, ताकि परम्पराओं से मुक्त हो जायें और जीवन गतिमान हो सके। नदी जब समुद्र की ओर दौडती है तो न मालूम कितने पत्थर तोडने पडते हैं, कितनी मार्ग की बाधाए हटानी पड़ती हैं, कितने दरख्त गिरा देने पड़ते हैं, तब कहीं रास्ता बनता है और नदी समुद्र तक पहुचती है।

हजारो हजारो साल से मनुष्य की चेतना को रोकने वाली बहुत सी चीजें पत्थरो की दीवाल की तरह खडी हैं। आजतक आदमी ने विचार नही किया उन्हे तोड डालने का। लेकिन जैसे जैसे मनुष्य की चेतना में समझ, बोध और विचार का जन्म हो रहा है वैसे ही एक तीव्र वेदना, एक तीव्र आन्दोलन सारे जगत मे प्रकट हो रहा है। युवक नासमझ है कि वह कुछ भी तोडने मे लग गया है। लेकिन फिर भी मुझे बडी खुशी होती है और मेरे हृदय मे बडा स्वागत है कि कम से कम उसने तोडना तो शुरू किया। आज गलत चीजें तोडता है कल ठीक चीजें तोडने के लिए हम उसे राजी कर लेंगे। अभागे तो वे युवक थे जिन्होने कभी कुछ तोडा ही नही। तोडने की सामर्थ्य एक बार पैदा हो जाय तो तोडने की शक्ति को दिशा दी जा सकती है। एक बार विध्वस की शक्ति आ जाय तो उस शक्ति को सृजनात्मक बनाया जा सकता है। क्योकि स्मरण रहे जो लोग तोड ही नहीं सकते वे बना भी कैसे सकते हैं। और ख्याल रहे सृजन का पहला सूत्र विध्वस है। बनाने के पहले तोड देना पडता है।

एक गाव था। और उस गाव मे एक बहुत पुराना चर्च था। वह चर्च इतना पुराना हो गया था जैसे कि सभी चर्च पुराने हो गये हैं, सभी मदिर पुराने हो गये हैं। वह बहुत पुराना हो गया था। उसकी दीवाले इतनी जीर्ण हो गई थीं कि उस चर्च के भीतर भी जाना खतरनाक था। वह किसी भी क्षण गिर सकता था। आकाश मे बादल आ जाते और आवाज होती तो चर्च कापता था। हवाए चलती थी तो चर्च कापता था। हमेशा डर रहता कि चर्च कभी भी गिर सकता है। चर्च मे जाना तो दूर, पडोस के लोगो ने भी पडोस मे रहना छोड दिया था। डर था कि चर्च किसी भी दिन गिर जाएगा और प्राण ले लेगा। चर्च के सरक्षक गाव भर मे पूछते कि आप लोग चर्च क्यो नही चलते हैं? क्या अधार्मिक हो गये हैं? क्या ईश्वर को नही मानते हैं? लेकिन कोई भी इस बात को नही पूछता था कि कही ऐसा तो नहो है कि चर्च बहुत पुराना हो गया है और उसके नीचे केवल वे ही

जा सकते हैं जिनकी कब्र मे जाने की तैयारी है, जो बिल्कुल बूढा हो गये हैं, जिनको अब मरने से कोई डर नही है। जवान उस चर्च मे नही जा सकते जो इतना गिरने के करीब है। आखिर सरक्षक घबरा गये और उन्होने एक कमेटी बुलायी और सोचा कि अब अगर कोई आता ही नही इस पुराने चर्च मे तो उचित होगा कि हम नया चर्च बना ले। उन्होने चार प्रस्ताव पास किये उस कमेटी मे उन पर जरा गौर कर लेना क्योकि उनका बडा अर्थ है।

उन्होने चार प्रस्ताव किये। पहला सकल्प और पहला प्रस्ताव उन्होने यह किया कि पुराने चर्च को गिरा देना चाहिए। सबने कहा कि यह बिल्कुल ठीक है। सब एक मत से राजी हो गये। दूसरा प्रस्ताव उन्होने यह किया कि हमे इसकी जगह एक नया चर्च बनाना चाहिए लेकिन ठीक उसी जगह जहा पुराना चर्च खडा है और ठीक वैसा ही जैसा पुराना चर्च है। इस पर भी सभी लोग राजी हो गये। तीसरा प्रस्ताव उन्होने यह किया कि हमे पुराने चर्च मे जो जो सामान लगा है उसी सामान मे नया चर्च बनाना है। दरवाजे भी वही, इ टे भी वही। पुराने चर्च के सारे सामान से यह नया चर्च बनाना है। इस पर भी सब लोग राजी हो गये। और चौथा प्रस्ताव उन्होने यह पास किया कि जब तक नया चर्च न बन जाये तब तक पुराना चर्च गिराना नही है।

वह चर्च अभी भी खडा हुआ है। वह हमेशा खडा रहेगा। वह कभी नही गिर सकता क्योकि वे प्रस्ताव पास करने वाले बडे होशियार थे।

आदमी की जिन्दगी पर भी पुराने चर्चों का बहुत भार है। पुरानी परम्पराओ का, पुराने मदिरो का, पुराने शास्त्रो का, पुराने लोगो का। अतीत जकडे हुए है मनुष्य के भविष्य को। पीछे की तरफ हमारी टाग कसी हुई है किन्ही जजीरो से और आगे की तरफ हम मुक्त नहीं हो पाते तो प्राण तडफडा उठते है कि तोड दो सब। और जब कोई उत्सुक हो जाता है तोडने को तो वह यह भूल जाता है कि हम क्या तोड रहे है।

युवक तोड रहे है यह तो खुशी की और स्वागत की बात है, लेकिन गलत चीजे तोड रहे है यह दुख की बात है। कुछ और जरूरी चीजे है जो तोडनी चाहिये। मुल्क के नेता और मुल्क के अगुवा यही चाहते हैं कि युवक गलत चीजे तोडते रहे ताकि उन्हे कही ठीक चीजें तोडने का ख्याल न आ जाये। वे भी यही चाहते हैं, यद्यपि वे समझाते हैं कि चीजें मत तोडो, बस मे आग मत लगाओ, मकान मत जलाओ। वे समझाते हैं कि यह बहुत बुरा हो

रहा है लेकिन हृदय के बहुत गहरे कोने में वे यही चाहते हैं कि युवकों का मन व्यर्थ की चीजें तोड़ने में लगा रहे ताकि सार्थक चीजो के तोडने तक उनका ख्याल न चला जाये। इसलिए जब कोई गल्त चीजें तोड रहा है तो वह यह न सोचे कि उससे जिन्दगी बनेगी। वह गल्त लोगो के हाथ मे खेल रहा है इसका उसे पता ही नही है।

नेता हमेशा मुल्क की चेतना को, देश के मन को गल्त चीजो मे उलझा देना चाहते हैं। और इस बात के पीछे बहुत गहरी चालाकी है। चालाकी यह है कि अगर लोगो को गल्त चीजो मे उलझा दिया जाय तो ठीक चीजें तोडने से उन्हे रोका जा सकता है। उनकी ताकत व्यर्थ की चीजो को नष्ट करने मे समाप्त हो जाती है। और न केवल ताकत समाप्त हो जाती है बल्कि व्यर्थ चीजे तोडकर वे खुद पश्चात्ताप से भर जाते हैं और तब उनकी तोडने की हिम्मत क्षीण हो जाती है। उनका अन्त करण कहने लगता है, यह सब गल्त हो रहा है। उनके पास भी यह आत्मबल नही होता है कि वे यह कह सके कि हमने इस बस मे आग लगाई है तो कुछ ठीक किया है। उनके पास यह आत्मबल नही हो सकता है। गल्त चीजे टूटने से कुछ बिगडता नहीं, उल्टे तोडने वाले का आत्मबल नष्ट होता है और उसकी तोडने की क्षमता नष्ट होती है। उसकी तोडने की शक्ति व्यर्थ की चीजो मे उलझकर समाप्त हो जाती है।

उनसे ज्यादा से ज्यादा खतरा तभी तक होता है जब तक वे विश्वविद्यालय मे पढ रहे है। उसके बाद उनसे कोई खतरा नही होता, क्योकि उनकी पत्निया, उनके बच्चे उनके सारे खतरे के लिए 'शॉक एब्जार्बर' का काम करने लगेगे। फिर उनसे कोई खतरा नही है। एक बार उनकी शादी हो जाये तो उनसे कोई खतरा नही है। और मै आपसे यह भी कह देता हू, जैसा मैने आपसे कहा कि युवक शिक्षित हो गया है इसलिए खतरा बढा है, दूसरी बात, शादी की उम्र बडी हो गई है, इससे भी खतरा बढा है। क्योकि शादिया बहुत पुराने दिनो से आदमी के भीतर विद्रोह की क्षमता को तोडने का काम करती रही है, जो विद्रोही चेतना है उसको नष्ट करने का काम करती रही हैं। पुराने लोग इस मामले मे बडे होशियार थे। दस बारह साल के लडकियो और लडको को विवाहित कर देते थे। उसके बाद उनसे विद्रोह की कोई सम्भावना नही रह जाती थी, वे उसी वक्त से बूढे होने शुरू हो जाते थे। असल मे वे जवान हो ही नहीं पाते थे।

सारी दुनिया में शिक्षा के साथ दूसरा तत्त्व यह है कि विवाह की उम्र लम्बी हो गई है। चौबीस वर्ष और बीस वर्ष के युवक और युवतिया अविवाहित हैं। ये दिन विद्रोह की क्षमता के विकसित होने के क्षण हैं। उनके ऊपर कोई बन्धन नही। ये क्षण हैं, जब वे विद्रोह की सोच सकते हैं, जब उनकी आत्मा किन्हीं चीजो को गल्त कह सकती है।

अमरीका के मनोवैज्ञानिको ने सलाह दी है कि अमरीका मे फिर छोटी उम्र मे शादी शुरू कर देनी चाहिए। अगर चीजो को बचाना है कि युवक उन्हे तोड न दें, तो उनकी शादी जल्दी हो जानी चाहिए। क्योंकि तब उनकी सारी ताकत नमक, तेल लकडी जुटाने मे समाप्त हो जाती है। फिर उनसे कुछ भी नही हो सकता। जवानी मे वे नमक-तेल-लकडी जुटाते हैं, बुढापे मे स्वर्ग, परलोक वगैरह की व्यवस्था के लिए भजन कीर्तन करते है। फिर उनसे कोई विद्रोह नही हो सकता। विद्रोह के क्षण हैं उनके पच्चीस वर्ष मे पहले के क्षण।

दुनिया मे जो इतनी चीजे टूट रही हैं उसके पीछे ये कारण है। लेकिन मेरे मन मे इससे दुःख नहीं है कि चीजे टूट रही हैं। मै मानता हू कि बडे शुभ लक्षण हैं, ये बडे शुभ समाचार हैं। दुःख इस बात का है कि गल्त चीजे टूट रही हैं। बहुत जरूरी चीजे है जिन्हे तोड देना चाहिए। और उन जरूरी चीजो मे मे पहली चीज यह है कि हमे उस दुनिया को जो महत्वाकाक्षा के आधार पर खडी है, बदल देना चाहिए। महत्वाकाक्षा के आधार पर खडी हुई दुनिया को तोड देना चाहिए और एक गैर महत्वाकाक्षी (Non-ambitious) समाज का निर्माण करना चाहिए। यह क्यो? यह इसलिए कि महत्वाकाक्षा के आधार पर खडा हुआ जगत हिंसा, दुःख और पीडा का ही जगत हो सकता है। उसमे न तो प्रेम हो सकता है, न आनन्द हो सकता है, न शाति हो सकती है।

महत्वाकाक्षा का अर्थ क्या होता है? महत्वाकाक्षा का अर्थ होता है दूसरो से आगे निकल जाने की दौड। बचपन से हमे यही सिखाया जाता है, पहली कक्षा से यही सिखाया जाता है कि दूसरे से आगे निकल जाओ, प्रथम आ जाओ। प्रथम आना ही एकमात्र मूल्य है। जो युवक प्रथम आ जाएगा, जो बच्चा पहले आ जाएगा वह पुरस्कृत होगा, सम्मानित होगा। जो पीछे छूट जायेंगे वे अपमानित हो जायेंगे। यह दुनिया इतनी उदास कभी नहीं होती,

लेकिन हमे पता ही नहीं है कि हम कैसी मनोवैज्ञानिक महत्वाकांक्षाए रख रहे है मनुष्य के लिए। एक स्कूल मे अगर हजार बच्चे पढ़ते हैं तो आखिर कितने बच्चे प्रथम आयेंगे ? दस बच्चे प्रथम आयेगे और नौ सौ नब्बे बच्चे पीछे रह जाएगे।

दुनिया कौन बनाता है ? प्रथम होने वाले दुनिया बनाते हैं या हारे हुए, पीछे रह जाने वाले लोग दुनिया बनाते हैं ? दुनिया किनसे बनती है ? दुनिया के सगठक कौन हैं ? दुनिया के सगठक हैं पराजित लोग। हारे हुए लोग, दु खी लोग जो प्रथम नहीं आ सके वे लोग। और जब पहली ही कक्षा से बच्चे को निरन्तर पीछे रहना पडता है तो उसके जीवन मे आत्मग्लानि, हीनता, दीनता सब पैदा हो जाती है। ये दीनहीन लोग दुनिया के सगठक हैं। इनकी बड़ी सख्या होगी ये दुनिया को बनायेगे, जिनको जीवन ने कोई सम्मान नही दिया, कोई आदर नही दिया।

आप कहेगे कि कौन इन्हे रोकता था, ये भी प्रथम आ सकते थे। ठीक कहते हैं आप। कोई नही रोकता है। ये भी प्रथम आ सकते थे। लेकिन तीस लडको मे कोई भी प्रथम आये, एक ही लडका प्रथम आयेगा। उन्तीस हमेशा पीछे रह जायेंगे। उन्तीस दुखी होगे। एक प्रसन्न होगा। कोई भी एक प्रसन्न हो, यह सवाल नही है कि कौन एक प्रसन्न होता है। लेकिन उन्तीस दुखी होगे। उन्तीस के दुख पर एक व्यक्ति का सुख निर्भर होगा और उन्तीस बच्चे दुख लेकर जीवन मे प्रविष्ट होगे। हारे हुए लोग, पराजित लोग। महत्वाकाक्षा ने सारी दुनिया को दीनहीन बना दिया है। एक ऐसा समाज और एक ऐसी शिक्षा और एक ऐसी सस्कृति चाहिए जहा प्रथम आने के पागलपन से आदमी का छुटकारा हो गया हो, नही तो दुनिया मे युद्ध नहीं रुक सकते, क्रोध नही रुक सकता। जब कोई आदमी बहुत क्रोध, दुख और विषाद से भर जाता है तो वह सारी दुनिया से बदला लेता है—इस बात का कि मुझे दुख दिया है इस दुनिया ने, मुझे कोई सम्मान नही दिया, मुझे कोई पुरस्कार नही दिये, मुझे कोई आदर नही दिया, मुझे कोई पदवी नहीं दी। वह सारी दुनिया के प्रति क्रुद्ध हो उठता है, क्रोध से भर जाता है। यह क्रोध निकल रहा है सब तरफ से वह बहकर।

क्या ऐसा नही हो सकता है कि हम एक ऐसी शिक्षा विकसित करे जो व्यक्ति को प्रतिस्पर्धा मे नहीं, आत्म-परिष्कार मे ले जाती हो। इन दोनो बातो मे भेद है। इस सूत्र को ठीक से समझ लेना जरूरी है। एक स्थिति तो यह है

कि मै दूसरे लोगो से आगे निकलने की कोशिश करू और दूसरी स्थिति यह है कि मै रोज अपने आपसे आगे निकलने की कोशिश करू। मै जहा कल था, आज उससे आगे बढ जाऊ। मेरी तुलना मेरे अतीत से हो, किसी पडोसी से नही। मै रोज खुद को पार करू, खुद को अतिक्रमण करू। कल सूरज ने मुझे जहा छोडा था डूबते वक्त, आज का उगता सूरज मुझे वही न पाये। मै आगे बढ जाऊ। कल रात सूरज बिदा हुआ था तब खेतो मे जो पौधे लगे थे आज सुबह आप उनको वहीं पायेंगे। वे आगे बढ गये है, लेकिन किस से आगे बढ गये हैं ? किसी दूसरे से ? नहीं, अपने से आगे बढ गये है। किसी दूसरे से कोई प्रयोजन नही है प्रकृति मे। सारी प्रकृति किसी दूसरे से प्रतिस्पर्धा मे नहीं है सिवाय मनुष्य को छोडकर।

एक गुलाब का फूल खिल रहा है एक बगिया मे। उसे कोई प्रतिस्पर्धा नहीं है कि चमेली का फूल कैसे खिला है और कमल का फूल कैसे खिला है। गुलाब का फूल खिल रहा है अपनी खुशी मे। उसका पुष्पित होना उसकी अपनी आतरिक बात है। आदमी भरके फूल गडबड हो गये हैं। वह हमेशा दूसरो की तरफ देख रहे हैं कि दूसरे के खिलने से मै कितना आगे निकलता हू और वह कितने पीछे रह जाता है। अपनी खुद की 'सेल्फ फ्लावरिंग' का कोई ख्याल ही नही है। इससे एक पागलपन पैदा होता है। वह पागलपन ऐसा है कि अगर मै किमी बगिया मे चला जाऊ और गुलाब से कहू कि पागल क्या तू गुलाब ही होकर नष्ट हो जाएगा ? कमल नही होना है ? कमल का फूल बहुत शानदार होता है, कमल हो जा तो पहली बात यह है कि गुलाब मेरी बात ही नही सुनेगा। वह हवाओ मे डोलता रहेगा, मेरी बात उसे सुनाई नही पडेगी, क्योकि फूल आदमियो जैसे नासमझ नहीं होते कि किसी ने भी बुलाया और सुनने को आ गये। फूल इतने नासमझ नही होते कि सुनने को राजी हो जाये। अव्वल तो फूल सुनेगे नही, लेकिन हो भी सकता है, आदमी के साथ रहते रहते उसकी बीमारिया फूलो को भी लग सकती हैं। बीमारिया सक्रामक होती हैं। बीमारिया छूत की होती है। हा सकता है आदमी की बगिया मे लगे लगे फूलो मे गडबडी आ गई हो और वह भी उपदेश सुनने लगे हो तो मेरी बात अगर वह फूल मान लेगे तो फिर क्या होगा ?

उस गुलाब के फूल को अगर मेरी बात पकड गई, यह ज्वर पकड

गया कि मुझे कमल का फूल हो जाना है या कमल के फूल से आगे निकल जाना है तो पागल हो जायगा वह गुलाब का पौधा। फिर उसमे फूल पैदा नहीं होगे। क्योकि गुलाब से गुलाब ही पैदा होते हैं कमल पैदा नही हो सकता। यह उसकी आन्तरिक विवशता है, वह कुछ और नही हो सकता। गुलाब का फूल गुलाब ही हो सकता है। चमेली चमेली ही हो सकती है चम्पा चम्पा ही हो सकती है, घास का फूल घास का फूल ही हो सकता है, कमल का फूल कमल का फूल ही हो सकता है। लेकिन अगर यह पागलपन चढ जाय कि चम्पा चमेली होने की कोशिश करे, गुलाब कमल होने की, तो फिर उस बगिया मे फूल पैदा होने बन्द हो जायेगे। गुलाब कमल तो हो ही नही सकता है, लेकिन कमल होने की कोशिश मे गुलाब भी नही हो सकता।

आदमी की बगिया मे फूल इसीलिए पैदा होने बन्द हो गये हैं। काटे ही काटे पैदा होते हैं, वहा फूल पैदा होते ही नही। क्योकि कोई आदमी स्वय होने की कोशिश मे नही है। हर आदमी कोई और होने की कोशिश मे है, किसी और को पार करने की चेष्टा मे लगा हुआ है। शिक्षा हर आदमी को खुद होने का ख्याल नही देती। हमारी शिक्षा कहती है, देखो वह आदमी आगे निकल गया है, तुमको भी वैसे हो जाना है। देखो वह आदमी दिल्ली पहुच गया है, तुमको भी दिल्ली पहुच जाना है। देखो वह आदमी पहुचा जा रहा है आगे, तुम कहा पीछे रहे जाते हो। दौडो। इस तरह सब तरफ से महत्वाकाक्षा पैदा की जाती है। राजनैतिक रूप से महत्वाकाक्षा पैदा करते हैं कि देखो राधाकृष्णन् स्कूल मे शिक्षक थे वे राष्ट्रपति हो गये। अब सारे शिक्षको मे आग पैदा करो कि तुम भी दौडो और राष्ट्रपति हो जाओ। तुम भी पागल हो जाओ और शिक्षक दिवस मनाओ कि बडे सम्मान की बात हो गई कि एक शिक्षक राष्ट्रपति हो गया।

मुझे भी एक शिक्षक दिवस पर भूल से बोलने के लिए बुला लिया गया। भूल से कोई बुला लेता है बोलने के लिए। मैने उन शिक्षको को कहा कि मित्रो! अभी शिक्षक दिवस मनाने का वक्त नहीं आया है। एक शिक्षक राष्ट्रपति हो जाय इसमे शिक्षको का कौन सा सम्मान है? जिस दिन कोई राष्ट्रपति कहे कि मै स्कूल मे आकर शिक्षक होना चाहता हू उस दिन शिक्षक दिवस मनाना। उस दिन कहना कि हम धन्य हुए कि एक राष्ट्रपति ने कहा है कि हम शिक्षक होने को तैयार है। लेकिन एक शिक्षक राष्ट्रपति होना चाहे इसमे शिक्षक का क्या सम्मान है? इसमे राजनीतिज्ञ का सम्मान है, पद का

सम्मान है, दिल्ली का सम्मान है, राज्य का सम्मान है। इसमें शिक्षक का कौन सा सम्मान है ?

लेकिन हम कहते हैं देखो यह हुआ जा रहा है तुम भी दौडो। राजनैतिक रूप से हम आदमी को ज्वर से भरते हैं। दौडो, आगे दौडो। दूसरे को पीछे छोड़ो और आगे बढ़ जाओ। ऐसे ही यह हम धार्मिक रूप से, नैतिक रूप से लोगो को सिखलाते हैं कि गाधी बन जाओ, बुद्ध बन जाओ, महावीर बन जाओ। ये झूठी बातें हैं। जहर फैला रहे हैं आदमी के दिमाग मे। कोई आदमी कभी गाधी बन सकता है ? कोई आदमी कभी बुद्ध बन सकता है ? और बन सके तो भी बनने की जरूरत कहा है ? एक आदमी काफी है अपने जैसा। दूसरे आदमी को वैसे होने की जरूरत नही है। एक गाव मे अगर एक ही जैसे बीस हजार गाधी पैदा हो जायें तो उस गाव की मुसीबत समझ सकते हैं। उस गाव मे इतनी ऊब पैदा हो जाएगी, इतनी घबराहट पैदा हो जाएगी कि लोग आत्महत्या कर लेंगे। जीना मुश्किल हो जाएगा। एक गाधी बहुत प्यारे हैं। एक बुद्ध बहुत अद्‌भुत हैं। एक राम बहुत शानदार हैं। एक कृष्ण बेमुकाबला हैं, कोई मुकाबला नही है उनका। बडे खूबी के लोग हैं, लेकिन अगर एक ही गाव मे एक ही जैसे राम ही राम धनुष बाण लिये हुए खडे हो तो हो गई कठिनाई। रामलीला करनी हो तब तो ठीक है लेकिन अगर असली मामला हो तो बहुत गडबड है।

कोई आदमी दोबारा दोहराये जाने की जरूरत नही है। पुनरावृत्ति (Repetition) की कोई जरूरत नहीं है। हर आदमी खुद होने को पैदा होता है, कोई और होने को पैदा नही होता। लेकिन अब तक हम शिक्षक को इस बात के लिए राजी नहीं कर पाये कि वे बच्चो से कह सके कि तुम कुछ और होने की कोशिश मत करना, तुम खुद हो जाना।

जीवन मे जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात है वह है स्वय होने की क्षमता को उपलब्ध हो जाना। और जो आदमी दूसरे जैसे होने की कोशिश करेगा उस आदमी का पागल हो जाना सुनिश्चित है। क्योकि दूसरे जैसा वह हो नही सकता। इसलिए दुनिया मे जितनी यह शिक्षा बढती है, आदर्श बढ़ते हैं उतना ही पागलपन बढता है। इसमे किसी और का कसूर नही। शिक्षा बुनियादी रूप से गल्त है। जितना आदमी शिक्षित होता है उतना दूसरे होने की दौड मे लग जाता है कि मै कोई और हो जाऊ, कोई बन जाऊ, मै कुछ और हो जाऊ। खुद से, स्वय से उसकी कोई तृप्ति नहीं होती। वह कोई और होना

चाहता है। जब भी कोई आदमी कोई और होना चाहता है तब आदमी अपने होने से च्युत हो जाता है। वह मार्ग से भटक जाता है, वह कुछ और होने की दौड़ मे जो हो सकता था वह भी नहीं हो पाता है और तब जीवन मे दुख और पीड़ा पैदा होती है।

अगर कोई पूछे कि पागलपन की क्या परिभाषा है, विक्षिप्त होने का क्या मतलब है तो मेरी दृष्टि मे पागल होने की एक परिभाषा है-जो 'आदमी स्वय से भिन्न हो जाता है वह आदमी पागल है। और जो आदमी स्वय हो जाता है वह आदमी स्वस्थ है।' स्वय हो जाना स्वस्थ होना है। बस और कोई स्वास्थ्य का मतलब नहीं होता है। हिन्दी का जो शब्द है 'स्वास्थ्य', वह तो शब्द ही बहुत अद्‌भुत है। स्वास्थ्य का मतलब है स्वय मे स्थित, जो स्वय मे खड़ा हो गया वह स्वस्थ है। और वह अस्वस्थ है जो स्वय से भटक गया है, यहा-वहा चला गया है। हम सारे लोग स्वय से भटकाये जा रहे हैं। हम स्वय मे स्थित होने के लिए दीक्षित नही किये जा रहे हैं। इससे एक विक्षिप्तता पैदा हो रही है, पागलपन पैदा हो रहा है।

नेहरू जब तक जिन्दा थे, हिन्दुस्तान मे दस पच्चीस लोग थे जिनको यह ख्याल पैदा हो गया था कि हम नेहरू है। मेरे छोटे से गाव मे एक आदमी था। उसको यह वहम पैदा हो गया था कि वे जवाहरलाल नेहरू हैं। नेहरू एक पागलो की जेल देखने गये थे। एक पागल वहा स्वस्थ हो गया था, ऐसा मुश्किल से ही होता है। स्वस्थ तो अक्सर पागल होते हैं मगर पागल कम ही स्वस्थ होते देखे जाते हैं। लेकिन ऐसी दुर्घटना वहा घट गई थी, ऐक्सीडेन्ट हो गया था। एक पागल ठीक हो गया था और नेहरू उसको देखने गये थे, पागलखाने मे। पागलखाने के अधिकारियो ने सोचा कि नेहरू के हाथ से ही उसको पागलखाने से छुटकारा और मुक्ति दिलवाई जाय। नेहरू भी बहुत खुश थे कि एक आदमी ठीक हो गया है। उससे मिलकर नेहरू ने पूछा कि क्या तुम ठीक हो गये हो ? तो उसने कहा, "मै बिल्कुल ठीक हो गया हू। तीन साल पहले मै बिल्कुल पागल था। लेकिन आप कौन हैं महाशय ?" नेहरू ने कहा, 'मुझे नहीं जानते ? मै जवाहरलाल नेहरू हू।' वह आदमी यह सुन कर खूब हसने लगा। उसने कहा "तीन साल आप भी यहा रह जायें तो ठीक हो जायेंगे। तीन साल पहले मुझे भी यही ख्याल पैदा हो गया था कि मै जवाहरलाल नेहरू हू। तीन साल मे मै बिल्कुल ठीक हो गया हू। तीन साल आप भी यहा रह जायें।"

जब भी किसी आदमी को ख्याल पैदा हो जाता है कि मै कोई और हू तो समझ लेना कि वह पागल हो गया है। और जब भी कोई आदमी इस कोशिश मे लग जाता है कि मै कोई और हो जाऊ तो समझ लेना कि पागलपन की यात्रा शुरू हो गई है। इस शिक्षा ने 'मैनकाइन्ड' को 'मैडकाइन्ड' मे बदल दिया है। आदमियत एक बडा पागलखाना हो गई है। सारी जमीन पर पागलो का बडा समूह पैदा हो गया है फिर अगर ये पागल आग लगा दें, मकान तोड दें तो नाराज मत होइए। इनको हमने पागल बनाया है। हमने इन्हें इनकी आत्मस्थिति से च्युत किया है। यह जो हो सकते थे वह होने के लिए हमने इन्हे तैयार नही किया और जो नही हो सकते थे उसकी तरफ हमने इनको दौडाया है।

आदमी का मस्तिष्क इतने सूक्ष्म तन्तुओ से बना है, आदमी का मन इतना नाजुक है कि उसमे जरा भी गडबड करे तो सब नुकसान हो जाता है। आदमी का मन बहुत कोमल है। आदमी की छोटी सी खोपडी मे करोडो रेशे है। अगर आदमी की खोपडी के रेशो को निकालकर हम कतार मे फैला दे तो पूरी पृथ्वी का चक्कर लगा लेगे। एक आदमी की खोपडी मे इतने रेशे हैं। इतने बारीक सेल, इतने बारीक स्नायु और यह छोटा सा मस्तिष्क उन्हीं करोडो स्नायुओ से मिलकर बना है। सारी मशीन बहुत डेलिकेट है और इसमे जरा सी गडबडी से सब गडबड हो जाती है।

आश्चर्य है यह कि अब तक सारे मनुष्य पागल क्यो नहीं हो गये। आश्चर्य यह नहीं है कि कुछ लोग पागल हो जाये। आदमी के साथ जो किया जा रहा है, आदमी के साथ जो अनाचार हो रहा है आदमी के साथ जो व्यभिचार हो रहा है जो बलात्कार हो रहा है, आदमी के मन के साथ जो किया जा रहा है उससे अगर सारे लोग पागल हो जाये तो कोई आश्चर्य की बात नही है। क्योकि आदमी को आत्मविज्ञान मे दीक्षित नही किया जा रहा है और पराये जैसे होने की दौड मे, दूसरे को पार करने के पागलपन की दिशा मे धक्के दिये जा रहे है। इन सारे धक्को से यह उपद्रव पैदा हो गया है।

युवको को शिक्षा देने से कुछ भी नही होगा। शिक्षा को आमूल बदल देना जरूरी है। एक पूरी तरह क्रान्तिकारी कदम उठाना जरूरी है कि हम मनुष्य की महत्वाकाक्षा को ही नही बल्कि मनुष्य के भीतर जो छिपी हुई सम्भावनाए हैं उनके परिष्कार को ध्यान मे रखें। मनुष्य कहा पहुचे यह

सवाल नही है। मनुष्य जो है वह कैसे प्रकट हो जाये यह सवाल है। मनुष्य किसी मजिल को छू ले यह सवाल नही है। मनुष्य के भीतर कुछ सम्भावना रूप मे (Potentially) छिपा हुआ है, जैसे बीज के भीतर पौधा छिपा हुआ होता है। बीज को हम बो देते हैं बगीचे मे। माली बीज मे से पौधे को खीच खींचकर निकालता नही है और अगर कोई माली खीच खीच कर पौधे को निकाल लेगा तो समझ लेना कि उस पौधे की क्या हालत होने वाली है। पौधा निकलता है। माली तो सिर्फ अवसर जुटा देता है। पानी डाल देता है। बीज डाल देता है, खाद डाल देता है, बागुड लगा देता है और फिर चुपचाप प्रतीक्षा करता है कि पौधा निकले। पौधा वह कभी निकालता नही है। लेकिन हम आदमी मे से पौधे निकाल रहे हैं। उनको हम विश्वविद्यालय कहते हैं, विद्यालय कहते हैं, जिनमे आदमी के बीच मे से हम जबर्दस्ती पौधा खीच रहे हैं। कोई पौधा बाप की मर्जी से खीचा जा रहा है। कोई पौधा मा की मर्जी से खीचा जा रहा है, कोई गुरु की मर्जी से खीचा जा रहा है। इनको इजीनियर बनाओ, इनको कवि बनाओ, इनको डाक्टर बनाओ। कोई यह पूछ ही नही रहा है कि इसके भीतर छिपा क्या है? यह क्या होने को पैदा हुआ है?

मै एक घर मे ठहरा हुआ था। एक लडके ने कहा, मुझे बचाइये। मै पागल हो जाऊगा। मैने कहा, क्या मामला है। उसने कहा मेरी मा कहती है इजीनियर बनो। मेरे बाप कहते हैं डाक्टर बनो। और दोनो इस तरह खीच रहे हैं मुझे, कि न मै इजीनियर बन पाऊगा, न मै डाक्टर बन पाऊगा और मै जो बन जाऊगा उसका जिम्मा किसी पर भी नही होगा। क्योकि वे दोनो मुझे दा बनाना चाहते है। बच्चे खीचे जा रहे है, जबरदस्ती खीचे जा रहे हैं। बच्चो म कोई वृद्धि, कोई विकास नही होता। बच्चे को जबरदस्ती तनाव देकर हम उनमे से कुछ पैदा करने की कोशिश कर रहे है। इसके पहले कि उनके भीतर कुछ पैदा हो, हम जबरदस्ती खीच तानकर उन्हे तैयार करते हैं। फिर अगर वे कुरूप हो जाते हैं, उनका जीवन एक कुरूपता बन जाता है, उनका जीवन सौन्दर्य खो देता है और आनन्द खो देता है तो हम पीडित और परेशान होते है और पूछते है कलियुग आ गया है क्या? लोग खराब हो गये हैं क्या? फिर हम अपनी पुरानी किताबो मे खोजते है जिनमे लिखा हुआ है कि हां, ऐसा वक्त आयेगा जब लोग खराब हो जाएगे। तब हम निश्चिन्त हो जाते हैं। तो ठीक है, भविष्य वाणी ठीक हो गई है। ऋषि महात्मा बिल्कुल ठीक

ही कहते थे कि जमाना खराब हो जाएगा। यह खराब का जमाना आ गया है। नही, यह खराब जमाना लाया गया है, यह आया नही है। और इसे हम रोज ला रहे हैं। असल मे आसमान से कुछ भी नहीं टपकता है, हम जो लाते हैं वह आता है। हम यह स्थिति लाये हैं और इस सारी स्थिति के पीछे मनुष्य के सहज विकास का कोई ध्यान नही है। खीचने का ध्यान है। खींचो और आदमी को कुछ बनाओ। इसको तोड डालो।

हम इन्कार कर दे उस शिक्षा से जो आदमी के साथ जबरदस्ती कर रही है और कह दें यह कि चाहे हम अशिक्षित रह जायेंगे वह बेहतर है, लेकिन हम जबरदस्ती आत्मा के खीचे जाने को बरदाश्त नहीं करेंगे। अशिक्षित होने से कुछ भी नहीं बिगडता है। हजारो साल तक आदमी अशिक्षित रहा, क्या बिगड गया? वैसे कई लिहाज से फायदा था। अशिक्षित आदमी ने न एटम खोजा, न हाइड्रोजन बम खोजा। अशिक्षित आदमी हमसे ज्यादा सौन्दर्य मे जिया, हमसे ज्यादा शान्ति मे जिया, हमसे ज्यादा आनन्द मे जिया। अशिक्षित आदमी हमसे ज्यादा स्वस्थ जिया तो शिक्षित होने से क्या हो जाने वाला है? लेकिन अगर ठीक से शिक्षा मिले तो बहुत कुछ हो सकता है। अगर तीन चुनाव हो आदमी के सामने-- गलत शिक्षा, ठीक शिक्षा और अशिक्षा— तो मै कहता हू अगर गलत शिक्षा और अशिक्षा मे से चुनना हो तो अशिक्षा चुननी चाहिए। अशिक्षित रह जाना बुरा नही है लेकिन अगर ठीक शिक्षा हो सके तो जरूर बडा सौभाग्य है। और शिक्षा ठीक हो सकती है।

पहली बात शिक्षा को महत्वाकाक्षा और प्रतिस्पर्धा के केन्द्र से हटा देना चाहिए। उसकी जगह आत्मपरिष्कार और आत्म उन्नति और स्वय के सहज विकास पर बल देना चाहिये और इसकी फिक्र छोड देनी चाहिए कि हर आदमी इजीनियर बने, हर आदमी डाक्टर बने। हो सकता है कोई आदमी अच्छा चमार बनने को पैदा हुआ हो। और अगर अच्छा चमार डाक्टर बन गया तो बडे खतरे हैं। वह आदमी के साथ आपरेशन तो करेगा लेकिन वैसे जैसे जूते के साथ करता है। और हो सकता था वह अच्छा बढई बनता। जरूरत है बढई की भी, चमार की भी। लेकिन हमने जैसी गलत समाज व्यवस्था बनाई है उसमे हम डाक्टर को बहुत ऊंचा पद देते हैं। बढई को कोई पद नही देते। तो बढई को भी पागलपन शुरू होता है कि डाक्टर बनो। लेकिन बढ़ई

की अपनी जरूरत है। उसकी जरूरत किसी डाक्टर से कम नहीं है। और चमार की अपनी जरूरत है। उसकी जरूरत किसी प्राइम मिनिस्टर से कम नही है। और शिक्षक की अपनी जरूरत है और वह किसी राष्ट्रपति से कम नहीं है। जिन्दगी बहुत लोगो का एक सम्मिलित चित्र है। जिन्दगी सम्यक् सगीत है।

लिंकन जब प्रेसिडेन्ट हुआ अमरीका का, यह तो आपको पता होगा कि उसका बाप एक चमार था। जूते सीता था। लिंकन प्रेसिडेन्ट हो गया तो कई लोगो को बहुत अखरा कि चमार का लड़का प्रेसिडेन्ट हो गया। पहले दिन जब सीनेट मे लिंकन बोलने खडा हुआ तो एक आदमी ने खडे होकर यह याद दिला देना जरूरी समझा कि इस बात को कोई भूल न जाये कि वे चमार के बेटे हैं। एक आदमी ने खडे होकर कहा कि महाशय लिंकन, यह मत भूल जाना कि आप एक चमार के लडके हैं। तालिया बज गई होगी ससद मे, लोग बहुत खुश हुए होगे कि ठीक वक्त पर याद दिला दिया। लिंकन ने खडे होकर कहा, 'मेरे पिता की याद दिला कर तुमने बहुत अच्छा किया। मै बडी खुशी से भर गया हू क्योकि मै यह भी तुम्हे कह देना चाहता हू कि मेरे पिता जितने अच्छे चमार थे उतना अच्छा राष्ट्रपति मै नही हो सकूगा।' और जिन सज्जन ने यह कहा था, लिंकन ने उनसे कहा कि महाशय, जहा तक मुझे याद आता है आपके पिता भी मेरे पिता से ही जूते बनवाते थे और जहा तक मेरा ख्याल है, आपके पिता ने कभी भी शिकायत नही की है, लेकिन आपको कैसे याद आ गई बात। मेरे पिता के जूतो से कोई शिकायत है आपको? मेरे पिता के चमार होने से कोई शिकायत है आपको? यह याद दिलाने का ख्याल कैसे आ गया? मै धन्यभागी हू कि मेरे पिता एक अद्भुत चमार थे। वे कुशल कारीगर थे।

यह दृष्टि जो है जीवन को देनी जरूरी है। महत्वाकाक्षा की दृष्टि ने पद पैदा कर दिये। जीवन मे पद पैदा कर दिये हैं कि कौन ऊचा और कौन नीचा। यह महत्वाकाक्षा की शिक्षा का परिणाम (By-product) है, कि फला आदमी चूकि ज्यादा शिक्षा लेता है इसलिए ज्यादा ऊचा है, कम शिक्षा लेता है इसलिए कम ऊचा है। जो अनस्किल्ड है वह बिल्कुल किसी स्थान पर ही नही है। जीवन बहुत चीजो का जोड है। जीवन बहुत चीजो का सगीत है। एक ऐसी दुनिया बनानी है जहा सब जरूरी है, सब महत्वपूर्ण है, सब गौरवा-

न्वित है इस दुनिया को मिटा देना है, जहा थोड़े से लोगो के गौरव के लिए सारे लोगो का गौरव छीन लिया जाता है।

यह वैसी दुनिया है जैसे कोई गाव हो और उस गाव मे लोग यह तय कर लें कि दस पाच आदमियो की आखें बचा लो। बाकी सबकी आखें फोड दो। क्योकि बाकी अन्धे लोगो के बीच मे आंख वाला होना बडा आनन्दपूर्ण होगा। सब अन्धे होगे। हमारे पास आखें होगी तो बडा अच्छा होगा। और दस लोग मिलकर कुछ भी कर सकते हैं। क्योकि दस लोग जहा मिल जाते हैं वहीं राजनीति शुरू हो जाती है। दस गुण्डे मिलकर कुछ भी कर सकते हैं और यही आज तक दुनिया का दुर्भाग्य रहा है। अच्छे आदमी कभी मिलते नही, बुरे आदमी बहुत मिल जाते हैं। दस आदमी मिलकर यह तय कर लें कि नगर के सारे लोगो की आखें फोड दो ताकि कुछ लोगो को आख वाले होने का बडा आनन्द उपलब्ध हो। जरूर तुमको आनन्द ज्यादा उपलब्ध होगा। क्योंकि अधो की बस्ती मे आख वाला होना बडा आनन्द-पूर्ण, बडे अहकार की तृप्ति करता है। कुछ लोगो ने यही किया हुआ है कि कुछ लोगो को पद दे दो। सारे लोगो के पद की सारी व्यवस्थाए छीन लो ताकि पद का होना बहुत आनन्दपूर्ण हो जाए। इन दुष्टो ने, इन हिंसक लोगो ने एक पृथ्वी बना दी है जो नरक हो गई है। अगर तोडना है तो इस सबको तोड देना जरूरी है। और एक समाज, एक जीवन, एक सस्कृति निर्मित करनी है जहा हर आदमी को गौरवान्वित होने का मौका हो। जहा हर आदमी को स्वय होने का मौका और अवसर हो। जहा पर आदमी जो भी होना चाहे सम्मानित और गौरव से हो सके। जहा गुलाब के फूल भी आदृत हो और घास के फूल भी सम्मानित हो। क्योकि घास और गुलाब के फूल मे परमात्मा का कोई फासला, कोई भेद नहीं है।

जब आकाश मे सूरज निकलता है तो सूरज गुलाब के फूल देखकर यह नही कहता है कि मैं तुझे ज्यादा रोशनी दूगा। घास के फूल से यह नहीं कहता कि घास के फूल, हट, बीच मे शूद्र तू कहा यहा आ गया, तुझे रोशनी नहीं दी जा सकती। उस घास के फूल को भी सूरज उतनी ही रोशनी देता है जितनी गुलाब के फूल को। जब आकाश मे बादल घिरते हैं तो गुलाब के फूल प ही पानी नही गिरता है, घास के फूल पर भी पानी गिरता है। और घास के फूल पर गिरा हुआ पानी दुख अनुभव नहीं करता है कि कहा मेरा दुर्भाग्य

कि घास के फूल पर गिर रहा हू । और घास का फूल जब खिलता है, छोटा सा फूल जब हवाओ मे नाचता है तो उसकी खुशी किसी गुलाब के फूल से कम नहीं होती । असल मे सवाल घास के फूल का और गुलाब के फूल का नहीं है। सवाल पूरी तरह खिल जाने का है। चाहे गुलाब का फूल पूरी तरह खिल जाये, चाहे घास का फूल पूरी तरह खिल जाये । जो पूरी तरह खिल जाता है वह आनन्द को उपलब्ध हो जाता है, वह परमात्मा को उपलब्ध हो जाता है ।

छः : महायुद्ध या महाक्रांति ?

महायुद्ध या महाक्रांति

मनुष्य की आज तक की सारी ताकत जीने मे नही, मरने और मारने में लगी है। पिछले महायुद्ध मे पाच करोड लोगो की हत्या हुई। पहले महायुद्ध मे कोई साढे तीन करोड लोग मारे गये। थोडे से ही बरसो में साढे आठ करोड लोग हमने मारे हैं। लेकिन शायद मनुष्य को इससे कोई सोच-विचार पैदा नही हुआ। हर युद्ध के बाद और नये युद्ध के लिए हमने तैयारियां की हैं। इससे यह साफ है कि कोई भी युद्ध हमे यह दिखाने मे समर्थ नहीं हो पाया है कि युद्ध व्यर्थ हैं। पाच हजार वर्षों में सारी जमीन पर पन्द्रह हजार युद्ध लडे गये हैं। पाच हजार वर्षों में पन्द्रह हजार युद्ध बहुत बडी सख्या है यानी तीन युद्ध प्रति वर्ष हम करीब-करीब लडते ही रहे हैं। कोई अगर पाच हजार वर्षों का हिसाब लगाये तो मुश्किल से तीन सौ वर्ष ऐसे हैं जब लडाई नही हुई। यह भी इकट्ठे नही, एक-एक, दो-दो दिन जोडकर। तीन सौ वर्ष छोडकर हम पूरे वक्त लडते रहे है। या तो मनुष्य का मस्तिष्क विकृत है या युद्ध हमारा बहुत बडा आनन्द है अन्यथा विनाश के लिए ऐसी आतुरता और मृत्यु के लिए ऐसी गहरी आकाक्षा को समझना कठिन है। जरूर कुछ गडबड हो गई है। लेकिन आज कुछ गलत हो गया है ऐसा समझने का कोई कारण नही है। सदा से कुछ गडबड है। कोई यह कहता हो कि पहले आदमी बहुत अच्छा था तो भूल भरी बाते कहता है।

आदमी सदा से ऐसा है। ताकत इतनी उसके हाथ मे नहीं थी इसलिए इतने विकराल रूप मे वह प्रकट नही हो सका था। आज उसे मौका मिला है। विज्ञान ने शक्ति दे दी है हाथ मे। अब पूर्ण विनाश (Total destruction) हो सकता है, अब हम पूरी तरह विनाश कर सकते हैं। इरादे तो हमारे बहुत दिन से थे कि हम पूरी तरह विनाश करें लेकिन थोडे बहुत आदमियो को मार कर रुक जाते थे। हमारे साधन कमजोर थे। हिंसा करने का मन तो सदा से था लेकिन हिंसा करने की ताकत हमारी सीमित थी। आज ताकत हमारी असीमित है। आज हम सब कुछ कर सकते हैं। कोई पचास हजार उद्जन बम तैयार हैं और यह आकडा पुराना है—१९६० का। इस बीच आदमी ने बहुत विकास किया है। गगा मे बहुत पानी बह गया है। उद्जन बमो की सख्या और बढ़ी हो गयी होगी। वैसे पचास हजार उद्जन बम जरूरत से

ज्यादा है इस पूरी पृथ्वी को नष्ट करने के लिए, बहुत ज्यादा हैं। अगर इस तरह की सात जमीनें नष्ट करनी हो तो भी काफी है। तीन अरब आदमियों को मारने के लिए पचास हजार उद्‌जन बम बहुत ज्यादा हैं। बीस अरब आदमी मारने हो तो भी उनसे मारे जा सकते हैं या यह भी हो सकता है कि एक आदमी को सात-सात दफा मारने का मन हो तो मारा जा सके। हमने अंतिम तैयारी पूरी कर ली है। कोई धोखा-धड़ी न हो जाय, कोई भूल-चूक न हो जाय, एकाध दफा मारे और आदमी न मर पाये तो ऐसी व्यवस्था कर ली गयी है कि एक बार, दो बार, सात बार मारा जाय ताकि कोई भी नहीं बच पाये। वैसे आदमी एक ही दफा मे मर जाता है। आज तक का अनुभव तो यही है कि किसी आदमी को दो बार नही मारना पड़ता। लेकिन फिर भी समय और वक्त को ख्याल मे रखकर हमने इतना इन्तजाम किया है कि हम हर आदमी को सात बार मार सकते है।

किसलिए यह तैयारी है? किसलिए यह आयोजन है? जरूर आदमी के मन में कोई पागलपन है, कोई विक्षिप्तता (Insanity) है। असल मे आदमी विक्षिप्त न हो तो मिटाने की आकाक्षा पैदा नही होती। पागल का मन तोड़ने का होता है, स्वस्थ मन निर्मित करना चाहता है, सृजन करना चाहता है, कुछ बनाना चाहता है, जीवन का विकसित करना चाहता है। पागल का मन तोड़ना चाहता है, मिटाना चाहता है। क्या? पागल होता है भीतर दुखी। अपने दुख का बदला वह सबसे लेना चाहता है। भीतर आदमी दुखी होता है तो वह दूसरे को दुखी करना चाहता है। वह दुख मे है तो वह किसी का भी सुख मे देखने मे असमर्थ है। वह दुख मे है, तो वह जो भी करेगा उसमें परिणाम में दूसरे को दुख मिलेगा क्योंकि जो मेरे पास है, वही मैं दे सकता हूं। जो मेरे पास नहीं है उसे मैं नहीं दे सकता। चाहे मैं कहूं कि मैं सेवक हूं, मैं समाज का सुधारक हूं लेकिन अगर मैं भीतर दुखी हूं तो मेरी सेवा आपके गले में बोझ हो जायगी और अगर मैं दुखी हूं तो मेरा सुधार खतरनाक सिद्ध होगा। चाहे मैं यह कहूं कि मैं विश्वशांति के लिए कोशिश करता हूं लेकिन अगर मैं दुखी हूं तो मेरी शांति का सारा कोशिश युद्ध लायेगी।

सारे राजनीतिज्ञ मिलकर दुनिया मे युद्ध लाते है लेकिन कहते है हम शांति के लिए लड़ रहे है। आज तक जमीन पर कोई राजनीतिज्ञ ऐसा नही हुआ जिसने यह कहा हो कि हम युद्ध के लिए युद्ध करते हैं। सभी राजनीतिज्ञ

यह कहते हैं कि हम शांति के लिए युद्ध करते है। सभी यह कहते है कि आदमी अच्छा हो सके, जीवन सुखी हो सके इसलिए हम लडते हैं। असल मे जो भीतर दुखी है, वह जो भी करेगा उसका परिणाम शुभ और मगलदायी नही हो सकता है। हम सब दुखी है और हम सब पीडित है। दुखी आदमी एक ही सुख जानता है—दूसरे को दुख देने का सुख, और कोई सुख नही जानता। हम जिन सुखो को सोचते है कि इनसे तो किसी के दुख का कोई सम्बन्ध नहीं, वे भी किसी के दुख पर खडे होते है।

मेरे एक मित्र हैं। एक गाव मे उन्होंने मकान बनाया है। उस गाव मे सबसे बडा मकान उन्ही का था। वे बडे सुखी थे अपने मकान को लेकर। फिर अभी कोई एक और आदमी ने आकर उनके पडोस मे ही और बडा मकान बना दिया और वे दुखी हो गये। उनका मकान उतना का उतना है। मैं इस बार उनके घर मे मेहमान था तो वे दुखी थे और कह रहे थे कि मुझे बड़ा मकान बनाना अब जरूरी है। मैंने कहा, "आपका मकान उतना का उतना है, आप अप्रसन्न क्यो है? आपके मकान को तो पडोसी की छाया भी नही है?" लेकिन पडोस मे एक बडा मकान हो गया तो वह दुखी हो गये। तो मैं उनसे कहा कि अब समझ ले कि जब आप सुखी थे तो आप अपने मकान के कारण सुखी नही थे, पास मे जो झोपडे हैं, उनके कारण सुखी रहे हैं।

वह जो झोपडे वाले को हमने दुख दिये है बडा मकान बनाकर, वह है हमारा सुख। बडा मकान हमे कोई सुख नहीं दे रहा है क्योकि उससे बडा मकान खडा हो जाता है तो हम दुखी हो जाते है। एक छोटा-सा बच्चा भी अपनी कक्षा मे प्रथम आ जाता है तो कोई यह न सोचे कि उसे प्रथम आने मे सुख मिला है। तीस लोगो को पीछे छोड देने का जो दुख दिया है, उसका सुख आता है और कोई सुख नही। अगर वह अकेला हो अपनी कक्षा मे तो पहला नम्बर पास होगा लेकिन वह सुखी नही होगा लेकिन तीस बच्चो को जब वह पीछे छोड देता है तो सुखी हो जाता है।

हमारा सारा जीवन, चूकि हम दुखी है इसलिए ईर्ष्या के सिवाय और हम कोई सुख नही जानते है। और अगर सारी जमीन पर सारे लोग दूसरे को दुखी करने मे ही सुख जानते हो तो यह जमीन अगर नरक हो जाय तो इसमे आश्चर्य क्या है। यह जमीन नरक हो गयी है। सब कुछ है हमारे पास कि हम स्वर्ग बना सकते थे। लेकिन आदमी हमारा रुग्ण है इसलिए हमने नरक बना लिया है। आज जितना हमारे पास है, मनुष्य के पास कभी नही था।

आज जितनी शक्ति और सम्पदा हमारे पास है, आदमी के पास कभी भी नही थी लेकिन आदमी है रुग्ण इसलिए जो कुछ हमारे पास है वही हमारा शत्रु सिद्ध हो रहा है। और यह सभावना है कि हो सकता है दस पांच वर्षों मे ज्यादा हमारे जीवन की उम्र भी न हो। एक भी राजनीतिज्ञ का दिमाग खराब हो जाये तो सारी दुनिया के नष्ट होने के करीब हम खडे हैं। और राजनीतिज्ञ के दिमाग खराब होने मे अडचन नही है क्योकि जिसका दिमाग खराब नही होता है वह कभी राजनीति मे जाता ही नही है। किसी भी एक का दिमाग खराब हो जाये तो आज उस एक आदमी के हाथ मे इतना खतरा है कि ह सारी मनुष्य जाति को डुबा दे। मनुष्य जाति को ही नहीं, मारे कीडे मकोडो को, पशु पक्षियो को, पौधो को, सबको नष्ट कर दे।

हमारे पास जो ताकत है, आप उसकी कल्पना भी नहीं कर सकते है। उद्‌जन बमो के विस्फोट से इतनी गर्मी पैदा होगी जितनी सूरज पर है। सूरज जमीन पर उतर आये तो क्या होगा? सौ डिग्री पर पानी उबलता है और आपको उसमे डाल दें तो कैसा जी होगा? लेकिन सौ डिग्री कोई गर्मी है? १५०० डिग्री गर्मी पर लोहा पिघलकर पानी हो जाता है। आपको १५०० डिग्री गर्मी मे डाल दिया जाय आप बचेंगे? २५०० डिग्री पर लोहा भी भाप बनकर उडने लगता है लेकिन २५०० डिग्री भी कोई गर्मी नही है। उद्‌जन बम के विस्फोट से जो गर्मी पैदा होती है, वह होती है दस करोड डिग्री। उस दस करोड डिग्री की गर्मी मे क्या बचेगा? जीवन के बचने की कोई भी सभावना नहीं है। किसी प्रकार का जीवन नहीं बचेगा। यह हमारे हाथ मे है और चित्त हमारा दुखी, बेचैन और परेशान है और हम जो भी करते हैं उससे यह बेचैनी कम नही होती। यह बढती चली जा रही है। हम जो भी कर रहे हैं उससे हमारा दुख भी कम नहीं होता है, वह भी बढता चला जा रहा है। शायद हमे यह दिखायी ही नही पडता है कि दुख के पीछे क्या है? शायद हमे यह भी नही दिखायी पडता है कि कौन से मूल कारण हैं जो हमे इस पीडा मे दौडाये चले जा रहे हैं। शायद हमे ख्याल मे भी न हो कि इस सब के पीछे किन बातो का हाथ है।

और अगर वे बातें दिखायी न पडें तो हम जो भी करेंगे, हम चाहे सेवा करे, चाहे स्कूल खोलें, चाहे मरीजो के लिए अस्पताल खोलें, सब बेकार हैं, क्योकि दूसरी तरफ हम जो कर रहे हैं उससे हमारे अस्पताल रखे रह

जायेंगे, हमारी सेवाए रखी रह जायेगी। हीरोशिमा मे जिस दिन एटम गिरा, एक छोटा-सा बच्चा अपने स्कूल का बस्ता लेकर पढने के लिए घर की सीढ़िया चढ़ रहा था। होम-वर्क करना होगा उसे और एटम बम गिर गया। वह वहीं सूख कर दीवाल से चिपक गया। अपने बस्ते और किताबो के साथ राख हो गया। मुझे किसी मित्र ने तस्वीर भेजी उसकी। हमारे बच्चे जिनके लिए हम स्कूल खडे कर रहे हैं, हमारे बीमार जिनके लिए हम अस्पताल बना रहे हैं, हमारे गरीब जिनके लिए हम गरीबी दूर करने की कोशिश मे लगे हुए हैं, हमारे खेत जिनकी हम उत्पादकता बढा रहे हैं, हमारी फैक्टरिया, जिनमे हम आदमियो के लिए सामान बना रहे हैं, सब बेकार हैं क्योकि दूसरी तरफ आदमी तैयारी कर रहा है कि इन सबको वह खाक कर दे, राख कर दे, और ये दोनो काम हम कर रहे हैं। बडे स्व-विरोध (Self contradiction) मे हम हैं। एक आदमी घर मे बगिया भी लगा रहा हो और दूसरी तरफ से आग भी लगा रहा हो और यह भी ख्याल करता हो कि बगिया को सीचू और फूल आयेंगे और एक तरफ से आग भी लगा रहा हो उसी मकान मे तो उस आदमी को हम पागल नहीं तो और क्या कहेंगे ? उससे कहेंगे कि बगिया मे बेकार मेहनत कर रहे हो जब कि दूसरी तरफ से आग भी लगाये जा रहे हो।

लेकिन हम सारे लोग भी यही कर रहे हैं और हमको दिखायी नही पडता है और हमको दिखायी भी नही पडेगा क्योकि हमने कुछ ऐसी जड़ताए पाल ली हैं अपने मन मे कि दिखायी नही पड सकता। ये इतने झडे लगे हुए है। हमारा झडा सबसे ऊपर है। यह पागलपन का लक्षण है, यह युद्ध का कारण है। हमने अभी प्रार्थना की है कि हम अपने झडे को सब राष्ट्रो से ऊपर रखेंगे। सब राष्ट्र यही प्रार्थनाए कर रहे होगे। फिर क्या होगा अगर हम अपने झडे को ऊचा रखना चाहते है और दूसरा भी अपने झडे को ऊचा रखना चाहता है और तीसरा भी ? यह हमारा अहकार नही तो और क्या है कि हमारा झडा ऊचा रहे। व्यक्ति का अहकार होता है, कौम का अहकार होता है, राष्ट्र का अहकार होता है कि मेरा राष्ट्र ऊचा रहे। क्यो रहे आपका राष्ट्र ऊचा? जमीन विभाजित नही है। उस पर कही कोई रेखा नहीं है। और दुनिया का जिस दिन राजनीतिज्ञो से छुटकारा हो जायेगा उस दिन वहाँ कोई राष्ट्र भी नही होगा। राजनीतिज्ञ बडी बीमारी है, उसी की बाई प्रोडेक्ट राष्ट्र है, वह उसी से पैदा हुई बीमारी है। जब एक राष्ट्र कहेगा कि मैं हू ऊपर, और दूसरा राष्ट्र कहेगा मै हू ऊपर, मे बडा हू, मै जगत का गुरु हू और

यही जमीन है जहा भगवान जन्म लेते रहे है और यही जमीन है जहा सबसे ऊचे लोग पैदा होते है और अगर य ही बेवकूफिया जारी रहेगी तो मनुष्य युद्ध से बच नही सकता है। यह सारा पागलपन है।

व्यक्ति का अहकार तो हमे दिखायी पडता रहा है और हम एक एक आदमी से कहते है कि अहकारी मत बनो, विनम्र बनो। लेकिन राष्ट्रीय अहकार हमे आज तक भी दिखायी नही पडता और जब तक राष्ट्रीय अहकार हमे दिखायी नही पडेगा, तब तक हम युद्धो से बच नही सकेगे। आज तक जमीन इसीलिए युद्धो मे परेशान रही है कि अब तक हम राष्ट्रीय अहकार से बचने मे समर्थ नही हुए हैं। वह हमको दिखायी भी नही पडता। दिखायी नही पडने का भी कारण है। अगर कोई आदमी कहे कि म सबसे बडा आदमी हू तो बाकी सबके अहकार का चाट लगेगी और सब उसके खिलाफ खडे हो जायेंगे कि यह बडा गडबड आदमी है, बीमार या पागल है—कहता है कि सब से बडा मैं हू। लेकिन हम सब कहते है कि हमारा राष्ट्र सबसे बडा है तो किसी के अहकार को चोट नही लगती है क्योकि हम सब एक राष्ट्र के लोग हैं। दूसरे राष्ट्र के लोगो को लगती होगी चोट वह हमारे सामने नही हैं। वह तो हमारे सामने तभी आते है जब युद्ध होता है। दो राष्ट्र आमने सामने युद्ध मे खडे होते है और कभी खडे नही होते। हम सब के सामूहिक अहकार को जो जो उत्तेजना दी जाती है उसमे हम सब सहमत होते है, बडे प्रसन्न होते है। बिल्कुल ठीक कह रहे हैं कि भारत सबसे महान राष्ट्र है। हम सब खुश होते हैं क्योकि हम सब के अहकार को सामूहिक तृप्ति दी जा रही है। एक आदमी कह दे कि मै बडा हू तो हम झगडने को खडे हो जाते है। वैसे हर आदमी अपने मन मे कहता रहता है कि मै बडा हू।

गाधी इग्लैड गये थे गोलमेज कान्फ्रेस मे। उनके एक सेक्रेटरी ने बर्नार्ड शा से जाकर पूछा कि आप गाधी जी को महात्मा मानते है या नही? महात्माओ के शिष्यो को यह बडी फिक्र होती है कि दूसरे लोग भी उनके महात्मा को महात्मा मानते है कि नही। तो बर्नार्ड शा से उनके सेक्रेटरी ने पूछा कि आप गाधी को महात्मा मानते है कि नही? बर्नार्ड शा ने कहा कि महात्मा वे जरूर है लेकिन नम्बर दो है क्योकि नम्बर एक महात्मा तो मै हू। दुनिया मे दो ही महात्मा हैं, एक मै और एक यह गाधी, लकिन गाधी नम्बर दो है, नम्बर एक मै हू।

वह बडे दुखी हुए होगे क्योकि शिष्य बडे दुखी होते हैं इन बातों से

क्योकि शिष्यों के अहकार की तृप्ति इमी मे होती है कि उनका महात्मा नम्बर एक हो। उनका महात्मा नम्बर दो हो तो शिष्य भी महात्मा नम्बर दो के शिष्य हो जाते है। वह दुखी वापस लौटे और उन्होने गाधी को कहा कि यह बर्नार्ड शा बडा अहकारी मालूम होता है और बडा दम्भी मालूम होता है। अपने ही मु ह से कहता है कि मै नम्बर एक हू, आप नम्बर दो हैं। गाधी ने कहा, "वह बडा सीधा और सरल आदमी मालूम होता है। दिल मे तो सभी के ऐसा होता है कि मै नम्बर एक हू। कुछ लोग कह देते हैं, कुछ लोग कहते नही हैं। वह सीधा आदमी है।"

हम सब के मन मे यह होता रहता है कि मै नम्बर एक हू और इस बात को सिद्ध करने के लिए जीवन मे हजार उपाय करते हैं। बडा मकान बनाते हैं इसलिए ताकि बिना कहे लोग जान ले कि हम नम्बर एक हैं। शानदार कपडे पहनकर खडे हो जाते हैं ताकि कहना न पडे और दूसरे जान लें कि मै नम्बर एक हू। हम जीवन भर यह कोशिश करते है कि बिना कहे पता चल जाय कि मै नम्बर एक हू क्योकि कहने से तो झगडा खडा हो जाता है। बिना कहे सबको पता चल जाये, जीवन की सारी दौड यही है। नम्बर एक होने का सबका ख्याल है। एक मजाक अरब मे प्रचलित है। अरब मे कहा जाता है कि भगवान जब आदमियो को बनाता है और बना कर उनको जब दुनिया मे भेजने लगता है तो हर आदमी से आकर कान मे कह देता है, "तुमसे अच्छा आदमी मैने कभी बनाया ही नही।" भगवान मजाक कर देता है हर आदमी के साथ, फिर हर आदमी जिन्दगी भर मन ही मन मे यह सोचता रहता है कि मुझ से अच्छा आदमी तो कोई है ही नही।

एक एक व्यक्ति का अहकार रोग है, यह तो हमे दिखायी पडता है क्योकि वह हमारे सघर्ष मे आ जाता है लेकिन राष्ट्रीय अहकार भी रोग है, साप्रदायिक अहकार भी रोग है, जातीय अहकार भी रोग है, यह हमे दिखायी नहीं पडता है क्योकि समूह मे हम होते हैं और हमारी टक्कर नही होती। अगर एक जगह सभी लोग एक ही बीमारी से परेशान हो जाये तो वह बीमारी दिखायी पडनी बन्द हो जायगी। पागलखानो मे पागलो को ऐसा नहीं मालूम पडता कि दूसरा आदमी पागल है या मै पागल हू। वह सब बिल्कुल ठीक मालूम पडते हैं, वे सभी एक ही बीमारी से जो ग्रस्त हैं।

एक बार ऐसा हुआ कि किसी गाव मे एक जादूगार आया और उसने एक कुए मे एक पुडिया डाल दी और कहा कि जो भी इसका पानी पियेगा

वह पागल हो जायगा। उस गाव मे दो ही कुए थे। एक गांव का कुआ था, एक राजा का कुआ था। राजा के कुए से राजा पानी पीता था, उसका वजीर पानी पीता था, उसकी रानिया पानी पीती थी। गाव के कुए से पूरा गाव पानी पीता था। पागल हो या कुछ भी हो, पानी बिना पिये तो कोई रह भी नही सकता। थोडी देर लोग रुके लेकिन साझ होते होते सबको पानी पीना पडा। गाव भर पागल हो गया। सिर्फ राजा, वजीर और रानिया पागल नहीं हुए। लेकिन, गाव मे यह खबर फैलने लगी कि ऐसा मालूम होता है कि राजा का दिमाग खराब हो गया है। स्वाभाविक था। गाव सारा पागल हो गया था। जो पागल नहीं था वह पागल दिखायीं पडने लगा। रात होते होते गाव मे एक सभा हुई और गाव के सारे लोगो ने मोचा कि कुछ गडबड हो गयी है, राजा और वजीर पागल मालूम होते हैं। उनको बदले बिना ठीक न होगा। उनको बदल देना चाहिए। कोई और राजा बनाना चाहिये। उसके सिपाही भी पागल हो गये थे, उसके सैनिक भी, उसके पहरेदार भी, सभी पागल हो गये थे। उसके बचाव का भी कोई उपाय नहीं था। उसने अपने वजीर को कहा कि अब क्या किया जाय? वजीर ने कहा, एक ही रास्ता है, हम भी उसी कुए का पानी पी लें। और राजा और वजीर भागे कि कही समय न चूक जाय। और उन्होने जाकर उस कुए का पानी पी लिया। उस रात उस गाव मे जलसे मनाये गये, उन्होने खुशिया मनायी, भगवान को धन्यवाद दिया कि राजा का दिमाग ठीक हो गया है।

सामूहिक रूप से लोग पागल हो जायें तो किसी को दिखायी नही पडता। राष्ट्रीय अहकार सामूहिक पागलपन है इसलिए हमें दिखायी नहीं पडता। हम सभी उसी के बीमार हो गये हैं। जब कोई कहता है, "महान देश है यह भारत वर्ष" तो हमारे मन मे यह ख्याल ही नहीं उठता है कि यह बडी पागलपन की बात कह रहा है। जब कोई कहता है, दुनिया का गुरु है हमारा देश तो हमे ख्याल ही नही उठता कि यह पागलपन की बात कह रहा है। जब कोई कहता है कि भगवान इसी भूमि को पवित्र मानते हैं तो हम बडे प्रसन्न होते है कि यह बहुत ही अच्छी बात है क्योकि हम भी इसी भूमि मे पैदा हुए हैं। और यह पागलपन सारी दुनिया के सभी लोगो को है। जमीन पर ऐसी कोई कौम नही है जिसको यह ख्याल न हो कि वह विशिष्ट है। जमीन पर कोई ऐसी कौम नहीं जिसे यह ख्याल न हो कि वह जो भी करती है, जो भी उसका जीवन है, वही श्रेष्ठ है।

पहले महायुद्ध मे फ्रास हारता चला जाता था। एक फ्रेंच जनरल ने एक अग्रेज जनरल से पूछा कि क्या मामला है, हम हारते चले जा रहे हैं जर्मनी मे ? तुम किस भाति लडते हो, तुम्हारे लडने के ढग क्या हैं ? उस अग्रेज जनरल ने कहा कि ढग की तो बात छोड दो, जहा तक मैं समझता हू भगवान हमारे पक्ष मे हैं इसलिए हम जीतते हैं। उस फ्रेंच ने पूछा क्या भगवान हमारे पक्ष मे नहीं हैं ? उस अग्रेज ने कहा कि आज तक तुम्हे पता है कभी अग्रेजो को छोडकर भगवान किसी और के पक्ष मे रहा है ? लेकिन फिर भी तुम ठीक से प्रार्थना करो तो शायद वह दयावान हो जाय और दयावान होने का एक कारण यह भी है कि तुम हमारे मित्र राष्ट्र हो। उस फ्रेंच ने कहा कि प्रार्थना तो हम हमेशा करते है। हमारी सैनिक टुकडिया भी युद्ध मे जाने के पहले प्रार्थना करती है। उस अग्रेज जनरल ने पूछा, "किस भाषा मे प्रार्थना करते हो ? भगवान अग्रेजी के सिवाय कोई भाषा नही समझता।"

हिदुस्तानियो को भी यह भ्रम है कि सस्कृत जो है, देववाणी है। भगवान सिर्फ सस्कृत ही समझता है, लेकिन इस पर कभी आप हसे थे जिन्दगी मे कि सस्कृत देववाणी है लेकिन कोई अग्रेज कहे कि अग्रेजी देववाणी है तो हमको हसी आ जाती है। हमको लगता है कि कैसी बेवकूफी है—अग्रेजी और देववाणी ! लेकिन सस्कृत देववाणी है, इस पर कभी हसे थे ? नहीं, सस्कृत तो देववाणी है ही, उस पर हसने की जरूरत क्या है ? कौमे एक दूसरे के पागलपन पर हसती हैं लेकिन अपने पागलपन पर नही हसती। वह वक्त आ गया है कि हमे यह खोजना होगा, पहचानना होगा कि यह राष्ट्रीय अहकार कहीं रोग तो नही है। यह रोग है।

अगर यह बात स्पष्ट दिखायी दे सके कि यह राष्ट्रीयता (Nationality) रोग है, झडे को ऊचा रखने का ख्याल नासमझी है, अहकार है, तो शायद हम एक नयी दुनिया के बनाने मे समर्थ हो सकते है। शायद एक ऐसी दुनिया को बना सकें जहा कि राष्ट्रीय अहकार न हो, तो ही हम युद्ध के बाहर हो सकेंगे। और हमे क्यो इतना सुख मिलता है यह कहने मे कि मै बडा हू आपसे, कभी इस पर भी सोचा है ? चाहे व्यक्ति कहे, चाहे राष्ट्र कहे, सुख क्या है इसमे कि मै आप से बडा हू ? जो आदमी दुखी होता है, वह इसी तरह की थोथी बातें कहकर सुख अनुभव करता है। एक भिखमगा सडक के किनारे बैठकर कहता है कि मेरे बाप बादशाह थे, नवाब थे। वह भीख मागता है।

इस बात को कह कर कि उसके पिता बादशाह थे, वह अपने भीख मागने के दुख को छिपा लेता है।

अहकार दुख को छिपाने की कोशिश है। जो आदमी दुखी नही होता वह अहकारी भी नही होता। जो आदमी आनदित होता है, वह यह नही कहता है कि मै बडा हू, मै यह हू, मै वह हू। वह सिर्फ आनदित होता है। उसे ख्याल भी नहीं आता है कि ये बाते भी कहने की है। यह सिर्फ दुखी और पीडित चित्त को ख्याल आते है कि मै यह हू। तो जो कौम जितनी नीचे गिरती जाती है, वह उतनी अपने अहकार मे फूल-फूलकर समझाने की कोशिश करने लगती है। जितनी ज्यादा हीनता (Inferiority) का ख्याल होता है उतना अहकार की घोषणा करने की प्रवृत्ति आती है। अहकार हीनता के भाव को छिपाने का उपाय है।

नादिरशाह आता था मुल्क जीतने के लिए। किसी ज्योतिषी से उसने पूछा, "मै जीतने को जा रहा हू। मेरे हाथ देखो, लक्षण देखो कि मै आदमी कैसा हू? मै जीत सकूगा या नही?" उस ज्योतिषी ने कहा, "तुम आदमी जरूर छोटे होगे क्योकि जीतने का ख्याल छोटे लोगो को ही पैदा होता है।" उस ज्योतिषी को नादिर ने मरवा डाला। लेकिन यह बात इतनी सच्ची है कि किसी ज्योतिषी को मारने से मिट नही सकती। छोटे लोगो को जीतने का ख्याल पैदा होता है ताकि वह यह सिद्ध कर सके अपने और दूसरो के सामने कि मै छोटा नही हू। तैमूरलग चीन को जीतने गया। तैमूर लगडा था। रास्ते मे उसने एक मुल्क जीता। उस मुल्क के राजा को उसने हथकडियो मे बधवाकर बुलवाया। जब वह राजा हथकडियो मे बध कर सामने आया तो तैमूरलग हसने लगा। अपने सिहासन पर बैठा हुआ था। उस राजा ने कहा, "तैमूर हसते हो तो बडी गल्ती करते हो। इस भूल मे मत रहना कि तुमने आज मुझे जीत लिया है तो हमेशा जीतते चले जाओगे, किसी दिन हारोगे भी। जो जीतता है वह किसी दिन हारता भी है। हसो मत, क्योकि जो किसी की हार पर हसता है, एक दिन उसे अपनी हार पर आसू बहाने पडते है।" तैमूर ने कहा, "मै हसा ही नही इस कारण से। मै तो किसी और बात से हसा।" तैमूर लगडा था। एक पैर उसका लगडा था और जिस राजा को उसने जीता था वह काना था। उसकी एक ही आख थी। उसने कहा, "मै तो इसलिए हसा कि यह भगवान भी बडा अजीब है कि लगडे और काने को भी बादशाहत दे देता है। मै इसलिए नही हसा कि तुम हार गये। मै तो

इसलिए हसा कि मै हू लगडा और तुम हो काने । बडी अजीब बात है, लगडे और काने बादशाह हो जाते हैं।" बात वही खत्म हो गयी लेकिन अगर मै वहा मौजूद होता तो मै तैमूर से कहता कि इसमे भगवान का कोई भी कसूर नहीं है । लंगड़ो और कानो के सिवाय बादशाहत कोई मागता ही नही। इसमे भगवान का क्या कसूर ?

यह हमारे भीतर जो लगडापन और कानापन होता है, जो हीनता होती है, वह हमारी जिन्दगी मे एक बल बन जाती है भागने का, दौडने का। हमे अपने को सिद्ध करना है दूसरो के सामने कि मै लगँडा नही हू, मै काना नही हू, मै कुछ हू ।तो जितना लगडा-काना आदमी होता है, उतनी ज्यादा यह दौड तेज हो जाती है। जितनी हीन वृत्ति होती है उतनी महत्वाकाक्षा हो जाती है। फिर यह व्यक्तियो के तल पर भी होती है, राष्ट्रो के तल पर भी होती है। इसे थोडा समझना और इसको विदा करना जरूरी है।

राष्ट्रो का अहकार जाना चाहिए और यह तभी जा सकता है, जब हमे दिखायी पड जाये कि यह रोग है। हम तो इसे महिमा समझते हैं इस लिए यह टिका हुआ है । हम तो इसे गौरव समझते हैं इसलिए टिका हुआ है । मै तो कहूगा, ऐसी प्रार्थनाए करे जो मनुष्य के लिए हो, राष्ट्रो के लिए नही। राष्ट्रो ने मनुष्यता को नष्ट किया है। आने वाला दिन राष्ट्रो का दिन नही हो सकता है। आने वाला दिन सारी मनुष्य जाति का इकट्ठा दिन होगा । वे लोग जो सोचते-विचारते है, उन्हे ऐसी प्रार्थनाए बन्द कर देनी चाहिये जो टुकडे के लिए हो। उन्हे तो पूरी अखड मनुष्यता के लिए कोई चिन्ता करनी चाहिए। लेकिन हम सोचते भी नहीं है।

हम खडे हुए हैं विश्वशाति के लिए और हमको पता नही है कि यदि प्रार्थना हम राष्ट्र के लिए करते है तो विश्वशाति कैसे होगी ? ये दोनो बाते विरोधी है । राष्ट्रो को जो मानता है वह विश्वशाति के पक्ष मे नही हो सकता है। विश्वशाति की जिसकी आकाक्षा होती है उसे राष्ट्रो को मानने की गु जाइश नहीं है। पाच हजार वर्ष की कथा देखिये। उसमे आदमी की कथा क्या है ? राष्ट्रो की कथा क्या है ? क्या हुआ ? अब भी हम उससे चिपके रहेंगे तो खतरा होगा। लेकिन शायद हमे बोध नही है, हमे ख्याल नही है। चीजें चलती जाती हैं, हम उनका अनुभव नही करते हैं। चले जाते है, न हम सोचते है, न हम विचारते हैं। सारी दुनिया खडित खडी है। खडित जहा भी होगे वहा युद्ध होना बहुत आसान है।

हम हिंदुस्तान मे युद्ध के लिए सग्राम शब्द का प्रयोग करते हैं। शायद आपको अभी ख्याल न हो कि सग्राम का अर्थ क्या है। सग्राम का अर्थ होता है, दो ग्रामो की सीमा। ग्राम का अर्थ गाव होता है, सग्राम का अर्थ दो गावो की सीमा होता है। बडी अजीब बात है कि जिसका अर्थ है दो गावो की सीमा, उसका अर्थ युद्ध भी है। असल मे जहा सीमा बटती है वही से युद्ध शुरू हो जाता है। जहा रेखा है वहा युद्ध है, जहा सीमाए हैं, वहा युद्ध हैं और राष्ट्र सीमा बनाते हैं। सीमा युद्ध लाती है। सीमा युद्ध लायेगी। तो अगर चाहनी हो शाति, तो सीमा से ऊपर उठना होगा। असीम को स्वीकार करना होगा तो शाति आ सकती है।

जो सीमा को स्वीकार करता है वह कभी शात नही हो सकता है। और हम सब तरह से सीमाओ को स्वीकार किये हुए हैं। हजार हजार तरह की सीमाए हमने स्वीकार की हैं, राष्ट्रो की सीमाए, जातियो की सीमाए, रगो की सीमाए, वर्णों की सीमाए, चमडी की सीमाए। न मालूम कितनी सीमाए हैं दर्शन की, धर्मों की। आदमी की इतनी सीमाए हमने बाध दी हैं कि आदमी करीब-करीब कारागृह मे है। उसकी कोई स्वतन्त्रता नहीं है। कारागृह मे जो आदमी खडा है, वह ऐसी दुनिया नही बना सकता है जो कि शात हो। इस आदमी को मुक्त करना होगा। इसकी सारी सीमाओ को तोडना होगा। इसे थोडा असीम की तरफ ले चलना होगा। स्मरण रहे अहकार सबसे खतरनाक सीमा है, तो जो असीम होने की तरफ जाता है, उसे अहकार भी छोड देना होगा। एक छोटी-सी कहानी मेरी बात को स्पष्ट कर देगी।

एक राजा का जन्मदिन था। कहते है उसने सारी जमीन जीत ली थी। अब उसके पास जीतने को कुछ भी नही बचा था। उसने अपनी राजधानी के सौ ब्राह्मणो को भोजन पर आमत्रित किया। वे उसके राज्य के सबसे विचारशील पण्डित थे। जन्मदिन के उत्सव मे उन्होने भोजन किया और पीछे उस राजा ने कहा, ''मै तुम्हे जन्मदिन की खुशी मे कुछ भेंट करना चाहता हू। लेकिन मैं कुछ भी भेंट करू, तुम्हारी आकाक्षा से भेंट छोटी पड जायगी। तुम न मालूम क्या सोचकर आये होगे कि राजा क्या भेंट करेगा। तो मैं जो भी भेंट करूगा, हो सकता है, वह छोटी पड जाये इसलिए मैं तुम्हारे मन पर ही छोड देता हू तुम्हारी भेंट। मेरे भवन के पीछे दूर-दूर तक श्रेष्ठतम जमीन है राज्य की। तुम्हें जितनी जमीन उसमे से चाहिए, वह ले लो। एक ही शर्त है, तुम्हें जितनी

जमीन चाहिए, उतनी पहले तुम दीवाल बनाकर घेर लो, वह तुम्हारी हो जायेगी। जो जितनी जमीन घेर लेगा, वह उसकी हो जायेगी।"

ऐसा मौका कभी न मिला था और वह भी ब्राह्मणो को। वे ब्राह्मण तो खुशी से पागल हो उठे। उन्होने अपने मकान बेच दिये, अपनी धन-सपत्ति बेच दी, सब बेचकर वे बडी दीवाल बनाने मे लग गये। जो जितना उधार ले सकता था, मित्रो से माग सकता था, सब ले आये थे। यह मौका अद्भुत था। जमीन मुफ्त मिलती थी। राज्य की सबसे अच्छी जमीन थी। सिर्फ रेखा खींचनी थी, दीवाल बनानी थी। बडी बडी दीवालें उन्होंने बनाकर जो जितनी जमीन घेर सकता था, घेर ली। एक ही कीमत पर मिलती थी जमीन कि सिर्फ घेर लो और जमीन मिल जायेगी। तीन महीनों के बाद जबकि वह जमीन करीब-करीब घिरने के निकट पहुच गयी थी, राजा ने घोषणा की कि मैं एक खबर और कर देता हू जो सबसे ज्यादा जमीन घेरेगा उसे मैं राजगुरु के पद पर भी नियुक्त कर दूगा। अब तो पागलपन और तेज हो गया। अब जिसके पास जो भी था, कपडे लत्ते भी बेच दिये। उन ब्राह्मणो ने अपनी लगोटिया लगा ली क्योकि कपडे लत्ते बेच कर भी चार ईट आती थी तो थोडी जमीन और घिरती थी। वे करीब-करीब नगे और फकीर हो गये। वे जमीन घेरने मे पागल हो गये। आखिर समय पूरा हो गया। जमीन उन्होने घेर ली। दिन आ गया और राजा वहा गया और उसने कहा कि मैं जाच कर लू और राजगुरु का पद दे दू। तो तुममे मे जिसने ज्यादा जमीन घेरी हो, वह बताये। जो दावा करेगा उसकी जाच कर ली जायेगी। एक ब्राह्मण खडा हुआ। उसको देखकर बाकी ब्राह्मण हैरान रह गये। वह तो सबसे ज्यादा गरीब ब्राह्मण था। उसने एक थोडा-सा जमीन का टुकडा घेरा था, शायद सबसे कम उसी की जमीन थी और वह पागल सबसे पहले खडा हो गया और उसने कहा, "मेरी जमीन का निरीक्षण कर लिया जाय, मैंने सबसे ज्यादा जमीन घेरी है। मै राजगुरु के पद पर अपने को घोषित करता हू।" राजा ने कहा, "ठहरो!" लेकिन उसने कहा, ठहरने की कोई जरूरत नही, मैं घोषित करता हू। बाद मे तुम भी घोषणा कर देना। चलो जमीन देख लो।'

जब उसने दावा किया था तो निरीक्षण होना जरूरी था। सारे ब्राह्मण और राजा उसकी जमीन पर गये और देखकर ब्राह्मण हसने लगे। पहले तो उसने थोडी-सी दीवाल बनायी थी। मालूम होता था, रात मे

उसने दीवाल तोड दी थी, रात दीवाल भी न रही। राजा ने कहा, कहा है तुम्हारी दीवाल? उस ब्राह्मण ने कहा, मैने दीवाल बनायी थी फिर मैने सोचा, दीवाल कितनी ही बनाऊ जो भी घिरेगा वह छोटा ही होगा। फिर मैने सोचा दीवाल गिरा दू क्योकि दीवाल कितनी ही बडी जमीन को घेरे भी जमीन आखिर छोटी ही होगी। घिरी होगी तो छोटी ही होगी। तो मैने दीवाल गिरा दी है। मै सबसे बडी जमीन का मालिक हू। मेरी जमीन की कोई दीवाल नही है और इसीलिए मै कहता हू कि मै राजगुरु की जगह खडा हू।

राजा उसके पैर पर गिर पडा। उसने कहा, 'मुझे पहली दफा ख्याल मे आया है कि जो दीवाल गिरा देता है वह सबका हो जाता है, सबका मालिक हो जाता है। और जो दीवाल बनाता है वह कितनी ही बडी दीवाल बनाये तो भी जमीन छोटी ही घिर पाती है।"

मनुष्य के चित्त पर बहुत दीवाले हैं, इनके कारण मनुष्य छोटा हो गया है। मनुष्य छोटा है इसलिए युद्ध है, अहकार है। मनुष्य को बडा करना है तो उसकी सारी दीवाले गिरा देनी जरूरी हैं और जो लोग भी इन दीवालो को गिराने मे लगे हैं वे ही लोग मनुष्यता की सेवा कर रहे है। आप स्कूल बनाये, अस्पताल खोले इसमे कोई बहुत मतलब नही है, क्योकि आप एटमबम भी बना रहे हैं। मनुष्यता की एक ही सेवा हो सकती है कि आप मनुष्य को दीवालो से मुक्त करें। हिन्दू की, मुसलमान की, भारतीय की, पाकिस्तानी की, काले की, गोरे की दीवालो से जो मुक्त कर रहा है हर आदमी को, वही आज के क्षणो मे मनुष्यता की सेवा कर रहा है। अगर ऐसे आदमी को जन्म दे सकें जिसके मन पर कोई दीवाल न हो तो शायद मनुष्यता के इतिहास मे एक नये युग का प्रारम्भ हो सकता है। आज तक मनुष्यता दुख, युद्ध और पीडा मे रही है, अब या तो हम समाप्त होगे या हमको बदलना होगा। या तो महायुद्ध होगा और हम समाप्त हो जायेगे, या एक महाक्राति आयेगी और हमारे जीवन को बदल देगी।

आज दो ही तरह के लोग है जमीन पर—वे लोग जो आगे वाले महायुद्ध को लाने की तैयारी मे लगे हैं, साथ दे रहे हैं या वे लोग जो आने वाली महाक्राति के लिए श्रमरत हैं और सहयोग कर रहे हैं। मै आपसे प्रार्थना करता हू, महायुद्ध मे साथी मत बनना। उस महाक्राति मे जो मनुष्य

के चित्त को दीवालो से मुक्त कर दे, अगर आपने सहयोग दिया तो ही मनुष्यता की सेवा हो सकेगी। आज एक ऐसी सेवा की जरूरत आ गई है जो कभी भी न थी। छोटी छोटी सेवाओ से कुछ भी न होगा। पूरा आकाश ही टूटने को आ गया है और आप अगर छोटे छोटे थेगड़े घर मे लगायेगे तो उससे कुछ भी होने को नही है। उस महान क्राति की दिशा मे चिन्तन पैदा हुए बिना कुछ भी नही हो सकता है।

सात : शिक्षा में क्रांति

शिक्षा में क्रांति

शिक्षक और समाज के सम्बन्ध मे थोडी सी बातें जो मुझे दिखायी पडती है वह मै आपसे कहू । शायद जिस भाति आप सोचते रहे होगे उससे मेरी बात का कोई मेल न हो । यह भी हो सकता है कि शिक्षा शास्त्र जिस तरह की बातें करता है उस तरह की बातो से मेरा विरोध भी हो । न तो मै कोई शिक्षा शास्त्री हू और न ही समाज शास्त्री । इसलिए सौभाग्य है कि मै शिक्षा और समाज के सम्बन्ध मे थोडी सी कुछ बुनियादी बाते कह सकता हू । क्योकि जो शास्त्र से बध जाते हैं उनका चिन्तन समाप्त हो जाता है । जो शिक्षाशास्त्री हैं उन्हे शिक्षा के सम्बन्ध मे कोई सत्य प्रकट होगा, इसकी सम्भावना अब करीब करीब समाप्त मान लेनी चाहिए । क्योकि पाच हजार वर्षों से वे चिन्तन करते हैं लेकिन शिक्षा की जो स्थिति है, शिक्षा का जो ढाचा है, उस शिक्षा से पैदा होने वाली मनुष्यो की जो रूपरेखा है वह इतनी गलत है कि यह स्वाभाविक है कि शिक्षाशास्त्रो से अस्वस्थ और भ्रात नेता पैदा हो जाये । समाजशास्त्र भी, जो समाज के सम्बन्ध मे चिन्तन करता है वह भी अत्यन्त रुग्ण और अस्वस्थ है, अन्यथा मनुष्य जाति, उसका जीवन, उसका विचार, बहुत अलग और अन्यथा हो सकता था । मै दोनो मे से कोई भी नही हू इसलिए सम्भव है कि आपसे कुछ ऐसी बाते कह सकू जो सीधी समस्याओ को देखने से पैदा होती हैं ।

जिन लोगो के लिए शास्त्र महत्वपूर्ण हो जाते है उन लोगो के लिए समाधान महत्वपूर्ण हो जाते हैं और समस्याए कम महत्व की हो जाती है। मुझे चूकि कोई पता नही शिक्षाशास्त्र का इसलिए मै सीधी समस्याओ पर आपसे बात करना चाहूगा । सबसे पहली बात और जिस आधार पर आगे मै आपसे कुछ कहू, वह यह है कि शिक्षक का और समाज का सम्बन्ध अब तक अत्यन्त खतरनाक सिद्ध हुआ है । सम्बन्ध क्या है, शिक्षक और समाज के बीच आज तक ? सम्बन्ध यह है कि शिक्षक गुलाम है और समाज मालिक है । शिक्षक से काम समाज कौन-सा लेता है ? शिक्षक से समाज काम यह लेता है कि पुरानी ईर्ष्याए, उसके पुराने द्वेष, उसके पुराने विचार वह सब जो हजारो वर्ष से लादे हैं मनुष्यो के मन पर, शिक्षक उन्हें नये बच्चो के मन में

प्रविष्ट करा दे। मरे हुए लोग, मरते जाने वाले लोग जो वसीयत छोड गये हैं, चाहे वह ठीक हो या गलत, उसे वह नये बच्चो के मन मे प्रवेश करा दे। समाज शिक्षक से यह काम लेता रहा है और शिक्षक इस काम को करता रहा है, यह आश्चर्य की बात है। इसका अर्थ यह हुआ कि शिक्षक के ऊपर बहुत बडी लाछना है। बहुत बडी लाछना यह कि हर सदी जिन बीमारियो से पीडित होती है उन बीमारियो को आनेवाली सदी मे शिक्षक सक्रमित कर देता है, जैसाकि समाज चाहता है।

समाज का ढाचा और समाज के ढाचे से जुड गया स्वार्थ, अन्धविश्वास को कोई भी मारना नही चाहते, कोई भी समाप्त करना नही चाहते। इस कारण समाज शिक्षक का आदर भी करता है, आदर करने की प्रवृत्ति भी दिखाता है। क्योकि बिना शिक्षक की खुशामद किये, बिना शिक्षक को आदर दिये शिक्षक से कोई काम लेना असम्भव है। इसलिए कहा जाता है कि शिक्षक गुरु है, आदरणीय है, उसकी बातें मानने योग्य हैं, उसका सम्मान किया जाने योग्य है। क्यो ? क्योकि जो समाज अपने बच्चो मे अपने मन की सारी धारणाओ को छोड जाना चाहता है, इसके सिवाय उसका कोई मार्ग नही। जैसे हिन्दू बाप अपने बच्चे को भी हिन्दू बनाकर ही मरना चाहता है, मुसलमान बाप अपने बच्चे को मुसलमान बनाकर मरना चाहता है। हिन्दू बाप का मुसलमान से जो झगडा था वह भी अपने बच्चे को दे जाना चाहता है। यह कौन देगा ? वह कौन सक्रमित करेगा ? यह शिक्षक करेगा।

पुरानी पीढी की जो अन्धश्रद्धाए है वह पुरानी पीढी पर नयी पीढी थोप देना चाहती है। अपने शास्त्र, अपने गुरु सब थोप देना चाहती है। यह कौन करेगा ? यह काम वह शिक्षक से लेता है और इसका परिणाम क्या होगा ? इसका परिणाम यह होता है कि दुनिया मे भौतिक समृद्धि तो विकसित होती जाती है लेकिन मानसिक समृद्धि विकसित नही हो रही है। मानसिक शक्ति विकसित हो ही नही सकती जब तक कि हम अतीत के भार और विचार से बच्चो को मुक्त न करे। एक छोटे से बच्चे के मस्तिष्क पर पाच दस हजार साल के सस्कारो का भार है। उस भार के नीचे उसके प्राण दबे जाते है। उस भार मे उसकी चेतना की ज्योति, उसके खुद का व्यक्तित्व उठना असम्भव है।

दुनिया मे भौतिक समृद्धि बढती है, क्योकि भौतिक समृद्धि को जहा हमारे मा-बाप छोडते हैं, उसे बच्चे आगे ले जाते है, लेकिन मानसिक समृद्धि नहीं बढ़ती है क्योकि मानसिक समृद्धि में हम अपने मा-बाप से आगे

जाने को तैयार नहीं। आपके पिता जो मकान बना गये थे, लडका उसको दो मजला बनाने में सकोच अनुभव नहीं करता, बल्कि खुश होगा। और बाप भी खुश होगा कि उसके लडके ने उसके मकान को दो मजला किया, तीन मजला किया। लेकिन महावीर, बुद्ध, राम और कृष्ण जो वसीयत छोड गये हैं उनके मानने वाले इस बात से बडी मुश्किल मे पड जायेंगे कि किसी व्यक्ति ने गीता से आगे विचार किया, कि गीता के एक मजली झोपडे को दो मजला मकान बनाया है। मन के तल पर जो मकान बाप छोड गये हैं उसके भीतर ही रहना जरूरी है। उससे बडा मकान नही बनाया जा सकता है।

और इस बात की हजारो साल से चेष्टा चलती है कि कोई बच्चा बाप से आगे न निकल जाय। इसकी कई एक तरकीब हैं, कई व्यवस्थाए हैं। इसलिए दुनिया मे समृद्धि बढती है भौतिक, लेकिन मानसिक दीनता बढ़ती चली जाती है। और जब मन छोटा हो और भौतिक समृद्धि ज्यादा हो तो खतरे पैदा होते हैं। जिस भाति हम भौतिक जगत मे अपने मा बाप से आगे बढते है, जरूरी है कि बच्चे मानसिक और आध्यात्मिक विकास मे भी मा बाप को पीछे छोड दे। इसमे मा बाप का अपमान नही, बल्कि इसी मे सम्मान है। ठीक ठीक पिता वही है, ठीक ठीक पिता का प्रेम वही है कि वह चाहे कि उसका बच्चा हर दृष्टि मे उसे पीछे छोड दे, लेकिन अगर किसी भी तल पर बाप की यह इच्छा है कि बच्चा उसके आगे न निकल जाय तो यह इच्छा खतरनाक है और शिक्षक अब तक उसमे सहयोगी रहा है।

इसमे हम अपमान समझेंगे कि अगर हम कृष्ण से आगे विचार करे या महावीर से आगे विचार करे या मुहम्मद से आगे विचार करे। इसमे मुहम्मद का अपमान है, महावीर का अपमान है। कितने पागलपन का ख्याल है यह। इस कारण सारी शिक्षा अतीत की ओर उन्मुख है, जबकि शिक्षा भविष्य की ओर उन्मुख होनी चाहिए। विकासशील कोई भी सृजनात्मक प्रक्रिया भविष्य की ओर उन्मुख होनी है, अतीत की ओर नही। लेकिन हमारी सारी शिक्षा अतीत की ओर उन्मुख है। हमारे सारे सिद्धान्त, हमारी सारी धारणाए, हमारे सारे आदर्श अतीत से लिये जाते हैं। अतीत का मतलब है जो मर गया, जा बीत गया। हजार हजार वर्ष जिसे बीते हो गये हैं वह सारी धारणाए हम उस बच्चे के मन पर थोपना चाहते हैं। न केवल थोपना चाहते हैं, वल्कि उसी बच्चे को हम आदर्श कहेंगे जो उन धारणाओ के अनुकूल

अपने को सिद्ध कर लेता है। यह कौन करता रहा है ? यह काम शिक्षक से लिया जाता रहा है और इस भांति शिक्षक का शोषण समाज के ठेकेदारो ने किया है, धर्म के ठेकेदारो ने भी किया है और राज्य के ठेकेदारो ने भी किया है और शिक्षक को यह भुलावा दिया गया है कि वह ज्ञान का प्रसारक है।

वह ज्ञान का प्रसारक नही है। जैसी उसकी स्थिति है वह उस ज्ञान को स्थापित और स्थायी रखने वाला है जो उत्पन्न हो चुका है, और जो हो सकता है उसमे बाधा देने वाला है। वह हमेशा अतीत के घेरे से बाहर नही उठने देना चाहता है और इसका परिणाम यह होता है कि हजार हजार साल तक न मालूम किस किस तरह की नासमझिया, न मालूम किस किस तरह के अज्ञान चलते चले जाते हैं। उनको मरने नही दिया जाता, उनको मरने का मौका नही दिया जाता राजनीतिज्ञ भी यह समझ गया है इसलिए शिक्षक का शोषण राजनीतिज्ञ भी करता है। और सबसे आश्चर्य की बात है कि इसका शिक्षक को कोई बोध नहीं है कि उसका शोषण होता है। सेवा के नाम पर कि वह समाज की सेवा करता है, उसका शोषण होता है। और भी कई तरह से उसका शोषण होना है।

अभी कुछ दिन पहले शिक्षको की एक विराट सभा में बोलने मै गया था। शिक्षक दिवस था। तो मैने उनसे कहा कि एक शिक्षक यदि राष्ट्रपति हो जाय तो इसमे शिक्षक का सम्मान क्या है ? इसमे कौन से शिक्षक का सम्मान है ? मेरी समझ मे, एक राष्ट्रपति शिक्षक हो जाय तब तो शिक्षक का सम्मान समझ मे आता है लेकिन एक शिक्षक राष्ट्रपति हो जाय इसमे शिक्षक का सम्मान कौन सा है ? एक राष्ट्रपति शिक्षक हो जाय और कह दे कि यह व्यर्थ है और मैं शिक्षक होना चाहता हू क्योकि शिक्षक होना आनन्द है तब तो हम समझेंगे कि शिक्षक का सम्मान हो रहा है। लेकिन एक शिक्षक राष्ट्रपति हो जाय इसमे शिक्षक का सम्मान नही है राजनीतिज्ञ का सम्मान है। इसमे राजनेता का सम्मान है। और जब एक शिक्षक सम्मानित होता है राष्ट्रपति होकर तो फिर बाकी शिक्षक भी हेडमास्टर होना चाहे, स्कूल के इन्स्पेक्टर होना चाहें, एजूकेशन मिनिस्टर होना चाहे तो कोई गलती है ?

सम्मान तो वहा है जहा पद है, और पद वहां है जहा राज्य है। लेकिन सारा ढाचा इस चिन्तन का ऐसा है कि सब पीछे हैं, सबके ऊपर राज्य,

सबके ऊपर राजनीतिज्ञ है। राजनीतिज्ञ जाने अनजाने शिक्षक के द्वारा अपने विचार की स्थिति को, अपनी धारणाओ को बच्चों मे प्रवेश कराता रहा है। धार्मिक भी यही करता रहा है। धर्म शिक्षा के नाम पर यही चलता रहा है कि हर धर्म यह कोशिश करते हैं कि बच्चो के मन मे अपनी धारणाओ को प्रवेश करा दें, चाहे वह सत्य हो, चाहे असत्य हो। और उस उम्र मे प्रवेश करवा दें जब कि बच्चो मे कोई सोच विचार नहीं होता है। इससे घातक अपराध मनुष्य जाति में कोई दूसरा नहीं है और न हो सकता है। एक अबोध और अनजान बालक के मन मे यह भाव पैदा कर देना कि कुरान मे जो है सत्य है या गीता मे जो है सत्य है या भगवान जो है वह मुहम्मद हैं या भगवान हैं तो महावीर हैं, कृष्ण हैं। ये सारी बाते अबोध, निर्दोष, अनजान बच्चे के मन मे प्रवेश करा देने से बढकर घातक अपराध कोई नही हो सकता। लेकिन इसी भाति राजनीतिज्ञ भी कोशिश करता है।

अभी हिन्दुस्तान का मामला था। आजादी की लडाई थी तो हिन्दुस्तान के राजनीतिज्ञ कहते थे कि शिक्षक और विद्यार्थी दोनो राजनीति मे भाग लें, क्योकि देश की आजादी का सवाल है। फिर वे ही राजनीतिज्ञ सत्ता पर आ गये तो कहते हैं कि शिक्षक और विद्यार्थी राजनीति और सत्ता से दूर रहे। कम्युनिस्ट और सोशलिस्ट कहते है कि नही, विद्यार्थियो को दूर रहने की कोई जरूरत नही है। उन्हें राजनीति में भाग लेना चाहिए। शिक्षक और विद्यार्थी राजनीति मे भाग लें। कल कम्युनिस्ट आ जाये हुकूमत मे, तो वे कहेंगे कि अब तुम्हे इस राजनीति मे भाग लेने की कोई जरूरत नही। क्योकि जब जिस मौके पर जो जिस राजनीतिज्ञ के हित मे है वही सत्य हो जाता है, और शिक्षक और विद्यार्थी को यही सत्य है, यह समझाने की कोशिश की जाती है।

मेरी दृष्टि मे कोई भी व्यक्ति ठीक अर्थों मे शिक्षक तभी हो सकता है जब उसमे विद्रोह की एक ज्वलन्त अग्नि हो। जिस शिक्षक के भीतर विद्रोह की अग्नि नहीं है, वह किसी न किसी नीति, किसी न किसी स्वार्थ का एजेन्ट होगा। स्वार्थ चाहे सामाजिक, चाहे धार्मिक चाहे राजनीतिक हो। शिक्षक के भीतर एक ज्वलन्त अग्नि होनी चाहिए—विद्रोह की, चिन्तन की, सोचने की। लेकिन क्या हममे सोचने की अग्नि है और अगर नहीं है तो क्या आप भी एक दूकानदार नही हैं? शिक्षक होना बडी बात है। शिक्षक होने का मतलब क्या है? हम क्या सोचते हैं?

आप बच्चो को सिखाते होगे, सारी दुनिया मे बच्चो को सिखाया जाता है कि प्रेम करो। लेकिन कभी आपने विचार किया है कि आपकी पूरी शिक्षा की व्यवस्था प्रेम पर नही, प्रतियोगिता पर आधारित है। किताब मे सिखाते हैं कि प्रेम करो और आपकी पूरी व्यवस्था, पूरा इन्तजाम प्रतियोगिता का है। जहा प्रतियोगिता है वहा प्रेम कैसे हो सकता है ? जहा कम्पिटीशन है, प्रतिस्पर्धा है वहा प्रेम कैसे हो सकता है ? प्रतिस्पर्धा तो ईर्ष्या का रूप है, जलन का रूप है।

पूरी व्यवस्था तो जलन सिखाती है। एक बच्चा जो प्रथम आ जाता है तब दूसरे बच्चे से कहते हैं कि देखो तुम पीछे रह गये और वह पहले आ गया। आप क्या सिखा रहे हैं ? आप अहकार सिखा रहे हैं कि जो आगे है वह बडा है और जो पीछे है वह छोटा है। लेकिन किताबो मे आप कह रहे है कि विनीत बनो और किताबो मे आप समझा रहे हैं कि प्रेम करो, और आपकी पूरी व्यवस्था सिखा रही है कि घृणा करो, ईर्ष्या करो और आगे निकलो, दूसरे को पीछे हटाओ। और आपकी व्यवस्था उसे पुरस्कृत कर रही है, जो आगे आ रहे हैं, उनको गोल्ड मैडल दे रही है, उनको सर्टिफिकेट दे रही है, उनके गले मे मालाए पहना रही है, उनके फोटो छाप रही है, और जो पीछे खडे हैं उनको अपमानित कर रही है।

जब आप पीछे खडे आदमी को अपमानित करते हैं तो क्या आप उसके अहकार को चोट नही पहुचाते कि वह आगे हो जाय ? और आगे खडे आदमी को आप सम्मानित करते हैं तो उसके अहकार को प्रबल नही करते हैं ? क्या आप उसके अहकार को नही फुसलाते और बडा करते ? और जब ये बच्चे इस भाति अहकार मे, ईर्ष्या मे, प्रतिस्पर्धा मे पाले जाते हैं तो यह कैसे प्रेम कर सकते हैं ? प्रेम का हमेशा मतलब होता है कि जिसे हम प्रेम करते हैं उसे आगे जाने दें। प्रेम का हमेशा मतलब है पीछे खडा हो जाना।

एक छोटी सी कहानी कहू, उससे मेरी बात ख्याल मे आ जाय। तीन सूफी फकीरो को फासी दी जा रही थी। दुनिया मे हमेशा धार्मिक आदमी सन्तो के खिलाफ रहे हैं। तो धार्मिक लोग उन फकीरो को फासी दे रहे थे। तीन फकीर बैठे थे कतार मे। जल्लाद एक-एक का नाम बुलायेगा और उनको काट देगा। उसने चिल्लाया कि नूरी कौन है, उठकर आ जाय। लेकिन नूरी नाम का आदमी तो नही उठा। एक दूसरा युवक उठा और वह बोला कि मै तैयार हू, मुझे काट दो। जल्लाद ने कहा कि तेरा तो नाम यह नही है।

इतना मरने की क्या जल्दी ? उसने कहा कि मैंने प्रेम किया है और जाना कि जब मरना हो तो आगे हो जाओ और जब जीना हो तो पीछे हो जाओ। मेरा मित्र मरे, उसके पहले मुझे मर जाना चाहिए और अगर जीने का सवाल हो तो मेरा मित्र जिये उसके पीछे मुझे जीना चाहिए।

प्रेम तो यही कहता है, लेकिन प्रतियोगिता क्या कहती है ? प्रतियोगिता कहती है कि मरने वाले के पीछे हो जाना और जीने वाले के आगे हो जाना। और हमारी शिक्षा क्या सिखाती है ? प्रेम सिखाती है या प्रतियोगिता सिखाती है ? और जब हर बच्चा हर बच्चे को पीछे छोडने के लिए उत्सुक हो तो बीस साल की शिक्षा के बाद वह जिन्दगी मे क्या करेगा ? यही करेगा, जो सीखेगा वही करेगा।

नीचे के चपरासी से लेकर ऊपर के राष्ट्रपति तक हर आदमी एक दूसरे को खीच रहा है कि पीछे आ जाओ और इस खीचतान मे कोई चपरासी राष्ट्रपति हो जाता है तो हम कहते हैं कि बडी गौरव की बात हो गई। हालाकि किसी को पीछे करके आगे होने मे बडा हिंसा का कोई काम नही है। लेकिन यह हिंसा (वायलेंस) हम सिखा रहे है और इसको हम कहते हैं कि यह शिक्षा है। अगर इस शिक्षा पर आधारित दुनिया मे रोज लडाई होती हो, रोज हत्या होती हो तो आश्चर्य कैसा ? अगर इस शिक्षा पर आधारित दुनिया मे झोपडो के करीब बडे महल खडे होते हो और उन झोपडो मे मरते लोगो के करीब लोग अपने महलो मे खुश रहते हो तो आश्चर्य कैसा ? इस दुनिया मे भूखे लोग हैं और ऐसे लोग हैं जिनके पास इतना है कि क्या करे, उनकी समझ मे नही आता, यह इसी शिक्षा की बदौलत है। इसी शिक्षा का परिणाम है। यह दुनिया इसी शिक्षा से पैदा हो रही है और शिक्षक इसके लिए जिम्मेवार है। वह शोषण का हथियार बना हुआ है। वह हजार तरह के स्वार्थों मे हथियार बना हुआ है इस नाम पर कि वह शिक्षा दे रहा है, बच्चो को शिक्षा दे रहा है।

अगर यही शिक्षा है तो भगवान करे कि सारी शिक्षा बन्द हो जाय तो भी आदमी इससे बेहतर हो सकता है। जगली आदमी शिक्षित आदमी से बेहतर है और उसमें ज्यादा प्रेम है तथा कम प्रतिस्पर्धा है। उसमे ज्यादा हृदय है और कम मस्तिष्क है। लेकिन हमसे ज्यादा वह आदमी है। और हम इसको शिक्षा कह रहे हैं, और हम करीब करीब जिन जिन बातो को कह रहे हैं कि तुम यह करना, सिखाते हैं उनसे उल्टी बातें। पूरा सरन्जाम हमारी उल्टी बातें

सिखाता है। आप क्या सिखाते है ? आप सिखाते हैं उदारता, सहानुभूति। लेकिन, प्रतियोगी मन, काम्पिटीटिव माइन्ड कैसे उदार हो सकता है कैसे सहानुभूतिपूर्ण हो सकता है ? अगर प्रतियोगी मन सहानुभूतिपूर्ण हो तो प्रतियोगिता कैसे चलेगी ? प्रतियोगी मन कठोर होगा, हिंसक होगा, अनुदार होगा। होना ही पड़ेगा उसे। और हमारी अवस्था ऐसी है कि हमे पता भी नही चलेगा, हमे ख्याल भी नही आयेगा कि यह हिंसक आदमी है जो सारी भीड़ को हटाकर आगे जा रहा है। यह क्या है ? यह हिंसक आदमी है और हम इसे सिखाये जा रहे हैं, तैयार किये जा रहे हैं। फैक्टरिया बढती जा रही हैं इस तरह की शिक्षा की। उनको हम स्कूल कहते हैं, विद्यालय कहते हैं, सरासर झूठ है यह, वे सब फैक्टरिया हैं जिनमे बीमार आदमी तैयार किया जा रहा है। और वह बीमार आदमी सारी दुनिया को गड्ढे में लिए जा रहा है।

हिंसा बढती जाती है, प्रतिस्पर्धा बढती जाती है। एक दूसरे के गले पर एक दूसरे का हाथ है। आप यहा बैठे है, कहेंगे कि हमारा किसके गले पर हाथ है ? लेकिन जरा गौर से देखे हर आदमी का हाथ दूसरे आदमी के गले पर है और एक गले पर हजार हजार हाथ है। और हर आदमी का हाथ हर दूसरे आदमी को जेब मे है और एक जेब मे हजार हजार हाथ हैं। और यह बढता जा रहा है। यह कहा जायेगा, यह कहा टूटेगा, यह कब तक चल सकता है ? यह एटम और हाइड्रोजन बम कहा से पैदा हो रहे है ? प्रतियोगिता से। प्रतिस्पर्धा से। वह प्रतिस्पर्धा चाहे दो आदमियो की हो, चाहे दो राष्ट्रो की हो, कोई फर्क थोड़े ही है। वह रूस की हो या अमरीका की हो कोई फर्क थोड़े ही है। प्रतिस्पर्धा है, आगे होना है। अगर तुम एटम बम बनाते हो तो हम हाइड्रोजन बम बनाते है और यदि तुम हाइड्रोजन बनाओगे तो हम कुछ और बनायेंगे, सुपर हाइड्रोजन बम बनायेंगे। लेकिन पीछे हम नही रह सकते। पीछे रहना हमे कभी सिखाया नही गया है। हमे आगे होना है। अगर तुम दस मारते हो तो हम बीस मारेंगे। अगर तुम एक मुल्क मिटाते हो तो हम दो मिटा देंगे। हम इस तक के लिए राजी हो सकते है क्योंकि हम पीछे नही रह सकते। यह कौन पैदा कर रहा है ? यह सारी बात शिक्षा से आ रही है।

लेकिन हम अन्धे हैं और हम यह देखते नही कि मामला क्या है। बच्चो को हम क्या सिखाते है ? उनको सिखाते हैं कि लोभी मन बनो, भयभीत मत बनो, लेकिन करते क्या हैं ? हम पूरे वक्त लोभ सिखाते हैं, पूरे वक्त भय

सिखाते हैं। पुराने जमाने मे नरक के भय थे, स्वर्ग के पुरस्कार का प्रलोभन था। वह हजारो साल तक सिखाया गया। पूरे प्राण ढीले कर दिये गये आदमी के। भय और लोभ के सिवाय उसमे कुछ नही बचा। भय है कि नरक न चला जाऊ और लोभ है कि किसी भाति स्वर्ग चला जाऊ। हम भी यही करते हैं? हम बच्चो को या तो दण्ड देते हैं या पुरस्कार। हमारा सिखाने का रास्ता क्या है? सिखाने का रास्ता है भय या लोभ। या तो मारो और सिखाओ या फिर प्रलोभन दो कि हम यह देगे—गोल्डमैडल देगे, इज्जत देगे, नौकरी देगे, समाज मे स्थान मिलेगा, ऊचा पद देगे, नवाब बना देंगे, तहसील-दार बना देंगे, तुम राष्ट्रपति हो जाओगे। ये प्रलोभन है और ये प्रलोभन हम छोटे छोटे बच्चो के मन मे जगाते हैं। हमने कभी उनको सिखाया क्या कि तुम ऐसा जीवन बसर करना कि तुम शान्त रहो, आनन्दित रहो? नही, हमने सिखाया है कि तुम ऐसा जीवन बसर करना कि तुम ऊची से ऊची कुर्सी पर पहुच जाओ। तुम्हारी तनख्वाह बहुत बडी हो जाय, तुम्हारे कपडे अच्छे से अच्छे हो जाये। हमने उन्हे यही सिखाया है कि तुम लोभ को आगे से आगे खीचना, क्योकि वही सफलता है और जो सफल है उसके लिए ही कोई स्थान है।

इस पूरी शिक्षा मे असफल के लिए कोई स्थान नही है, असफल के लिए कोई जगह नही है। केवल सफलता की धुन और ज्वर हम पैदा करते हैं तो फिर स्वाभाविक है कि सारी दुनिया मे जो सफल होना चाहता है वह जो बन सकता है, करता है। और सफलता आखिर मे सब छिपा देती है। एक आदमी किस भाति चपरासी से राष्ट्रपति बनता है, एक दफा राष्ट्रपति बन जाय तो फिर कुछ पता नही चलता कि वह कैसे राष्ट्रपति बना, कौन सी तिकडम से, कौन सी शरारत से, कौन सी बेईमानी से, कौन से झूठ से, किस भाति से राष्ट्रपति बना, कोई जरूरत अब पूछने की नही है। न दुनिया मे अब कोई पूछेगा, न पूछने का सवाल उठेगा। एक दफा सफलता आ जाय तो सब पाप छिप जाते हैं और समाप्त हो जाते हैं। सफलता एकमात्र सूत्र है। तो जब सफलता एकमात्र सूत्र है तो मै झूठ बोलकर क्यो न सफल हो जाऊ? बेईमानी करके क्यो न सफल हो जाऊ? अगर सत्य बोलता हू और असफल होता हू, तो क्या करू? तो हम एक तरफ सफलता को केन्द्र बनाये हैं और जब झूठ बढता है, बेईमानी बढती है तो परेशान होते हैं कि यह क्या मामला है।

जब तक सफलता एकमात्र केन्द्र है, सारी कसौटी का एकमात्र मापदण्ड

है, तब तक दुनिया मे झूठ रहेगा, बेईमानी रहेगी, चोरी रहेगी, यह नहीं हट सकती। क्योकि अगर चोरी से सफलता मिलती है तो क्या किया जाय ? अगर बेईमानी से सफलता मिलती है तो क्या किया जाय ? बेईमानी से बचा जाय कि सफलता छोडी जाय, क्या किया जाय ? अब सफलता एकमात्र माप है, एकमात्र मूल्य है, एकमात्र वैल्यू है कि वह आदमी महान है जो सफल हो गया तो फिर बाकी सब बातें अपने आप गौण हो जाती हैं। फिर रोते हैं हम, चिल्लाते हैं कि बेईमानी बढ़ रही है, यह हो रहा है, वह हो रहा है। यह सब बढ़ेगी, बढनी चाहिए। आप जो सिखा रहे हैं यह फल है उसका, पाच हजार साल से जो सिखा रहे हैं यह फल है उसका। सफलता कोई मूल्य नही है। सफल आदमी होना कोई बडी सम्मान की बात नही है। सफल नही सुफल होना चाहिए आदमी को, सफल नहीं सुफल। एक आदमी बुरे काम मे सफल हो जाय इससे बेहतर है कि एक आदमी भले काम मे असफल हो जाय। सम्मान काम से होना चाहिए, सफलता से नही। लेकिन सफलता मूल्य है और सारा जीवन उसके केन्द्र पर घूम रहा है।

एजूकेशन कमीशन बैठा था अभी। उसके चेयरमैन ने कहा कि हम अपने बच्चो को कहते हैं कि तुम सत्य बोलो। सब तरह समझाते हैं लेकिन फिर कभी वे झूठ बोलते हैं। मैने उनसे कहा कि क्या आप पसन्द करेंगे कि आपका लडका सडक पर भगी हो जाय, बोहारी लगाये या एक स्कूल मे चपरासी हो जाय ? पसन्द करेंगे ? या कि आपका दिल है कि लडका भी आपकी तरह एजूकेशन कमीशन का चेयरमैन हो ? हिन्दुस्तान के बाहर राजदूत (अम्बेसेडर) हो धीरे धीरे चढे सीढिया और ऊपर बैठ जाय और आखिर मे भगवान हो जाय ? क्या आप राजी हैं इस बात के लिए कि आपका लडका सडक पर बोहारी लगाये और आपको कोई तकलीफ न हो। उन्होने कहा कि नही, तकलीफ तो होगी। तो मैने कहा कि अगर तकलीफ होगी तो फिर आप लडके से चाहते नही है कि वह सत्य बोले, ईमानदार हो।

जब तक चपरासी अपमानित है और राष्ट्रपति सम्मानित है तब तक दुनिया मे ईमानदारी नहीं हो सकती क्योकि चपरासी कैसे बैठा रहे चपरासी की जगह पर, और जिन्दगी इतनी बडी नही है कि सत्य का सहारा लिए बैठा रहे। और असत्य सफलता लाता हो तो कौन पागल होगा जो उसे छोड दे ? और न केवल आप मानते हैं बल्कि मामले कुछ ऐसे हैं कि आपने जिस भगवान को बनाया है, जिस स्वर्ग को, वह भी इन सफल लोगो को मानता है। चपरासी

मरता है तो नरक जाने की सम्भावना है, राष्ट्रपति कभी नरक नही जाते। सीधे स्वर्ग जाते हैं। वहा भी सिक्के यही लगाकर रखे हुए हैं कि वहा भी जो सफल है वही प्रवेश पायेगा। तो फिर क्या होगा ?

सफलता का केन्द्र खत्म करना होगा। अगर बच्चे से आपको प्रेम है और मनुष्य जाति के लिए आप कुछ करना चाहते हैं तो बच्चो के लिए सफलता के केन्द्र को हटाइये, सुफलता के केन्द्र को पैदा करिये। अगर मनुष्य जाति के लिए कोई भी आपके हृदय मे प्रेम है और आप सच में चाहते हैं कि एक नयी दुनिया, एक नयी सस्कृति और एक नया आदमी पैदा हो जाय तो सारी पुरानी बेवकूफी छोडनी पडेगी, जलानी पडेगी, और नष्ट करनी पडेगी और विचार करना पडेगा कि विद्रोह कैसे हो सकता है इसके भीतर से। सब गल्त है इस लिए गल्त आदमी पैदा होता है।

शिक्षक बुनियादी रूप मे इस जगत मे सबसे बडा विद्रोही व्यक्ति होना चाहिए तब वह पीढ़ियो को आगे ले जायगा। लेकिन अभी तो शिक्षक सबसे बडा दकियानूस है, सबसे बडा ट्रेडिशनलिस्ट वही है, वही दोहराये जाता है पुराने कचडे को। क्रान्ति शिक्षक मे होता नही है। आपने सुना है कि कोई शिक्षक क्रान्तिपूर्ण हो ? शिक्षक सबसे ज्यादा दकियानूस, सबसे ज्यादा आर्थोडाक्स है, इसलिए शिक्षक सबसे खतरनाक है। समाज उससे हित नही पाता है, अहित पाता है। शिक्षक को होना चाहिए विद्रोही। कौन सा विद्रोही ? मकान मे आग लगा दे आप, या कुछ और कर दें, या जाकर ट्रेन उल्ट दें या बसो मे आग लगा दें ? नहीं, मै उनको विद्रोही नही कह रहा हू, गल्ती से वैसा न समझ लें। मै कह रहा हू कि तुम्हारे जो मूल्य हैं, हमारे जो वैल्यूज हैं, उनके बाबत विद्रोह का रुख, विचार का रुख होना चाहिए कि यह मामला क्या है।

जब आप एक बच्चे को कहते है कि तुम गधे हो, तुम नासमझ हो, तुम बुद्धिहीन हो, देखो उस दूसरे को वह कितना आगे है, तब आप विचार करें कि यह कितने दूर तक ठीक है और कितने दूर तक सच है। क्या दुनिया में दो आदमी एक जैसे हो सकते हैं ? क्या यह सम्भव है कि जिसको आप गधा कह रहे हैं वह वैसा हो जायगा जैसा कि आगे खडा है ? क्या यह आज तक सम्भव हुआ है ? हर आदमी जैसा है, अपने जैसा है, दूसरे आदमी से तुलना (कम्पेरीजन) का कोई सवाल ही नहीं है। किसी दूसरे आदमी से उसका कोई कम्पेरीजन नहीं, उसकी कोई तुलना नहीं। एक छोटा ककड है वह छोटा ककड है, एक बड़ा ककड है वह बडा ककड है। एक छोटा पौधा है वह छोटा पौधा है। एक

बडा पौधा है वह बडा पौधा है। एक घास का फूल है वह घास का फूल है। एक गुलाब का फूल है वह गुलाब का फूल है।

प्रकृति का जहा तक सम्बन्ध है, घास के फूल पर प्रकृति नाराज नहीं है और गुलाब के फूल पर प्रसन्न नही है। घास के फूल को भी प्राण देती है उतनी ही खुशी से जितनी गुलाब के फूल को देती है। और मनुष्य को हटा दें तो घास के फूल और गुलाब के फूल मे कौन छोटा है, कौन बडा है, कोई छोटा और बडा नही है। घास का तिनका और बडे भारी चीड के दरख्त मे दरख्त महान होता और यह घास का तिनका छोटा होता तो परमात्मा कभी का घास के तिनके को समाप्त कर देता और चीड ही चीड के दरख्त रह जाते दुनिया मे। नहीं, लेकिन आदमी की वैल्यूज गलत है। जब तक दुनिया मे हम एक आदमी को दूसरे आदमी से तुलना (कम्पेयर) करेंगे तब तक हम गलत रास्ते पर चलते रहेंगे। वह गलत रास्ता यह है कि हम हर आदमी मे दूसरे आदमी जैसा बनने की इच्छा पैदा करते हैं। जब कि कोई आदमी न तो दूसरे जैसा बना है और न बन सकता है।

राम को मरे कितने दिन हो गये, या क्राइस्ट को मरे कितने दिन हो गये? दूसरा क्राइस्ट क्यो नही बन पाता जबकि हजारो क्रिश्चियन कोशिश मे चौबीस घटे लगे है कि क्राइस्ट बन जायें? हजारो राम बनने की कोशिश मे हैं, हजारो महावीर, बुद्ध बनने की कोशिश मे है लेकिन एकाध दूसरा क्राइस्ट और दूसरा महावीर क्यो नही पैदा होता? क्या इससे आख नही खुल सकती आपकी? मै रामलीला के रामो की बात नहीं कह रहा हू जो रामलीला मे बनते हैं राम। न, आप यह न समझ लें कि मै उनकी चर्चा कर रहा हू। वैसे तो कई लोग राम बन जाते हैं, कई लोग बुद्ध जैसे कपडे लपेट लेते हैं और बुद्ध बन जाते हैं। कई लोग महावीर जैसे नगे हो जाते हैं और महावीर बन जाते हैं। मै उनकी बात नही कर रहा। वे सब रामलीला के राम हैं, उनको छोड कर दूसरा कोई राम पैदा क्यो नही होता है? यह आपको जिन्दगी मे भी पता चलता है कि ठीक एक आदमी जैसा दूसरा आदमी नही हो सकता है। एक ककड जैसा दूसरा ककड भी पूरी पृथ्वी पर खोजना कठिन है—यहां हर चीज यूनिक है और हर चीज अद्वितीय है। और जब तक हम प्रत्येक की अद्वितीय प्रतिभा को सम्मान नही देगे तब तक दुनिया मे प्रतियोगिता रहेगी, प्रतिस्पर्धा रहेगी। तब तक दुनिया मे मारकाट रहेगी, तब तक दुनिया मे हिंसा रहेगी, तब तक दुनिया मे सब बेईमानी के उपाय से आदमी आगे होना चाहेगा, दूसरे जैसा होना चाहेगा।

जब हर आदमी दूसरे जैसा होना चाहता है तो क्या फल होता है ? फल यह होता है, अगर एक बगीचे मे सब फूलो का दिमाग फिर जाय या बडे-बडे आदर्श-वादी नेता वहा पहुच जायें या बडे-बडे शिक्षक वहा पहुच जायें और उनको समझाये कि देखो, चमेली का फूल चम्पा जैसा हो जाय, और चम्पा का फूल जुही जैसा, क्योंकि देखो जुही कितनी सुन्दर है और सब फूलो मे पागलपन आजाय, हालाकि, आ नही सकता। क्योंकि आदमी जैसे पागल फूल नही है । आदमी मे ज्यादा जडता उनमे नहीं है कि वे चक्कर मे पड जाये शिक्षको के, उपदेशको के, सन्या-सियो के, आदर्शवादियो के, साधुओ के, इनके चक्कर मे कोई फूल नही पडेगा। लेकिन फिर भी समझ ले और कल्पना कर ले कि कोई आदमी जाये और समझाये उनको और वे चक्कर मे आ जाये और चमेली का फूल, चम्पा का फूल होने की कोशिश मे लग जाए तो क्या होगा उस बगिया मे ? उस बगिया मे फूल फिर पैदा नही हो सकते । उस बगिया मे फिर पौधे मुरझा जायेगे मर जायेगे । क्यो ? क्योकि चम्पा लाख उपाय करे तो चमेली नही हो सकती, वह उसके स्वभाव मे नहीं है, वह उसके व्यक्तित्व मे नहीं है, वह उसकी प्रकृति मे नही है। चमेली तो चम्पा हो ही नहीं सकती। लेकिन क्या होगा, चमेली चम्पा होने की कोशिश मे चमेली भी नही हो पायेगी । वह जो हो सकती थी उससे भी वंचित हो जायगी ।

मनुष्य के साथ यही दुर्भाग्य हुआ है। सबसे बडा दुर्भाग्य और अभिशाप जो मनुष्य के साथ हुआ है वह यह कि हर आदमी किसी और जैसा होना चाह रहा है। लेकिन कौन सिखा रहा है यह ? यह षडयन्त्र कौन कर रहा है ? यह हजार हजार साल से शिक्षा कर रही है । वह कह रही है राम जैसे बनो, बुद्ध जैसे बनो । यह पुरानी तस्वीर अगर फीकी पड गयी तो गाधी जैसे बनो, विनोबा जैसे बनो। किसी न किसी जैसा बनो लेकिन अपने जैसा बनने की भूल कभी न करना क्योंकि तुम तो बेकार पैदा हुए हो ! असल मे तो गान्धी ही मतलब से पैदा हुए और भगवान ने भूल की कि जो आपको पैदा किया ! अगर भगवान समझदार होता तो राम और बुद्ध जैसे कोई दस पन्द्रह आदमी के टाइप पैदा कर देता दुनिया मे । या कि बहुत ही समझदार होता, जैसा कि सभी धर्मों के लोग बहुत ही समझदार होते हैं तो फिर एक ही टाइप पैदा कर देता । फिर क्या होता ? अगर दुनिया मे समझ ले कि तीन अरब राम ही राम हैं तो कितनी देर चलेगी दुनिया ? १५ मिनट मे सारी दुनिया आत्मघात कर लेगी, इतनी बोरडम पैदा होगी। कभी सोचा है कि सारी दुनिया मे गुलाब

ही गुलाब के फूल हो जायें और सारे पौधे गुलाब के फूल पैदा करने लगें तो क्या होगा ? फूल देखने लायक भी नहीं रह जायेंगे। उनकी तरफ आख करने की भी जरूरत नहीं रह जायगी।

यह व्यर्थ नही है कि प्रत्येक व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व होता है। यह गौरवशाली बात है कि आप किसी दूसरे जैसे नहीं हैं। यह कम्पेरीजन कि कोई ऊचा है कोई नीचा है, नासमझी की बात है। कोई ऊचा और नीचा नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी जगह है और प्रत्येक दूसरा व्यक्ति अपनी जगह। नीचे ऊचे की बात गलत है। सब तरह का वैल्यूएशन गलत है। लेकिन हम यह सिखाते रहे है। विद्रोह से मेरा मतलब है इस तरह की सारी बातो पर विचार, इस तरह की सारी बातो पर विवेक, इस तरह की एक एक बात को देखना कि मै क्या सिखा रहा हू इन बच्चो को। जहर तो नही पिला रहा हू ? बडे प्रेम से भी जहर पिलाया जा सकता है और बडे प्रेम से मा-बाप और शिक्षक जहर पिलाते रहे हैं, लेकिन अब यह टूटना चाहिए।

दुनिया मे अब तक धार्मिक क्रातिया हुई । एक धर्म के लोग दूसरे धम के हो गये। कभी समझाने बुझाने से हुए, कभी तलवार छाती पर रखने से हो गये लेकिन कोई फर्क नही पडा। हिन्दू मुसलमान हो जाय तो वैसे का वैसा आदमी रहता है, मुसलमान ईसाई हो जाय तो वैसे का वैसा आदमी रहता है, कोई फर्क नही पडा धार्मिक क्रान्तियो मे। राजनैतिक क्रान्तिया हुई हैं। एक सत्ताधारी बदल गया, दूसरा बैठ गया। कोई जो दूसरे की जमीन पर रहता था, वह बदल गया, जो पास की जमीन पर रहता था, वह बैठ गया। किसी की चमडी गोरी थी, वह हट गया। किसी की चमडी काली थी वह बैठ गया। भीतर का सत्ताधारी वही का वही है। आर्थिक क्रान्तिया हो गयी हैं दुनिया मे। मजदूर बैठ गये, पूजीपति हट गये, लेकिन बैठने से मजदूर पूजीपति हो गया। पूजीपति चला गया तो उसकी जगह मैनेजर्स (व्यवस्थापक) आ गये। वह भी उतने ही दुष्ट और खतरनाक हो गये, कोई फर्क नहीं पडा। वर्ग बने रहे। पहले वर्ग थे--जिसके पास धन था एक वह, और जिसके पास धन नही था एक वह। अब वर्ग हो गये--जिसमे धन वितरित किया जाता है एक वह, और जो धन वितरित करता है एक वह। जिसके पास ताकत है, सत्ता मे है वह, और दूसरा है सत्ताहीन, वह जो सत्ता मे नही है। नये वर्ग बन गये लेकिन वर्ग भेद कायम रहा।

इन चार पाच हजार वर्षों मे जितने प्रयोग हुए हैं मनुष्य के कल्याण

के लिए वे सब असफल हो गये। अभी तक एक ही प्रयोग नहीं हुआ है और वह है शिक्षा मे क्रान्ति। यह प्रयोग शिक्षक के ऊपर है कि वह करे और मुझे लगता है यही सबसे बडी क्रान्ति हो सकती है। राजनीतिक, आर्थिक या धार्मिक कोई क्रान्ति का इतना मूल्य नही जितना शिक्षा मे क्रान्ति का मूल्य है। लेकिन शिक्षा में क्रान्ति कौन करेगा? वे विद्रोही लोग कर सकते हैं जो सोचें, विचार करें कि हम यह क्या कर रहे हैं, और इतना तय समझें कि जो भी अभी आप कर रहे हैं वह जरूर गलत है क्योकि उसका परिणाम गलत है। यह जो मनुष्य पैदा हो रहा है, यह जो समाज बन रहा है, यह जो युद्ध हो रहे हैं, यह जो सारी हिंसा चल रही है यह जो इतनी पीडा, दीनता और दरिद्रता है, यह सब कहा से आ रहे हैं? जरूर हम जो शिक्षा दे रहे हैं उसमे कुछ बुनियादी भूल है। तो इस पर विचार करें और जागें लेकिन आप तो कुछ और हिसाब मे पडे रहते होगे। शिक्षको के सम्मेलन होते हैं तो वे विचार करते हैं कि विद्यार्थी बडे अनुशासनहीन हो गये इनको डिस्सीप्लिन मे कैसे लाया जाय। कृपा करें, इनको पूरी तरह अनुशासनहीन हो जाने दें, क्योंकि आपकी डिस्सी-प्लिन का परिणाम क्या हुआ है, पाच हजार साल मे? हजारो साल से तो डिप्सीप्लिन मे थे, क्या हुआ उससे?

और अनुशासन सिखाने का मतलब क्या है? मतलब है कि हम जो कहें उसको ठीक मानो। हम ऊपर बैठें तो तुम नीचे बैठो हम जब निकलें तो दोनों हाथ जोडकर प्रणाम करो या और ज्यादा डिस्सीप्लिन हो तो पैर छुओ और हम जो कहें उस पर शक मत करो। या हम जिधर कहें उधर जाओ, हम कहें बैठो तो बैठ जाओ, हम कहें उठो तो उठ जाओ। यह डिस्सीप्लिन है या डिस्सीप्लिन के नाम पर आदमियो को मारने की करतूत है! कोशिश है कि उसके भीतर कोई चैतन्य न रह जाय, उसके भीतर कोई होश न रह जाय, उसके भीतर कोई विवेक और विचार न रह जाय।

मिलिट्री में क्या करते हैं? एक आदमी को तीन चार साल तक कवायद करवाते हैं, लेफ्ट राइट करवाते हैं। कितनी बेवकूफी की बातें हैं कि एक आदमी से कहो बाये घूमो, दायें घूमो। घुमाते रहो तीन चार साल तक, उसकी बुद्धि नष्ट हो जायगी। एक आदमी को दायें बाये घुमाओगे तो क्या होगा? कितनी देर तक उसकी बुद्धि स्थिर रहेगी। उससे कहो बैठो, उससे कहो खडे रहो, दौडो और जरा इन्कार करे तो मारो। तीन चार साल मे उसकी बुद्धि क्षीण हो जायेगी, उसकी मनुष्यता मर जायेगी। उससे कहो राइट टर्न तो वह

मशीन की तरह घूमता है, कहो बन्दूक चलाओ तो वह मशीन की तरह बन्दूक चलाता है। उससे कहो मारो तो वह आदमी को मारता है। वह आदमी नहीं रह गया, वह मशीन हो गया। यह डिस्सीप्लिन है और यह हम चाहते है कि बच्चो मे भी हो। बच्चो मे मिल्ट्रीलाइजेशन हो, उनको एन०सी०सी० सिखाओ मार डालो दुनिया को ! सैनिक शिक्षा दो, बन्दूक पकडवाओ, लेफ्टराइट करवाओ, मारो दुनिया को। पाच हजार साल मे मै नही समझता कि आदमी को कोई समझ आयी हो कि इन चीजो के मतलब क्या है। डिस्सीप्लिन से आदमी डैड (मृत) होता है। जितना अनुशासित आदमी होगा उतना मुर्दा होगा।

तो क्या मै यह कह रहा हू कि लडको से कहा कि विद्रोह करो, दौडो कूदो क्लास मे, पढाने मत दो ? नहीं, यह नही कह रहा हू। यह कह रहा हू कि आप प्रेम करो बच्चो से, बच्चो के हित, भविष्य की मगलकामना करो। उस प्रेम से, उस मगलकामना से, अनुशासन आना शुरू होता है। फिर वह थोपा हुआ नही है, वह बच्चो के विवेक से पैदा होता है। एक बच्चे को प्रेम करो और देखो कि वह प्रेम उसमे अनुशासन लाता है। अनुशासन फिर उसकी आत्मा से जगता है, दिल की ध्वनि से जगता है, थोपा नही जाता है, उसके भीतर से आता है। उसके विवेक को जगाओ उसके विचार को जगाओ, उसे बुद्धिहीन मत बनाओ। उससे यह मत कहो कि हम जो कहते है वही सत्य है। सत्य का पता है आपको ? लेकिन आदमी कहता है कि मै जो कहता हू वही सत्य है। इसमे कोई फर्क नही पडता है कि आप तीस साल पहले पैदा हुए और वह तीस साल पीछे तो इससे आप सत्य के जानकार हो गये और वह सत्य का जानकार न रहा। जितना अज्ञान आपमे हो उससे शायद कम अज्ञान मे वह हो क्योंकि अभी वह कुछ भी नही जानता है और आप न मालूम कौन कौन सी नासमझी, न मालूम क्या क्या नानसेंस जानते है, लेकिन आप ज्ञानी है क्योकि आपकी तीस साल उम्र ज्यादा है।

आपके हाथ मे डण्डा है इसलिए आप उसको डिस्सीप्लिन करना चाहते है। डिस्सीप्लिन न कोई किसी को करे तो दुनिया बेहतर हो सकती है। प्रेम करें, प्रेम आपका सहायक है। आप प्रेमपूर्ण जीवन जिये। आप मगलकामना करे उसके हित की, सोचे उसके हित के लिए कि क्या हो सकता है और वह प्रेम, वह मगलकामना असम्भव है कि उसके भीतर अनुशासन न ला दे, आदर न ला दे। फर्क होगा। अभी जो जितना चैतन्य बच्चा है वह उतना ही ज्यादा इनडिस्सीप्लिन मे होगा और जो जितना इडियट है, जड बुद्धि है वह उतना डिस्सीप्लिन मे

होगा। जिस बात को मैं कह रहा हूं अगर प्रेम के माध्यम से अनुशासन आये तो जितने इडियट है उनमें कोई अनुशासन पैदा नही होगा लेकिन जो जितना चैतन्य है उसमें उतना ही ज्यादा अनुशासन पैदा होगा। अभी अनुशासन में वह है जो डल है, जिसमें कोई जीवन नही है, स्फुरणा नही है। अभी वह अनुशासनहीन है जिसमें चैतन्य है, विचार है। अगर प्रेम हो तो वह अनुशासनबद्ध होगा जिसमें विचार है और चैतन्य है और वह अनुशासनहीन होगा जो जड है। जडता के अनुशासन का कोई मूल्य नहीं है। चैतन्यपूर्वक जो अनुशासन है उसका मूल्य है क्योंकि चैतन्यपूर्वक अनुशासन का अर्थ यह होता है कि वह विचारपूर्वक अनुशासन में है और आप गलत अनुशासन की माग करेंगे तो वह इन्कार कर देगा।

अगर हिन्दुस्तान पाकिस्तान के युवक विवेकपूर्वक अनुशासन में हों तो क्या यह सम्भव है कि पाकिस्तान की हुकूमत उनसे कहे कि जाओ हिन्दुस्तान के लोगों को मारो तो वे बन्दूकें उठा लें और युद्ध के मैदान पर चले जायें? या हिन्दुस्तान के युवक, अगर अनुशासन में विवेकपूर्वक हों तो क्या यह सम्भव है कि कोई राजनीतिज्ञ उनसे कहे कि जाओ और पाकिस्तान के लोगों को मारो? वह कहेंगे कि यह बेवकूफी की बातें बन्द करो। हम समझते हैं कि क्या विवेकपूर्वक है, यह हम नही कर सकते। लेकिन अभी तो जडबुद्धि को अनुशासन सिखाया गया है। उनसे कहो मारो तो फिर वे बिल्कुल ही नही देखते, क्योंकि उनके लिए अनुशासन ही सत्य है, वे उसको ही मानते हैं। दुनिया में राजनीतिज्ञों ने, धर्म के पुरोहितों ने खूब शिक्षा दी है कि अनुशासन होना चाहिए। क्योंकि अनुशासित आदमी में कोई विवेक नही होता, कोई विद्रोह नहीं होता कोई विचार नही होता। उनकी तो पूरी कोशिश है कि सारी दुनिया मिल्ट्री कैम्प हो जाय। कोई आदमी कोई गडबड न करे, यह कोशिश चल रही है हजार हजार ढंग से।

शायद आपको पता न हो। अब बहुत से रास्ते अख्तियार किए गये हैं। अब रूसवालों ने माइंड वाश निकाल लिया है एक मशीन बना ली है। जिस आदमी के दिमाग में विद्रोह होगा, विचार होगा उसके दिमाग को वह मशीन द्वारा साफ कर देंगे, उसके विचार को खत्म कर देंगे। क्योंकि विद्रोही आदमी खतरनाक है, वह हुकूमत के खिलाफ बोल सकता है लोगों को भडका सकता है कि यह गलत है, यह जो व्यवस्था है गलत है। इसलिए उसके दिमाग को ठण्डा ही कर देंगे। पहले अनुशासन की

तरकीब चलती थी, वह पूरी तरह कारगर न हुई। फिर भी कुछ विद्रोही पैदा हो जाते थे। अब उन्होने नई तरकीब निकाली है कि जिस बच्चे के दिमाग मे भी शक–शुबहा हो वह उसके दिमाग को ठीक कर देगी। ये बड़े खतरनाक मामले हैं जो सारी दुनिया मे चल रहे है। एटम बम और हाइड्रोजन बम से भी ज्यादा खतरनाक ईजाद यह है।

लेकिन क्या शिक्षक इसमे सहयोगी होगा ? मै इस प्रश्न पर ही चर्चा को आप पर छोडना चाहूगा कि क्या आप इस दुनिया से सहमत है ? इस मनुष्य से सहमत हैं जैसा आज आदमी है ? इन युद्धो से, हिंसा से, बेईमानी से सहमत हैं ? यदि नही तो पुर्नविचार करिये, आपकी शिक्षा मे कही कोई बुनियादी भूल है। आप जो दे रहे हैं वह गलत है। शिक्षक ज्यादा विद्रोही हो, विवेक और विचारपूर्ण उसकी जीवनदृष्टि हो तो वह समाज के लिए हितकर है, भविष्य में नये से नये समाज पैदा होने मे सहयोगी है। और अगर वह यह नही है तो वह केवल पुराने मुर्दों को नये बच्चो के दिमाग मे भरने के काम के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर रहा है। इसी काम को वह पहले से करता चला आया है। लेकिन अब एक क्रान्ति होनी चाहिए, एक बडी क्रान्ति होनी चाहिए कि शिक्षा का आमूल ढाचा तोड दिया जाय और एक नया ढाचा पैदा किया जाय और उस नये ढाचे के मूल्य अलग हो। सफलता उसका मूल्य न हो, महत्वाकाक्षा उसका मूल्य न हो, आगे और पीछे होना सम्मान-अपमान की बात न हो। एक व्यक्ति की दूसरे व्यक्ति से कोई तुलना न हो। प्रेम हो, प्रेम से बच्चो के विकास की चेष्टा हो। यह हो सके तो एक नई, बिल्कुल नई सुवास से भरी अद्‌भुत दुनिया पैदा की जा सकती है।

यह थोडी सी बाते मैने आपसे कहीं इस ख्याल से कि कही कोई नीद मे हो तो थोडा बहुत तो जागे। लेकिन कई लोगो की नीद इतनी गहरी होती है कि वह केवल यही समझ रहे होगे कि मै क्या गडबड कर रहा हू, नींद सब खराब किये दे रहा हू। लेकिन अगर थोडा बहुत भी जागे, थोडा बहुत भी आख खोलकर देखे तो जो मैने कहा है शायद उसमे से कोई बात उपयोगी और ठीक लगे।

यह मै नही कहता हू कि मैने जो कहा है वह सच है, और ठीक है क्योकि यह तो पुराना शिक्षक कहता है। यह तो आप कहते है। मै तो यह कह रहा हू कि मैने अपनी दृष्टि आपको बतायी वह बिल्कुल ही गल्त भी हो सकती है। हो सकता है उसमे कण मात्र भी सत्य न हो, इसलिए यह नही कह रहा हू कि मैने जो कहा है उसपर विश्वास कर लें। मै कहता हू, उस पर विचार

करना है। थोड़ा सा विचार करना और उसमे से कुछ ठीक लगे तो वह मेरी बात नहीं होगी, आपका अपना विचार होगा, उस कारण आप मेरे अनुयायी नही बन जायेंगे। उस कारण आपने मेरी बात स्वीकार की ऐसा समझने की कोई जरूरत नही क्योकि वह आप अपने विवेक से जाने और पहचाने हैं वह बात आपकी बन गयी है।

यह थोडी सी बाते कही ताकि आप कुछ विचार करें। दुनिया मे इस वक्त बहुत धक्का देने की जरूरत है ताकि कुछ विचार पैदा हो सकें। क्योकि हम करीब करीब सो गये है, करीब करीब मर ही गये हैं और सब चला जा रहा है। भगवान करे थोडा बहुत धक्का कई तरफ से लगे और आप आख खोले और थोडा बहुत सोचे। शिक्षक की सबसे बडी जिम्मेवारी है। राजनीतिज्ञो से बचें, राष्ट्रपतियो से, प्रधान-मन्त्रियो से बचे। इस नासमझी की वजह से तो इस दुनिया मे सारी परेशानी है, इसी पोलिटीशियन की वजह से सारे उपद्रव है। इससे बचे और बच्चो मे पोलिटीशियन्स पैदा न होने दे। लेकिन अभी आप एम्बीशन के द्वारा वह पैदा कर रहे हैं। नम्बर एक आओ! फिर आगे क्या होगा? आगे कहा जाइयेगा? फिर नम्बर एक तो पोलिटिक्स मे ही आ सकते हैं और कोई तो आता नही। और किसी के तो अखबार मे फोटो नही छपते। नम्बर एक तो वही आ सकते हैं और वह वही आयेंगे।

तो कृपा करें और बच्चो मे प्रतिस्पर्धा पैदा न होने दें। प्रेम जगाये, जीवन के प्रति आनन्द जगाये—प्रतियोगिता नहीं, प्रतिस्पर्धा नही। क्योकि जो दूसरे से जूझता है वह धीरे धीरे जूझने मे ही समाप्त हो जाता है। और जो अपने आनन्द को खोजता है, दूसरे से प्रतियोगिता को नही, उसका जीवन एक अद्भुत फूल की भाति हो जाता है, जिसमें सुवास होती है, सौन्दर्य होता है। परमात्मा करे, यह बुद्धि आप मे आये, परमात्मा करे यह विद्रोह आपमे आये।

आठ : नारी और क्रांति

नारी और क्रांति

मनुष्य के इतिहास मे नारी जाति के साथ जो अत्याचार और अनाचार हुआ है उसके परिणाम मे पूरी मनुष्य जाति के जो अहित हुए हैं, उस सम्बन्ध मे थोडी बात कहना चाहता हू।

मनुष्य की पूरी जाति, मनुष्य का पूरा जीवन, मनुष्य की पूरी सभ्यता और सस्कृति अधूरी है क्योकि नारी ने उस सस्कृति के निर्माण मे कोई भी दान, कोई भी 'कट्रीब्यूशन' नहीं किया। नारी कर भी नही सकती थी। पुरुष ने उसे करने का कोई मौका भी नही दिया। हजारो वर्षों तक स्त्री पुरुष से नीची, छोटी और हीन समझी जाती रही है। कुछ तो देश ऐसे थे जैसे चीन मे हजारो वर्ष तक यह माना जाता रहा कि स्त्रियो के भीतर कोई आत्मा नही होती। इतना ही नहीं, स्त्रियो की गिनती जड पदार्थों के साथ की जाती थी। आज से सौ बरस पहले चीन मे अपनी पत्नी की हत्या पर किसी पुरुष को, किसी पति को कोई भी दण्ड नही दिया जाता था क्योकि पत्नी उसकी सम्पदा थी। वह उसे जीवित रखे या मार डाले, इससे कानून का और राज्य का कोई सम्बन्ध नहीं।

भारत मे भी स्त्री को पुरुषो के सम्मान मे, पुरुषो की समानता मे कोई अवसर और जीने का मौका नहीं मिला। पश्चिम मे भी वही बात थी। चूकि सारे शास्त्र, सारी सभ्यता और सारी शिक्षा पुरुषो ने निर्मित की है इसलिए पुरुषो ने अपने आप को बिना किसी से पूछे श्रेष्ठ मान लिया है। स्वभावत इसके घातक परिणाम हुए। सबसे बडा घातक परिणाम तो यह हुआ कि स्त्रियो के जो भी गुण थे वे सभ्यता के विकास मे सहयोगी न हो सके। सभ्यता अकेले पुरुषो ने विकसित की। और अकेले पुरुष के हाथ से जो सभ्यता विकसित होगी उसका अतिम परिणाम युद्ध के सिवाय और कुछ भी नही हो सकता। अकेले पुरुष के गुणो पर जो जीवन निर्मित होगा वह जीवन हिंसा के अतिरिक्त और कही नही ले जा सकता। पुरुषो की प्रवृत्ति मे, पुरुष के चित्त मे ही हिंसा का क्रोध का, युद्ध का कोई अनिवार्य हिस्सा है।

नीत्से ने आज से कुछ ही बीसी पहले यह घोषणा की कि बुद्ध और क्राइस्ट स्त्रैण रहे होगे क्योकि उन्होने करुणा और प्रेम की इतनी बाते कही है,

वे बाते पुरुषो के गुण नही है। नीत्से ने क्राइस्ट को और बुद्ध को स्त्रैण, स्त्रियो जैसा कहा है। एक अर्थ मे शायद उसने ठीक ही बात कही है वह इस अर्थ मे कि जीवन मे जो भी गुण है, जीवन मे जो भी माधुर्य से भरे सौदर्य, शिव की कल्पना और भावना है वह स्त्री का अनिवार्य स्वभाव है। मनुष्य की सभ्यता माधुर्य, प्रेम और सौदर्य से नही भर सकी। वह क्रूर और पुरुष हो गयी, कठोर और हिंसक हो गयी और अतिम परिणामो मे केवल युद्ध लाती रही।

इसके पीछे दो बातो का ही हाथ है। एक तो स्त्री के गुणो को कोई सम्मान नही दिया गया और दूसरी स्त्री ने कभी अपने गुणो को विकसित करने की कोई चेष्टा और कोई सक्रिय उपाय नही किया। यह जानकर आपको हैरानी होगी, अगर कोई स्त्री पुरुषो के गुणो मे आगे हो जाय तो उसे जोन आफ आर्क या रानी लक्ष्मी बाई कहते है और सारे जगत मे प्रशसा होती है कि वह रानी लक्ष्मी बाई जैसी बहुत बहादुर, सम्मान योग्य स्त्री है। लेकिन क्या कभी आपने यह सुना है कि कोई पुरुष स्त्रियो के गुणो मे विकसित हो जाय तो उसका कभी कोई सम्मान हुआ हो? अगर कोई पुरुष स्त्रियो जैसा प्रतीत हो तो उसका अपमान होगा और कोई स्त्री पुरुष जैसी प्रतीत हो तो उसका सम्मान होगा और चौरस्तो के ऊपर उसकी मूर्तिया खडी की जायेगी। पुरुषो ने अपने गुणो को अनिवार्य रूप से स्वीकार कर लिया है और स्त्रियो ने भी इस पर स्वीकृति दे दी, यह बहुत आश्चर्य की बात है। स्त्रियो ने कभी सोचा भी नही कि उनके व्यक्तित्व की भी अपनी कोई गरिमा, अपना कोई स्थान, अपनी कोई प्रतिष्ठा है। इस तीन चार हजार बरस की गुलामी के बाद एक विद्रोह, एक प्रतिक्रिया, एक 'रीएक्शन' पैदा होना शुरू हुआ और स्त्रियो ने यह घोषणा करनी शुरू कर दी कि हम पुरुषो के समान हैं और बराबर हैसियत और अधिकार मागती हैं। लेकिन फिर दोबारा भूल हुई जा रही है जिसका आपको शायद पता न हो। उस भूल के सम्बन्ध मे भी समझ लेना जरूरी है।

मै कहना चाहता हू कि स्त्रिया न तो पुरुषो से हीन हैं और न समान है। स्त्रिया पुरुषो से भिन्न है, वे बिल्कुल भिन्न है। न उनके नीचे होने का सवाल है, न उनके समान होने का सवाल है, स्त्रिया पुरुषो से बिल्कुल भिन्न है और जब तक स्त्रिया अपनी भिन्नता की भाषा मे, अपने अलग व्यक्तित्व की भाषा मे सोचना शुरू नही करेंगी तब तक या तो वे पुरुष की दास होगी या पुरुष की अनुयायी होगी और दोनो स्थितिया खतरनाक है। पश्चिम मे स्त्रियो ने एक बगावत की है, एक विद्रोह किया है और परिणाम यह हुआ है कि स्त्रिया

पुरुषों जैसे होने की दौड़ में, होड़ में पड़ गयीं। जो पुरुष करते हैं और जैसे पुरुष हैं वैसे ही स्त्रियो को भी हो जाना चाहिए। जो शिक्षा पुरुषो को मिलती है वही स्त्रियो को भी मिलनी चाहिए। अगर पुरुष युद्ध के मैदान में लड़ने जाते हैं तो स्त्रियों को भी युद्ध के ऊपर सैनिक बनकर उपस्थित होना चाहिए। इस बात की कल्पना भी नहीं है आपको कि पुरुषों की नकल मे स्त्रियां हमेशा द्वितीय कोटि की होगी, प्रथम कोटि की कभी भी नहीं हो सकतीं। क्योंकि जिन गुणो में वे प्रतिस्पर्धा करने जा रही हैं वे पुरुषो के लिए सहज गुण हैं और स्त्रियो के लिए असहज धर्म। ऐसी स्थिति मे स्त्रिया एकदम कुरूप, अपने स्वभाव से च्युत, जो हो सकती थीं उससे वंचित हो जायेंगी और परिणाम बड़े घातक होंगे जिनकी हमें कोई धारणा नही, कोई सपना भी नहीं।

जो शिक्षा पुरुषो को मिलती है वही शिक्षा स्त्रियो को देना अत्यन्त खतरनाक है, एकदम गलत है। उचित है कि पुरुष गणित सीखे, विज्ञान सीखे लेकिन बहुत उचित होगा कि स्त्री कुछ और सीखे जो पुरुष नहीं सीखता। उसे जीवन मे कुछ और करना है। उसके ऊपर जीवन ने कोई और दायित्व दिया है, कोई दूसरी रिस्पॉंसबिलिटी है उसके ऊपर। उसके ऊपर प्रेम का, सृजन का कोई दूसरा भार है। गणित सीख लेने से दूकानें चल सकती होंगी, बच्चे नहीं बड़े किये जा सकते। साइन्स से फैक्टरी चलती होगी लेकिन परिवार नहीं चल सकते और परिणाम यह हुआ है कि स्त्री को पुरुष जैसी दीक्षा, शिक्षा और समानता के भाव ने स्त्रियो से जो भी उनका महत्वपूर्ण गुण था वह सब छीन लिया है। उनके जीवन मे जो भी गौरवपूर्ण मातृत्व और पत्नीत्व था वह सब छीन लिया है। उनके भीतर जो भी स्त्रैण था वह सब नष्ट किया जा रहा है। वे करीब करीब पुरुष की शकल मे निर्मित की जा रही हैं और इससे वे बहुत प्रसन्न भी मालूम होती हैं। इस प्रसन्नता के लिए हजार-हजार आंसू आज नही कल स्त्रियो को बहाने ही पड़ेंगे।

शायद हमें इस बात का ख्याल नहीं कि स्त्री और पुरुष के चित्त मे बुनियादी भेद और भिन्नता है और यह भिन्नता अर्थपूर्ण है। पुरुष और स्त्री का सारा आकर्षण उसी भिन्नता पर निर्भर है। वे जितने भिन्न हो, वे जितने दूर हो, उनके भीतर पोलेरिटी हो, उत्तर और दक्षिण ध्रुवो की तरह उनमें जितनी भिन्नता हो उतनी ही उनके बीच कशिश और आकर्षण (ग्रेविटेशन) होगा। उतना ही उनके बीच प्रेम का जन्म होगा। जितना उनका फासला हो, उनकी भिन्नता हो, जितने उनके व्यक्तित्व अनूठे और अलग हो, जितने वे एक दूसरे

जैसे नही बल्कि एक दूसरे के परिपूरक (कम्प्लीमेंटरी) हो। अगर पुरुष गणित जानता हो और स्त्री भी गणित जानती हो तो वे दोनो बातें उन्हें निकट नहीं लाती। ये बाते उन्हें दूर ले जायेंगी। अगर पुरुष गणित जानता हो और स्त्री काव्य जानती हो, सगीत जानती हो, नृत्य जानती हो, तो वे ज्यादा निकट आयेगे, वे जीवन मे ज्यादा गहरे साथी बन सकते हैं और जब एक स्त्री पुरुषो जैसी दीक्षित हो जाती है तो ज्यादा से ज्यादा वह पुरुष को स्त्री होने का साथ भर दे सकती है लेकिन उसके हृदय के उस अभाव को, जो स्त्री के लिए प्यास और प्रेम से भरा होता है, पूरा नही कर सकती।

पश्चिम मे परिवार टूट रहा है, भारत मे भी परिवार टूटेगा और परिवार टूटने के पीछे आर्थिक कारण उतने नहीं हैं जितना स्त्रियो का पुरुषो जैसा शिक्षित किया जाना है। पुरुष की भाति शिक्षित होकर स्त्री एक नकली पुरुष बन जाती है असली स्त्री नहीं बन पाती। लेकिन हमे भिन्नता का कोई ख्याल नही है और भिन्न शिक्षा-दीक्षा का हमे कोई विचार नहीं है। यह बात जगत की सारी स्त्रियो को कह देने जैसी है—उन्हे अपने स्त्री होने को बचाना है। कल तक पुरुषो ने उन्हे हीन समझा था, नीचा समझा था और इसलिए नुकसान पहुचा था। आज अगर पुरुष राजी हो जायगा कि तुम हमारे समान हो, तुम हमारी दौड मे सम्मिलित हो जाओ तो इस दौड मे स्त्रिया कहा पहुचेगी? सवाल यही नही है कि स्त्रियो को नुकसान होगा, सवाल यह है कि पूरा जीवन नष्ट होगा।

पश्चिम के एक विचारक सी एम जोड ने एक बडी अद्भुत बात लिखी। उसने लिखा कि जब मै पैदा हुआ था तो मेरे देश मे घर थे, होम्स थे लेकिन अब जब मै बूढ़ा होकर मर रहा हू तो मेरे देश मे होम जैसी कोई चीज नही है, घर जैसी कोई चीज नहीं है केवल मकान, केवल हाउसेस रह गये हैं। होम और हाउस मे कुछ फर्क है? घर और मकान मे कोई भेद है? होटल मे और घर मे कोई फर्क है? अगर कोई भी फर्क है तो वह सारा फर्क स्त्री के ऊपर निर्भर है और किसी पर निर्भर नहीं है। हाउस होम बन सकता है, एक मकान घर बन जाता है अगर उसके बीच मे केन्द्र पर कोई स्त्री हो। लेकिन स्त्री अगर पुरुष जैसी हो जाती है तो घर मे मकान रह जाता है, घर निर्मित नही हो पाता। दो साथ रहनेवाले लोग होते है लेकिन पति और पत्नी नही होते। बच्चे पैदा होते हैं लेकिन नर्स और बच्चे का सम्बन्ध होता है, मा और बेटे का सम्बन्ध नही होता। क्योकि वह जो स्त्री थी, जो मा बन सकती थी उसके विकास के लिए हमने कुछ भी नही किया है।

हमारे स्कूल और कालेज क्या सिखा रहे हैं ? स्त्रियो के लिए क्या दे रहे हैं ? वे ही उपाधिया दे रहे हैं जो बरसो से दी जा रही हैं। वे उन्हीं परीक्षाओ मे से उन्हे निकाल रहे है जिनमे से पुरुषो को निकाला जा रहा है। वे उसी भाति की कवायद, उसी भाति के खेल खिला रहे हैं स्त्रियो को जो पुरुष खेल रहे हैं। और बडे आश्चर्य की बात है इस सदी मे, जब कि हम मनुष्य के शरीरशास्त्र, फिजियोलोजी के सम्बन्ध मे बहुत कुछ जानते हैं, हमे इतना भी पता नही है कि एक ही कवायद, एक ही कसरत (एक्सरसाइज) पुरुष और स्त्री दोनो को नही करवायी जा सकती है। स्त्री के शरीर के नियम, स्त्री के शरीर की बनावट बहुत भिन्न है। उसे अगर वही कवायद करवायी जाती है और उसे भी एन सी सी मे वही लेफ्ट-राइट करवाया जाता है जो पुरुष सैनिक सीख रहे हैं तो हम स्त्री के भीतर किसी बुनियादी तत्त्व को तोड देंगे जिसका हमे कोई पता ही नही, जिसका हमे ख्याल ही नही है।

अतीत के लोग नासमझ नही थे। पुरुषो के लिए उन्होने व्यायाम खोजे, स्त्रियो के लिए नृत्य खोजा। कोई अर्थ था, कोई कारण था। नृत्य मे एक 'रीदम' है, नृत्य मे एक लययुक्तता है जो स्त्रियो के शरीर के हार्मोन्स को, उनके शरीर के रासायनिक तत्त्वो को एक और तरह की गतिमयता और सगीत से भरते हैं। कवायद बात दूसरी है। कवायद के अर्थ और प्रयोजन भिन्न है। कवायद मनुष्य के भीतर जो क्रोध है उसे सजग करती है, मनुष्य के भीतर जो लडने की प्रवृत्ति है उसे तीव्र करती है। मनुष्य के भीतर जो दूसरे के साथ हिंसा होने का भाव है उसे मजबूत करती है, बलवान करती है। कवायद अगर स्त्रियो को सिखायी गयी तो घर नष्ट हो जाने वाले हैं इसका हमे कोई ख्याल ही नही। हम उनके पूरे शरीर को नुकसान पहुचा रहे है। यहा तक आप हैरान होगी, जिन मुल्को मे स्त्रियो को पुरुषो जैसी सौन्दर्य शिक्षा दी जा रही है वहा जवान लडकियो को भी होठो पर मूछ आनी शुरू हो जाती है। यह बहुत आसान है, कठिन नही है। अगर ठीक पुरुषो जैसी कवायद करवायी जाय बच्चियो को तो उनके होठो पर मूछो के बाल आने शुरू हो जायेंगे। शरीर के हार्मोन्स अलग तरह से काम करना शुरू करते है और शरीर की जो व्यवस्था है वह अलग तरह से काम करती है। छोटी-छोटी बात से फरक पडता है। स्त्रियो के शरीर को भी हम पुरुषो के जैसे ढालने की कोशिश कर रहे हैं और अब तो हम पुरुषो जैसे कपडे पहनाने की भी सारी दुनिया मे व्यवस्था कर रहे हैं। शायद हमे इस बात का कोई भी

विचार नहीं है कि जीवन की छोटी-छोटी बात सारे जीवन को प्रभावित करती है।

पूर्व के लोग ढीले कपड़े पहनते रहे हैं, पश्चिम के लोग चुस्त कपड़े पहनते रहे हैं। चुस्त कपड़े आदमी को लड़ने को तत्पर बनाते हैं, ढीले कपड़े आदमी को शान्त करते हैं, मौन करते हैं। आज तक दुनिया मे किन्हीं साधुओ की किसी भी परम्परा ने चुस्त कपड़े नहीं पहने। यह ऐसे ही व्यर्थ नहीं था। ढीला कपड़ा व्यक्तित्व को एक शिथिलता और शांति देता है, कसे हुए कपड़े व्यक्तित्व को एक तेजी और चुस्ती देते हैं। इसलिए हम सैनिको और नौकरो को चुस्त कपड़े पहनाते हैं लेकिन मालिक दुनिया मे कभी चुस्त कपड़े नहीं पहनते हैं। अगर आप चुस्त कपड़े पहनी हुई सीढ़िया चढ़ती हो तो आप दो सीढ़िया एक साथ छलांग लगा जायेंगी। आपको पता भी नहीं चलेगा कि कपड़े आपको दो सीढ़ी इकट्ठे चढ़वा रहे हैं। अगर आप ढीले कपड़े पहनी हुई हैं तो आप एक गरिमा से, एक डिग्निटी से सीढ़ियो को पार करेंगी और चढ़ेंगी। स्त्रियो के कपड़े पुरुषों जैसे कभी भी नही होने चाहिए।

स्त्रियो के जीवन मे हम कुछ और अपेक्षा किये हुए हैं। उनसे घर में भी एक शांत वातावरण की अपेक्षा है। उनसे घर मे एक प्रेमपूर्ण झरने की, एक शांत झील बन जाने की अपेक्षा है। उन्हें चुस्त कपड़े नही पहनाये जा सकते और अगर वे पहनती हो तो वे भूल में पड़ गयी हैं और उस भूल के लिए बहुत महगी कीमत चुकानी पड़ेगी।

जब कपड़े तक प्रभावित करते हैं, शिक्षा तो प्रभावित करेगी ही। हम जो मन की ट्रेनिंग सीखते हैं वह हमारे सारे व्यक्तित्व को निर्मित करती है। हम जो सोचते हैं वह हमारे पूरे जीवन को प्रभावित करता है। हम जो विचारते हैं, हम वैसे हो जाते हैं। हमे क्या सिखाया जा रहा है और क्या विचार करने के लिए हमें सामग्री दी जा रही है? स्त्रियो को कौन सी बातें सिखायी जा रही हैं? गणित मे जो आदमी दीक्षित होता है, विज्ञान मे जो आदमी दीक्षित होता है उसकी जीवन के प्रति पकड़ दूसरी होती है। सगीत मे और काव्य में जो आदमी दीक्षित होता है उसकी जीवन के प्रति पकड़ दूसरी होती है और छोटी सी पकड़ से सब कुछ भिन्न हो जाता है।

गांधी जी के आश्रम में एक आदमी आना शुरू हुआ है। कुछ लोगों ने शिकायत की गांधी से कि यह आदमी अच्छा नही है। इस आदमी को आश्रम आने देना उचित नहीं है, इस आदमी का चरित्र ठीक नहीं है। इसके गलत

जीवन के बाबत बहुत गलत खबरें आश्रम में खुली आ चुकी हैं। गांधी ने कहा, अगर आश्रम में बुरे आदमी नहीं आ सकेंगे तो आश्रम किसके लिए निर्मित किया गया है ? बुरे आदमी आते हैं, हम उनका स्वागत करेंगे। लेकिन एक दिन तो बात बहुत आगे बढ़ गयी और कुछ लोगों ने आकर गांधी को कहा कि अब तो सीमा के बाहर बात चली गयी। जिस व्यक्ति को हम रोकने को कहते थे वह आज शराब-घर में बैठा हुआ शराब पी रहा है, हम आंखों से देखकर आये हैं और आप चलकर देख सकते हैं। खादी पहने हुए वह आदमी शराबखाने में बैठा हो तो बड़ा अपमानजनक है यह आश्रम के लिए। गांधी की आंखों में खुशी के आंसू आ गये और गांधी ने कहा कि अगर मैं उस आदमी को वहां शराबखाने में देखता तो हृदय आनन्द से भर जाता। मै इसलिए आनंदित हो उठता कि अच्छे दिन, मालूम होते हैं, आने शुरू हो गये। शराब पीनेवाले लोगो ने भी खादी पहननी शुरू कर दी है। वे लोग जो खबर लाये थे, कि खादी पहने हुए आदमी शराब पी रहा है यह बहुत बुरी खबर है। लेकिन गांधी ने कहा, मेरा हृदय खुशी से भर जायेगा अगर हमे यह पता चल जाय कि शराब पीने वाले लोगों ने भी खादी पहननी शुरू कर दी है।

इस जीवन को दो तरफ से देखना है। जिन मित्रो ने गांधी को आकर कहा था उनकी जीवन को देखने की जो दृष्टि है वह एक अदालत की दृष्टि है, वह एक वकील की दृष्टि है। गांधी ने जिस तरफ से देखा वह एक मां की दृष्टि है, वह एक स्त्री की दृष्टि है। वह एक वकील की, वह एक अदालत की, एक कानून की दृष्टि नहीं है। क्या फर्क है दोनो दृष्टियो में ? पहली दृष्टि में तिरस्कार (कडमनेशन) है उस आदमी का, उस आदमी की निन्दा है, उस आदमी को छोड़ देने का आग्रह है, उस आदमी से अलग हट जाने की बात है। दूसरी दृष्टि में उस आदमी के भीतर किसी शुभ के दर्शन की कोशिश है, उस आदमी के भीतर सुन्दर को खोजने का ख्याल है, उस आदमी के सम्बन्ध मे भी आशा है अभी। दूसरे विचार में वह आदमी समाप्त नहीं हो गया है, उसके बदल जाने की गुंजाइश हो सकती है। मां का एक बेटा बिगड़ता चला जाय और सारी दुनिया आकर उसको कहे कि लड़का छोड देने जैसा हो गया है, यह लड़का बिगड गया है, यह घर मे घुसने जैसा नहीं है लेकिन मा कहेगी अभी बहुत आशा है।

मै एक छोटे से स्टेशन पर रुका हुआ था। मेरी गाड़ी आने में देर थी,

वह एक छोटे से देहात का स्टेशन था और एक बूढी स्त्री को कुछ लोग ले जा रहे थे। उसके सिर पर पट्टिया बधी थी। शायद किसी ने उसको लकडियो से चोट की थी। दो तीन स्त्रिया भी उसके साथ थी। वे बाहर बडे नगर मे अस्पताल मे उसे ले जाने को लाये हैं। मैने पूछा, इस स्त्री को किसने मार दिया है ? उसके साथ की स्त्रियो ने कहा कि इसका एक ही लडका है और उसी लडके ने इसको लकडी से चोट पहुचाई है, इसके सिर मे लहूलुहान कर दिया। यह बेहोश हो गयी थी, अभी अभी होश मे आयी है। हम इसे अस्पताल ले जा रहे हैं। दूसरी स्त्री ने जो उसी के साथ थी, कहा कि ऐसे लडके तो पैदा ही न हो तो अच्छा है लेकिन उस बूढी ने, जिसके सिर से खून बह रहा था उस दूसरी स्त्री के मुह पर हाथ रख दिया और कहा, ऐसा मत कहो अगर लडका न होता तो आज मुझे मारना भी कौन ? लडका है तो उसने मार भी दिया लेकिन लडका नही होता ता मुझे मारता भी कौन ? लडके का होना ही बहुत है। उसने मारा यह तो बहुत छोटी सी बात है और फिर वह बूढी कहने लगी, लडका ही है, अभी समझ कितनी है। मार दिया, कल समझ वापस आ जायेगी।

यह एक मा का हृदय है जो गणित मे नही सोचता, जो कानून मे नही सोचता, जो किसी प्रेम और आशा से सोचता है।

स्त्रियो की शिक्षा एकदम भिन्न होनी चाहिए ताकि उनकी दृष्टि भिन्न हो। वे जीवन को किन्ही और ढगो से सोचने मे समर्थ हो सके। लेकिन यह नही हो रहा है। हम उन्हे उन्ही दृष्टियो मे, उन्ही दर्शनो मे, उन्ही विचारो मे दीक्षित कर रहे है जिनमे पुरुष दीक्षित है और पुरुष ने जो दुनिया बनायी है वह गलत सिद्ध हो चुकी है इसमे कुछ कहने की जरूरत नहीं है। पिछले तीन हजार वर्षों में पुरुषो की दुनिया मे १५ हजार युद्ध हुए है। शायद ही कोई दिन ऐसा हो जब जमीन पर युद्ध न हो रहे हो। प्रतिदिन युद्ध हो रहा है, प्रतिक्षण युद्ध हो रहा है। प्रतिक्षण आदमी काटे और मारे जा रहे हैं। यह अकेले पुरुषो की बनायी हुई दुनिया है, यह हार चुकी है, असफल हो चुकी है। यह प्रयोग हो चुका है। क्या हम एक नया प्रयोग नही करेंगे कि स्त्रिया भी इस दुनिया को बनाने मे कोई महत्वपूर्ण हिस्सा बटाए ? एक नयी दुनिया को बनाने के लिए कोई आधार रखें या कि वे भी पुरुष की नकल करेंगी और आज नही कल सैनिको के वस्त्र पहनकर नगरो पर एटम बम गिरायेंगी ? पुरुष बहुत प्रशसा करेंगे आपकी जिस दिन आप एटम बम गिराने मे समर्थ

हो जायेगी और तब पुरुष कहेंगे कि बहुत अच्छी स्त्री है। अब ठीक हो गया है सब। जब आप युद्ध के मैदान पर बन्दूकें लेकर खड़ी हो जायेंगी तो पुरुष आपको बहुत तकमें बाटेंगे, पद्मश्री और भारतभूषण की उपाधियां देंगे, महावीर चक्र देंगे और कहेंगे कि अब स्त्रिया ठीक हो गयी हैं।

पुरुष अपनी ही भाषा मे सोचता है, अपनी ही भाषा में स्त्रियो को भी निर्मित कर लेना चाहता है बिना इस बात को जाने हुए कि पुरुष खुद बहुत गलत है। उस गलत पुरुष की और सख्या बढाने की कोशिश मत करिये। अकेले पुरुष ही काफी हैं दुनिया को नष्ट करने के लिए और अगर आप भी पुरुषो जैसा व्यवहार करती हैं तो कल मनुष्य जाति का अत और निकट आ सकता है और कुछ भी नही हो सकता। लेकिन अगर स्त्रियां चाहें तो सारे जगत मे एक बडी क्राति ला सकती हैं। अगर स्त्रिया चाहे तो पृथ्वी से युद्ध बन्द हो सकते हैं, अगर स्त्रिया चाहे तो सारी बेवकूफिया बन्द की जा सकती हैं, सारी हिंसा बन्द की जा सकती है, सारा क्रोध बन्द किया जा सकता है। लेकिन उसके लिए बिल्कुल और तरह की स्त्री को जन्म देना जरूरी है, पुरुष की नकल नहीं। स्त्री अपने ही गुणो मे परिपूर्ण गरिमा को उपलब्ध हो, इसकी दिशा मे कुछ काम करना जरूरी है। पुरुष ने जो स्थिति बना ली है, मैं एक छोटी सी कहानी से आपको समझाने की कोशिश करूंगा।

ईश्वर बहुत घबरा गया है पुरुष की इस दुनिया को देखकर। बहुत परेशान हो गया है। आदमी ने जो किया है आदमी के साथ उसकी कथा इतनी दर्दपूर्ण, इतनी दुखभरी है जिसका कोई हिसाब नहीं कि कितनी हत्याए हुई हैं। हमारी तो स्मृति बहुत कमजोर है इसलिए हम हिसाब भूल जाते हैं। तैमूरलग ने, नादिर शाह ने, चगेज खा ने और अभी अभी स्टैलिन और हिटलर ने क्या किया है उसकी कल्पना ही हमे नहीं। अकेले स्टैलिन ने रूस मे साठ लाख लोगो की हत्या करवा दी है। अकेले हिटलर ने पाच सौ लोग, जब तक वह हुकूमत मे रहा, रोज के हिसाब से मारे। प्रति दिन पांच सौ की सख्या पूरी की और अब तो इन पुरुषो ने बहुत बड़ी ईजाद कर ली है, एटम और हाइड्रोजन बम बना लिया है और आज नही कल वे सारी दुनिया को नष्ट करने के आयोजन मे सलग्न हैं। उनकी तैयारी पूरी है कि आदमी को नहीं बचने देंगे। तो ईश्वर बहुत घबरा गया होगा। उसने दुनिया के तीन बड़े राष्ट्रो के प्रतिनिधियो को अपने पास बुलाया, रूस और ब्रिटेन और अमेरीका। और उन प्रतिनिधियो से कहा ईश्वर ने कि मै बहुत चिन्तित हो

गया हू । ऐसे तो जब से मैंने आदमी को बनाया तब से नींद मुझे नहीं आ सकी । रात्रि मेरी बेचैनी से गुजरती है कि यह आदमी पता नहीं कब क्या कर दे और जब से मैंने आदमी को बनाया, तुम्हें पता होगा उसके बाद मैंने फिर कुछ भी नहीं बनाया क्योकि आदमी को बनाकर मैं इतना घबरा गया कि तब से सृष्टि का सारा काम ही मैंने बन्द कर दिया और तब से मैंने सृष्टि बन्द कर दी है, तब से आदमी ने चीजें बनानी शुरू कर दी और आदमी ने आखिर मे एटम और हाइड्रोजन बम बनाये। अब तो बहुत घबराहट हो गयी है। मैं पूछता हू, तुम चाहते क्या हो ? तुम्हारी मशा क्या है, तुम्हारे इरादे क्या हैं ? इतनी हत्या का आयोजन किसलिए, इतना श्रम किसलिए ? अरबो डालर रोज खर्च किया जा रहा है। सारी जमीन पर आदमी भूखा मर रहा है और एटम बम बनान मे रुपये खर्च किये जा रहे हैं आदमी भूखे मरे जा रहे हैं, बिना वस्त्रो के हैं, बिना दवाइयो के हैं और दूसरी तरफ हम आदमी के मिटाने की सारी सम्पत्ति नष्ट कर रहे हैं। पृथ्वी की आधी सम्पत्ति हमेशा युद्धों मे लगती रही है। अगर युद्ध नही होते तो आदमी आज कितना खुशहाल होता कहना बहुत कठिन है।

ईश्वर ने पूछा, उनसे, तुम चाहते क्या हो ? मै तुम्हें वरदान दे दू और तुम्हारी इच्छा पूरी कर दू । तुम एक एक वरदान माग लो। अमेरीका के प्रतिनिधि ने कहा हे प्रभु, हमारी एक ही आकाक्षा है और वह पूरी हो जाय तो फिर कभी कोई युद्ध न होगे। फिर हमारे प्रति कोई शिकायत आपको न होगी। पृथ्वी तो रहे, पृथ्वी पर रूस का कोई निशान न रहे तो हमारी आकाक्षा पूरी हो जायगी ।

ईश्वर ने बहुत वरदान दिये हैं लेकिन कभी कल्पना भी नही की थी कि कोई ऐसा वरदान मागेगा। उसने बहुत भय से रूस की तरफ देखा । जब अमेरीका ही यह कहता है तो रूस क्या कहेगा इसकी तो कल्पना ही की जा सकती है। रूस के प्रतिनिधि ने कहा महानुभाव, हमे तो विश्वास ही नहीं कि ईश्वर कहीं होता भी है। मुझे तो डर लगता है कि शायद मैं ज्यादा शराब पी गया हू और आप दिखाई पड रहे हैं या हो सकता है मैं कोई सपना देख रहा हू और आप दिखाई पड रहे हैं । क्योकि रूस ने तो पचास साल से तय कर लिया कि ईश्वर है ही नही और सारे मुल्क ने तय कर लिया है एक मत से, ईश्वर नहीं है। फिर आप हो कैसे सकते हैं और यह तो लोकतन्त्र का जमाना है; जनता जो तय कर लेती है, वही होता है । हमने तय कर लिया

कि ईश्वर नही है, आप हो कैसे सकते हो ? जरूर मे कोई सपना देख रहा हू या आज ज्यादा शराब पी ली है। लेकिन फिर भी कोई हरजा नही। हो सकता है कि हम आपकी पूजा फिर से शुरू कर दें और अपने चर्चों मे आपकी मूर्तिया फिर बिठा दें, लेकिन एक इच्छा हमारी पूरी हो जाये। जमीन का नक्शा तो हो, पृथ्वी का भूगोल तो हो, लेकिन उस नक्शे मे हम अमेरीका के लिए कोई रग, कोई रेखा नही देखना चाहते हैं। बस इतना ही हो जाय फिर सब ठीक है, फिर हमारा कोई विरोध आपसे भी नही। हम आपकी भी पूजा करेंगे। हमने, जहां पहले आपके मदिर थे वहा कम्युनिस्ट पार्टी के दफ्तर खोल दिये हैं। अब जहा जहा कम्यूनिस्ट पार्टी के दफ्तर हैं हम वहा वहा फिर से मदिर बना देंगे। हमें कोई कठिनाई नहीं है इससे, लेकिन इतनी हमारी इच्छा पूरी हो जानी चाहिए।

भगवान ने बहुत घबराकर ब्रिटेन की तरफ देखा और ब्रिटेन ने जो कहा वह ख्याल मे रख लेने जैसी चीज है। ब्रिटेन के प्रतिनिधि ने भगवान के चरणो पर सिर रखकर कहा कि हे महाप्रभु, हमारी अपनी कोई आकाक्षा नहीं। इन दोनो की आकाक्षा एकसाथ पूरी हो जाय तो हमारी आकाक्षा पूरी हो जाय। हम कुछ और नही मागते हैं, इन दोनो ने जो मागा वह आप पूरा कर दे फिर हमे कुछ भी नही चाहिए।

यह आदमी ने जो दुनिया बनायी है, पुरुष ने जो दुनिया बनायी है वह यहा ले आयी है। स्त्रियो का इस दुनिया के निर्माण मे अब तक कोई हाथ नहीं है। क्या स्त्रिया चुपचाप देखती रहेंगी पुरुषो की इस दुनिया को ? या कि वे कोई भाग लेंगी ? कुछ कट्रीब्युट करेंगी ?

मे सोचता हू, स्त्रियों के पास एक महान शक्ति सोई हुई पड़ी है। दुनिया की आधी से बडी ताकत उनके पास है। आधी से बडी ताकत कहता हू। आधी तो इसलिए कहता हू कि स्त्रिया आधी तो हैं ही दुनिया मे, आधी से बडी इसलिए कि बच्चे बच्चिया उनकी छाया में पलते है और वे जैसा चाहें उन बच्चे और बच्चियो को परिवर्तित कर सकती हैं। पुरुषो के हाथ मे कितनी ही ताकत हो, लेकिन पुरुष एक दिन स्त्री की गोद मे होता है, वही मे वह अपनी यात्रा शुरू करता है और चाहे वह कितना ही बडा हो जाय और चाहे वह वृद्ध ही क्यो न हो जाय अपनी पत्नी के सान्निध्य मे, अपनी पत्नी की निकटता मे निरन्तर अपनी मा का अनुभव

करता ही है, निरन्तर अपनी मा की छाया देखता ही है । मा की छाया मे बड़ा होता है। मा बचपन से उसके जीवन मे छाया बनी रहती है। एक बार स्त्री की पूरी शक्ति जागृत हो जाय और वे निर्णय कर ले कि किसी प्रेम की दुनिया को निर्मित करेंगी जहा युद्ध नही होगे, जहा हिंसा नही होगी जहा राजनीति नही होगी, जहा पोलिटीशियस नही होगे, जहा जीवन मे कोई बीमारिया नहीं होगी। अगर स्त्रिया एक ऐसी दुनिया बनानी तय कर लें तो बहुत कठिन नही है कि वे एक नयी दुनिया बनाकर खडी कर दें । वह दुनिया पुरुषो की बनायी दुनिया से बहुत बेहतर होगी । आज भी जगत मे जिन लोगो ने कुछ महत्वपूर्ण दिया है उन सारे लोगो मे स्त्रियो के गुण अद्भुत थे। गाधी के ऊपर तो एक स्त्री ने किताब भी लिखी है --"बापू माई मदर" "गाधी मेरी मा"। गाधी के पास बहुत लोगो को लगा कि उनके मन मे मा जैसे बहुत कुछ गुण हैं। बुद्ध के पास जाकर लोगों को लगता था, क्राइस्ट के पास जाकर लोगो को लगता था कि शायद इन आदमियो के भीतर, इन पुरुषो के भीतर भी स्त्रियो की अद्भुत क्षमता है।

जहा भी प्रेम है, जहा भी करुणा है, जहा भी दया है वहा स्त्री मौजूद है । इसलिए मै कहता हू कि स्त्री के पास आधी से भी ज्यादा बडी ताकत है और वह पाच हजार बरसो से बिल्कुल सोयी हुई पडी है बिल्कुल सुप्त पडी है। नारी की शक्ति का कोई उपयोग नही हो सका है। भविष्य मे यह उपयोग हो सकता है। उपयोग होने का एक सूत्र यही है कि स्त्री यह तय कर ले कि उन्हे पुरुषो जैसा नही हो जाना है । दूसरी बात, वे पुरुषो से भिन्न हैं इस बात का अनुभव कर ले । उनका व्यक्तित्व, उनका शरीर, उनका मन, उनकी चेतना किन्ही अलग रास्तो से जीवन मे गति करती है, किन्हीं अलग मार्गों से जीवन की खोज करती है। उनकी चेतना (कौंसेसनेस) पुरुषा की चेतना से भिन्न है। इस भिन्नता का बोध स्पष्ट होना चाहिए और तीसरी बात उनकी शिक्षा, उनके वस्त्र, उनके चिन्तन, उनकी दीक्षा उनके विचार सब भिन्न होने चाहिए, पुरुषो जैसे नही, तो ही हम नारी की शक्ति का मनुष्य की सस्कृति मे उपयोग कर सकते है और वह उपयोग अत्यन्त मगल-दायी सिद्ध हो सकता है ।

यह कौन करेगा ? यह बात पुरुषो पर नहीं छोडी जा सकती, यह बात स्त्रियो को अपने ही हाथ में ले लेनी होगी । उन्हें खुद ही सोचना होगा, खुद

ही विचार करना होगा, खुद ही रास्ते खोजने होगे। उन्होने विचार करना शुरू किया है लेकिन यह विचार बिल्कुल पुरुषो का अनुकरण और नकल है। उनका कोई अपना चिन्तन, कोई अपनी दृष्टि नही है। उसमें कोई उनकी अपनी समझ नहीं है। ये थोडी सी बातें मैंने आपसे कही। आप सोचें, विचारें।

नारी की शक्ति का अपव्यय हुआ है या उपयोग ही नही हुआ है। या उपयोग हुआ है तो गलत दिशाओ में हुआ और अब इतने जोर से नारी दीक्षित की जा रही है पुरुषो की नकल मे, पुरुषो के कालेजो मे, पुरुषों के स्कूलो में इतने जोर से उसे ढाचे मे ढाला जा रहा है कि यह हो सकता है, सौ बरस बाद दो तरह के पुरुष पृथ्वी पर हो लेकिन स्त्रिया नहीं रह जायेगी। उससे बडा कोई दुर्भाग्य नही हो सकेगा। मनुष्य ने बहुत दुर्भाग्य जाने हैं लेकिन अगर सारी स्त्रिया पुरुषो जैसी हो जायें तो इससे बडा दुर्भाग्य नही हो सकता। जीवन का सारा आनन्द और जीवन का सारा आकर्षण नष्ट होगा और जीवन भरेगा विषाद से और पीडा से। उस विषाद और पीडा मे सिवाय आत्मघात के कोई विकल्प नही रह जायगा सिवाय इसके कि आदमी अपने को नष्ट कर ले और समाप्त कर ले।

ये थोडी सी बाते मैंने कही इस आशा मे कि हो सकता है मेरी बात आपके हृदय की वीणा का कही कोई तार छू दे, कोई चिन्तन का वहा जन्म हो जाय, कोई चीज आपको दिखायी पडने लगे, कोई चीज आपके जीवन मे सक्रिय हो जाय और आपके जीवन मे अगर कोई चीज सक्रिय हो जाती है, एक स्त्री के जीवन मे अगर कोई चीज सक्रिय हो जाती है तो एक पूरे परिवार के प्राणो मे परिवर्तन होना शुरू हो जाता है। एक स्त्री को बदल लेना पचास पुरुषो के बदलने के बराबर है। इतनी बडी शक्ति जिनके हाथ मे हो, इतनी बडी जिनके हाथ मे सामर्थ्य हो, इतने जीवन को बदलने का जिनके लिए अवसर हो वे अगर जीवन के लिए कुछ भी नही करती हो तो निश्चित अपराधी हैं। स्त्री अपराधी है, उसने जीवन को कुछ भी नहीं दिया है। उसने जीवन को बनाने के लिए कोई बुनियाद ही नही रखी। लेकिन ये बुनियादे रखी जा सकती है।

जो गाड़ी है सभ्यता की, वह बिल्कुल एक चाक से भागी जा रही है। इससे बड़ी दुर्घटनाए (एक्सीडेंट्स) होती रही है, बडी दुर्घटनाए होने की आगे सम्भावना है। दूसरा चाक बिल्कुल जाम है। वह गाडी से निकल कर अलग पडा हुआ है। परमात्मा करे कि मनुष्य की इस सस्कृति को पूर्णता दे दे। स्त्री भी

अपना दान, अपने प्रेम, अपने आनन्द, अपने काव्य, अपने सगीत को जोड़ दे। इस दुनिया में जो अकेले गणित ने, फिजिक्स और केमिस्ट्री ने खडी की है, स्त्री भी जोड़ दे अपनी प्रार्थना को उस राजनीति मे जो अकेले पुरुषो ने केवल महत्वाकांक्षा के आधार पर खड़ी की है। स्त्री भी जोड दे अपनी थोड़ी सी पक्तियो को उस गीत में जो पुरुष अब तक अपने क्रोध और युद्ध के आवेश मे अकेला ही गाता रहा है तो शायद एक ज्यादा सर्वांगीण, ज्यादा इन्टीग्रेटेड, ज्यादा अखड सभ्यता का जन्म हो सकता है और अगर वह सभ्यता नहीं जन्मी तो यह सभ्यता मरने के करीब है। इसे मरने से कोई भी नही बचा सकेगा। या तो दूसरी सभ्यता जन्मेगी या पूरे मनुष्य के अन्त का क्षण करीब आ गया है। मनुष्य के बचने की बहुत ज्यादा सम्भावना नही है।

नौ : अन्तर्यात्रा के सूत्र

अन्तर्यात्रा के सूत्र

परमात्मा को जानने के पहले स्वय को जानना जरूरी है। और सत्य को जानने के पहले स्वय को पहचानना जरूरी है। क्योकि जो मेरे निकटतम है, अगर वही अपरिचित है तो जो दूरतम हैं, वह कैसे परिचित हो सकेंगे! तो इसके पहले कि किसी मदिर मे परमात्मा को खोजने जायें, इसके पहले कि किसी सत्य की तलाश मे शास्त्रो में भटके उस व्यक्ति को मत भूल जाना जो कि आप है। सबसे पहले और सबसे प्रथम उससे परिचित होना होगा जो कि आप है। लेकिन कोई स्वय से परिचित होने को उत्सुक नही है। सभी लोग दूसरो से परिचित होना चाहते है। दूसरे से जो परिचय है, वही विज्ञान है, और स्वय से जो परिचय है, वही धर्म है। जो स्वय को जान लेता है, बडे आश्चर्य की बात है, वह दूसरे को भी जान लेता है। लेकिन जो दूसरे को जानने मे समय व्यतीत करता है, यह बडे आश्चर्य की बात है, वह दूसरे को तो जान ही नही पाता, धीरे-धीरे उसके स्वय को जानने के द्वार भी बन्द हो जाते हैं। ज्ञान की पहली किरण स्वय से प्रकट होती है और धीरे-धीरे सब पर फैल जाती है। ज्ञान की पहली ज्योति स्वय मे जलती है और फिर समस्त जीवन मे उसका प्रकाश, उसका आलोक दिखाई पडने लगता है।

जो स्वय को नहीं जानता है, उसके लिए ईश्वर मृत है चाहे वह कितनी ही पूजा करे और कितनी ही अर्चनाए, चाहे वह मन्दिर बनाये, मूर्तिया बनाये और कुछ भी करे। एक काम अगर उसने छोड रखा है स्वय को जानने का, तो जान लें कि परमात्मा से उसका कोई सम्बन्ध कभी नहीं हो सकेगा। परमात्मा से सम्बन्ध की पहली बुनियादी, आधारभूत शर्त है—स्वय से सबधित हो जाना। क्योकि वही सूत्र है, वही सेतु है, वही मार्ग है, वही द्वार है, परमात्मा से सबधित होने का। और तब जो परमात्मा प्रकट होता है वह मनुष्य द्वारा निर्मित परमात्मा की कल्पना नही है, बल्कि वही है "जो है"। तब वह हिन्दू का परमात्मा नही है और मुस्लिम का परमात्मा नही है, जैन का और ईसाई का नही है। तब वह बस परमात्मा है। उसका कोई रूप नही, नाम नही, उसका आदि नहीं, अन्त नही। फिर उसकी कोई सीमा नही है। वैसा जो सत्य है जो हमे सब तरफ घेरे हुए है कैसे दिखाई पडेगा? यदि हम स्वय

को जाने बिना उसे देखने की दौड़ मे पड गये तो वह दौड शुरू से ही भ्रान्त होगी। और उस भ्रांति मे हम जो भी जान लेंगे, वह हमारे अज्ञान को और गहन करेगा और सघन बनायेगा।

एक अधा आदमी अपने एक मित्र के घर मेहमान था। मित्र ने उसके स्वागत मे बहुत बहुत मिष्ठान्न बनाये। उस अधे को कुछ पसन्द आये। उसने पूछा यह क्या है ? दूध से बनाई कोई मिठाई थी। उसके मित्रो ने कहा, दूध से बनी मिठाई है। उस अधे आदमी ने कहा, "क्या तुम कृपा करोगे और दूध के सम्बन्ध में मुझे कुछ समझाओगे, मुझे कुछ बताओगे कि यह दूध कैसा होता है ?" तो मित्रो ने वही किया जो तथाकथित ज्ञानी हमेशा से करते रहे है। वे उसको समझाने लग गये। एक मित्र ने कहा, "दूध होता है शुद्ध सफेद बगुले के पखो की भाति।" वह अधा आदमी बोला, "मजाक करते हैं मुझसे आप ? मं तो दूध ही नही समझ पा रहा हू। यह बगुला और उसके पखे, एक और नई कठिनाई हो गई। क्या मुझे बतायेंगे कि यह बगुला और उसके सफेद पख कैसे होते हैं ? तो मं पहले बगुले को समझू, शुभ्रता को समझू तो दूध को समझ पाऊगा। पहली समस्या तो वहीं रह गई, यह दूसरा प्रश्न खड़ा हो गया कि ये बगुले के सफेद पख कैसे होते हैं ? यह बगुला कैसा होता है ?" मित्र अचरज मे पड गये। एक मित्र ने तरकीब निकाली। उसने अपना हाथ उठाया, अधे का हाथ पकडा। कहा कि मेरे हाथ पर अपना हाथ फिराओ और कहा कि जिस तरह मेरा हाथ मुड़ा हुआ है उसी तरह बगुले की गर्दन मुड़ी हुई होती हैं। उस अधे आदमी ने मुडे हुए हाथो पर हाथ फेरा। वह उठकर नाचने लगा और बोला कि मं समझ गया, मुडे हुए हाथ की भाति दूध होता है। समझ गया कि दूध मुड़े हुए हाथ की भाति होता है। वे मित्र बहुत परेशान हो गये। इससे तो बेहतर था कि वे अधे को न समझाते। क्योंकि यह जानना ही अच्छा था कि नहीं जानते हैं। यह जानना तो और खतरनाक हो गया कि दूध मुडे हुए हाथ की भाति होता है।

जिन्होंने स्वय की आखे खोलकर नही देखा उनके हाथो मे शास्त्रो की यही गति हो जाती है, सिद्धान्तो की यही गति हो जाती है। इसीलिये परमात्मा हमारे लिए मृत हो गया है। उसकी मृत्यु हो गई है। उसकी मृत्यु इसलिए हुई है कि हमारी आंखें बद हैं। हम अधे हैं। इसलिए परमात्मा को मरना पडा है। हमारे अधेपन ने उसकी हत्या कर दी है। क्या हम आखें खोलने को राजी हैं ? जिनको प्रेम है जीवन से, सत्य से वे आंखें खोलने को राजी हो तो

सारे जगत मे परमात्मा का आलोक प्रकाशित हो सकता है। वे आँखें कैसे खुलेंगी ? स्वय के द्वार जो बन्द हैं उन्हे कैसे खोलेंगे ? उसके कुछ सूत्र है।

पहला सूत्र है ज्ञान नही बल्कि अज्ञान का बोध चाहिए। चित्त की एक ऐसी दशा चाहिए जहा हम स्पष्टरूप से जानते हैं कि मै कुछ भी नही जान रहा हू, मुझे कुछ भी पता नही है। ऐसे अबोध की, अज्ञान की स्पष्ट स्वीकृति पहला सूत्र है ज्ञान को छोडना पडेगा। यदि वस्तुत सम्यक् और सत्य जो ज्ञान है उसे पाना है तो तथाकथित ज्ञान को छोडना पडेगा, मनुष्य के मन पर ज्ञान बहुत बोझिल है। पत्थरो और पहाडो की भाति उसकी छाती पर ज्ञान सवार है। हम सब कुछ जानते हुए मालूम होते है जबकि हम कुछ भी नही जानते हैं। पति अपनी पत्नी को भी नहीं जानता है। पिता अपने पुत्र को भी नही जानता है। इतना रहस्यपूर्ण है यह जगत ! आपके द्वार पर जो पत्थर पडा है उसे भी आप नही जानते हैं। आपके आगन मे जो फूल खिलते है उनको भी नही जानते। कुछ भी तो हम नही जानते हैं। जीवन मे इतना अज्ञात और इतना रहस्य भरा हुआ है लेकिन हमारा अहकार कहता है कि हम कुछ जानते हैं। पिता का अहकार कहता है कि तुम मेरे लडके हो, मै तुम्हे भलीभाति जानता हू। लेकिन क्या पिता होने से ही कोई बेटे को जान जाता है ? पिता एक मार्ग से ज्यादा क्या है ? वह प्रभु, बेटे को दुनिया मे लाने मे द्वार बनता है, मार्ग बनता है। जैसे कोई एक चौरस्ते से होकर गुजरे और लौटते वक्त चौरस्ता कहने लगे कि —ठहरो ! मै तुम्हे भली भाति जानता हू। क्योकि थोडी देर पहले तुम मेरे पास से गुजरे थे तो इस चौरस्ते को हम क्या कहेंगे ? जब एक पिता अपने बच्चे को कहता है कि मै तुम्हे भलीभाति जानता हू तो क्या वह भी वैसी ही गलती नही कर रहा है ?

जानने के इस भ्रम मे ही, जीवन का जो रहस्य है उससे हम अपरिचित रह जाते है। हम सभी चीजो को जानते हुए मालूम पडते हैं। यह जानने का भ्रम टूटना चाहिए तो ही जीवन मे रहस्य का जन्म होता है और अज्ञात के प्रति आखे खुलनी शुरू होती है। ज्ञात के तट से जो मुक्त नहीं होता है, अज्ञात सागर की यात्रा उसके लिए नही है। परमात्मा बिल्कुल अज्ञात है और हम स्वय बिल्कुल अज्ञात हैं। हमारे भीतर क्या है हम नही जानते। तो जो हम जानते हैं उसी को अगर पकडे रहें तो इस अज्ञान मे यात्रा नहीं हो सकेगी। हम ज्ञान से बचे हैं।

जो जो हम जानते हैं उसी से हम बंधे हैं। किसी ने एक शास्त्र पढ़ लिया है, गीता या कुरान या बाइबिल या कुछ और। किसी ने कुछ सुन लिया है, किसी ने कुछ अनुभव कर लिया है और वह उससे बंधा है। जो ज्ञान से बंधता है वह अतीत से बंध जाता है। क्योंकि ज्ञान हमेशा बीते हुए (Past) का होता है, जो हो गया है, बीत गया है। जो आपने जान लिया वह अतीत हो गया है, जो जान लिया वह गया। वह मुर्दा हो गया। वह मर गया। उस मरे हुए के साथ जो बंधा रहता है उसकी भविष्य में यात्रा कैसे हो सकेगी? वह आगे कैसे जायेगा? ज्ञान तो हमेशा बीता हुआ है। जो भी आपने जान लिया वह गया। और परमात्मा है अनजाना (Unknown), अज्ञात। तो इस जाने हुए से अगर हम बंध गये तो उस अनजाने को कैसे जान सकेंगे? इसलिए ज्ञान की गठरी जो उतार देना है, वही उस अज्ञात सागर में यात्रा कर पाता है जो कि परमात्मा का है, ईश्वर का है।

पहला सूत्र है ज्ञान से मुक्त हो जाना। लेकिन हम सब तो ज्ञान की तलाश में हैं। हम सब तो इस खोज में हैं कि ज्ञान कहीं मिल जाये। भगवान न करे कि आपको कहीं ज्ञान मिल जाये। ज्ञान मिला कि आप वहीं बंद हो जायेंगे, वहीं ठहर जायेंगे, रुक जायेंगे। जो ज्ञानी हो जाते हैं, वहीं ठहर जाते हैं और मुर्दा हो जाते हैं। पण्डित से ज्यादा मरा हुआ कोई आदमी कभी देखा है? दुनिया में जितना पांडित्य बढ़ता है उतना मुर्दापन बढ़ता है। क्यों? क्योंकि वह अपने जाने से, अपने ज्ञान से बंध जाते हैं। वह बंधन उनके चित्त को फिर उड़ानें नहीं लेने देता है। अनन्त सागर की, आकाश की, परमात्मा की उड़ान में जाने में वह असमर्थ हो जाते हैं। उनके पैर जमीन से बंध जाते हैं। ज्ञान से मुक्त होने का साहस ही किसी व्यक्ति को धार्मिक बनाता है। तो पहला सूत्र है ज्ञान के तट में अपनी जंजीरें खोल दीजिए। बड़ी घबराहट लगेगी। धन छोड़ देना बहुत आसान है। लेकिन ज्ञान छोड़ना बहुत कठिन है। इसलिए जो लोग धन छोड़कर भाग जाते हैं वे लोग भी ज्ञान नहीं छोड़ पाते। धन छोड़कर भाग जाते हैं लेकिन उसी धन से जो किताबें खरीदते हैं उसका बस्ता बांधकर साथ ले जाते हैं। वे ज्ञान नहीं छोड़ते। एक आदमी सन्यासी हो जाता है, घर छोड़ देता है, परिवार छोड़ देता है, पत्नी और बच्चों को छोड़ देता है लेकिन हिन्दू होने को नहीं छोड़ता है, मुसलमान होने को नहीं छोड़ता है, जैन होने को नहीं छोड़ता है।

कैसी अजीब और आश्चर्य की बात है कि अब तक जमीन पर साधु

पैदा नहीं हुए। हिन्दू साधु होता है, मुसलमान साधु होता है, ईसाई साधु होता है, यह भी क्या पागलपन की बात है। साधु होना चाहिये जमीन पर। हिन्दू, ईसाई और मुसलमान ये नाम कैसे साधु के पीछे लगे हैं? असाधु के साथ ये बीमारियां लगी रहें तो समझ में आता है लेकिन साधु के साथ इन बीमारियों को देखकर बहुत हैरानी होती है, बहुत आश्चर्य होता है। लेकिन ज्ञान जो पकड़ लिये गये हैं हिन्दू का, मुसलमान का, जैन का उसे वे छोड़ते नहीं, उसे छोड़ना क्यों नहीं चाहते? वह भी तो एक आतरिक सम्पदा है। इसलिए वह भी एक धन है। रुपया बाहर की सम्पत्ति है, ज्ञान भीतर की सम्पत्ति है। बाहर की सम्पत्ति छोडना बहुत कठिन नहीं है। भीतर की सम्पत्ति जो छोडता है, वही केवल परमात्मा से सम्बद्ध होता है। क्राइस्ट ने कहा है कि धन्य हैं वे जो दरिद्र हैं। कौन? क्या वे जिनके पास लगोटी नहीं है? अगर वे ही धन्य हैं तो क्राइस्ट ने बहुत गलत बात कही है। तो उसका मतलब यह हुआ कि वह गरीबी, दीनता और दरिद्रता के समर्थन मे है। लेकिन नहीं, क्राइस्ट ने कहा है--"पुअर इन स्प्रिट" जो आत्मा से दरिद्र हैं। क्या मतलब? आत्मा से दरिद्र का मतलब यह कि जिन्होने ज्ञान की सम्पदा को फेक दिया, जिन्होंने कहा कि हमारे पास भीतर कोई सम्पदा नहीं है, हम कुछ भी नहीं जानते, हम बिल्कुल अज्ञान मे है हमारा कोई ज्ञान नहीं है, जिन्होंने अतीत से, बीते से, जो गया उससे अपने को बाध नहीं रखा है। धन्य हैं वे लोग जिन्होंने ज्ञान की सम्पत्ति को छोड दिया है, वे ही लोग, केवल वे ही थोडे से लोग सत्य को और परमात्मा को जान सकते है। तो क्या तैयारी है इस बात की आप ज्ञान को छोड दे?

धन को छोडने की तैयारी करवाने वाले लोग गलत साबित हुए है। धन छोडने का कोई बडा सवाल नहीं है। धन बाहर है। अगर उसे छोड दीजिए तो इसमे जो उपलब्धि होगी वह भी केवल बाहर की ही होगी। ज्ञान भीतर है। अगर उसे छोड़ा तो जो उपलब्धि होगी, वह भीतर की होगी। और स्मरण रखिये दुनिया मे केवल दो ही सिक्के हैं--धन के और ज्ञान के। और दो ही तरह के लोग हैं धन को इकट्ठा करने वाले लोग और ज्ञान को इकट्ठा करने वाले लोग।

एक बादशाह समुद्र के किनारे अपने महल मे निवास करता था। एक सांझ वह छत पर खड़ा हुआ था। सकडो जहाज आते थे और जाते थे समुद्र में। उसने अपने वजीर को कहा कि देखते हो सैकडों जहाज आ रहे हैं

और जा रहे हैं। उसके वजीर ने कहा पहले मुझे भी सैकड़ो दिखाई पडते थे। कुछ दिन से मुझे केवल दो ही जहाज दिखाई पड रहे है। उसके राजा ने कहा दिमाग खराब हो गया है? दो जहाज दिखाई पडते है? सैकडो आ रहे हैं, जा रहे है। उस वजीर ने कहा, हो सकता है कि मुझे गलत दिखाई पडता हो, लेकिन फिर भी मुझे दो जहाज दिखाई पडते है। एक तो धन का जहाज है और दूसरा है ज्ञान का जहाज। और इन दो ही जहाजो की सारी यात्रा है। या तो कोई धन खोजने जा रहा है या कोई ज्ञान खोजने।

धन मे भी अहकार तृप्त होता है। धन है मेरे पास। धन की खोज से तृप्ति होती है कि मै कुछ हू, कोई हू। भूल जाते हैं हम कि मै अपने को नही जानता। धन है मेरे पास, मै कुछ हू। जरा किसी धनी को धक्का दें तो कहेगा कि जानते नही कि मै कौन हू? लेकिन अगर उनका धन छिन जाये तो फिर वह यह नहीं कहेगा कि जानते नही कि मै कौन हू। धन था तो वह कुछ था। एक आदमी मत्री है तो वह कुछ है। वह मत्री न रह जाय और जैसा कि रोज होता है, कोई मत्री है फिर नहीं भी रह जाता। भूतपूर्व मत्री रह जाता है। मर गया। वह मत्री तब नही रह गया। जैसे कपडे की कीज निकल जाये वैसा आदमी हो जाता है, बिल्कुल ढीलाढीला। उसको धक्का दो तो बिल्कुल नही कहता कि जानते हो—मै कौन हू, बल्कि वह कहेगा कि कही आपको चोट तो नही लग गई? लेकिन वह कल जब मत्री था और आप पास से निकल जाते धक्का देकर, आपकी छाया का भी धक्का लग जाता तो कहता कि ठहरो! जानते नही कि मै कौन हू?

तो धन, पद अनुभव यह भाव देता है कि मै कुछ हू। इस "मै कुछ हू" के भ्रम मे वह यह ख्याल ही भूल जाता है कि मै यह भी नही जानता कि "मै कौन हू"। कुछ हू के भ्रम में "कौन हू" इस बात का स्मरण नही रह जाता। एक और खोज है ज्ञान की। ज्ञानी को भी दम्भ पैदा हो जाता है कि "मै कुछ हू" और ज्ञानी धनी मे कही ज्यादा दम्भी होता है। क्योकि वह यह कहता है कि यह धन तो बाहर की सम्पत्ति है। यह तो भौतिकवादी है। और हम! हम तो अध्यात्मवादी हैं, हम तो ज्ञान के खोजी हैं। धन, यह तो क्षुद्रवाद है। लेकिन इस ज्ञान से भी क्या हो रहा है? ज्ञान मे भी अहकार मजबूत हो रहा है कि "मै कुछ हू।"

ज्ञानियो की आखो मे देखिये, उनके आसपास ढूढ़िये और खोजिए। वहा शांति नही मिलेगी, मिलेगा अहकार। नही तो ज्ञानी शास्त्रार्थ करते, घूमते

घूमते और एक-दूसरे को हराते और पराजित करते ? जहा किसी को हराने का भाव आता है वहा सिवाय अहकार के और क्या होगा ? ज्ञानी शास्त्र लिखते हैं और वह भी दूसरे शास्त्रो के खण्डन, निन्दा, गाली गलौज मे ? अगर इन ज्ञानियो के शास्त्र देखें तो बहुत हैरान हो जायेंगे । जितनी गाली गलौज की जा सकती है वह सब वहा मौजूद है । जितना जो भी मनुष्य के मन मे दूसरे मनुष्य के प्रति हिंसा, घृणा और क्रोध हो सकता है वह सब वहा मौजूद है । यह क्या है ? इन ज्ञानियो ने खुद भी लडा और दुनियाँ को लडाया और ऐसी दीवाल खडी कर दी जिसको तोडना मुश्किल हुआ जा रहा है । ये दीवालें सब अहकार की दीवाले है और ये ज्ञानी अगर धन को छोड भी दें तो छोडने से कोई फर्क नहीं पडता है । अहकार फिर भी तृप्त होता है । अहकार अपनी जगह है । धन छोडने मे कोई फर्क नही पडा ।

धनी का अहकार होता है । त्यागी का अहकार होता है । और त्यागी का अहकार धनी के अहकार से ज्यादा खतरनाक होता है । क्योकि वह ज्यादा सूक्ष्म है और दिखाई नही पडता । ज्ञानी का अहकार होता है कि मै जानता हू । यह जो 'जानने' का भाव है यह सूक्ष्मतम भीतरी दीवार है । यह सर्व से, समस्त से जुडने नही देगी । यह तोड देगी । अहकार तोडने वाली इकाई है। वह आपको तोडता है सबसे तब आप अकेले रह जाते हैं । आप सबसे टूट जाते हैं । अहकार तोडता है इसलिए अहकार परमात्मा की तरफ ले जाने वाला नही होता है । अहकार किसी भी भाति अपने को भर सकता है—स्वार्थ से, ज्ञान से, धन से । न मालूम कितने और किन रूपो से भर सकता है । अहकार जहा है, 'मै कुछ हू' यह भाव जहा है वहा सर्व के साथ सामजस्य नही हो सकेगा । क्योकि 'मै कुछ हू' वही स्वर सारे सगीत को विकृत कर देगा । क्या यह नही हो सकता कि यह 'मै' चला जाये ? यह हो सकता है, यह हुआ है । जमीन पर आगे भी यह होता रहेगा । यह आपके भीतर भी घटित हो सकता है ।

ज्ञान के भ्रम को विसर्जित करन मे मन डरता है । डर यह है कि अगर मेरा ज्ञान ही गया तो फिर मै तो 'न-कुछ' हो गया । फिर तो मै नामहीन हो गया । लेकिन जिन्हे परमात्मा को खोजना है, वे स्मरण रखे कि उन्हें 'न-कुछ' होना पडेगा । प्रेम के द्वार पर जो 'कुछ' होकर जाता है उसे खाली हाथ वापस लौटना पडता है । प्रेम के द्वार पर जो 'न-कुछ' होकर जाता है उसे हमेशा द्वार खुले मिलते हैं और स्वागत मिलता है ।

रूमी ने एक गीत गाया है। गाया है कि प्रेमी अपनी प्रेयसी के द्वार पर गया। द्वार खटखटाया। किसी ने पूछा कौन हो ? प्रेमी ने कहा, मै हू तेरा प्रेमी। तुरन्त सन्नाटा हो गया। उसने बहुत बार द्वार भडभडाये और कहा, बोलती क्यों नहीं हो ? मै तुम्हारा प्रेमी द्वार पर पडा खडा हू, चिल्ला रहा हू। आधी रात गयी भीतर से किसी ने कहा लौट जाओ। यह द्वार न खुल सकेगा। क्योकि प्रेमी के द्वार पर जो आदमी कहता है कि 'मै हू' प्रेम के द्वार उसके लिये कैसे खुल सकते हैं ? प्रेम के घर मे दो के लिये कोई जगह नहीं है, लौट जा। वह प्रेमी लौट गया। वर्षा आई, सर्दी आई, धूप आई, दिन आये और गये। चाद उगे और गिरे और न मालूम कितने वर्ष बीते। और फिर एक बार रात उस दरवाजे पर फिर दस्तक सुनी गयी। और फिर उससे किसी ने पूछा कि कौन हो ? बाहर से किसी ने कहा कि अब तो तू ही है। और कहते हैं द्वार खुल गये और पीछे पता चला कि द्वार तो खुले ही हुए थे। केवल 'मै' के कारण बद मालूम पडते थे। 'मै' नही था तो कोई दीवार न थी। 'मै' परमात्मा और मनुष्य के बीच मे रुकावट है। 'मै' पर पहली और गहरी और सूक्ष्म चोट वही होगी जहा 'मै' की सबसे गहरी जडें हैं। वह जो जानने का भाव, वह जो जानने का ख्याल है, उसे तोडना होगा। और सच्चाई तो यह है कि हम जानते भी कुछ नही है, तोडने मे कठिनाई क्या है ? क्या जानते हैं, ? क्या जाना है ? कुछ भी तो नहीं। जीवन ऐसे निकल जाता है जैसे पानी पर कोई लकीर खींचता है। जान ही क्या पाते हैं ? कभी सोचा है कि क्या जान पाये हैं ? कुछ भी तो नही लेकिन छोडने मे भय होता है। उस भय को जो पार नहीं करता वह परमात्मा के रास्ते मे यात्री नही हो सकता है। उस भय को पार करना होगा।

पहला सूत्र है ज्ञान के अहकार को चोट देना। उसे बिखेरना, उसे जानना। चोट देते ही एक अद्‌भुत क्रान्ति भीतर मालूम होगी। जिन्दगी बिल्कुल और तरह की दिखाई पडने लगेगी। जिस फूल के पास कल गुजरे थे उसी फूल के पास से जब आज गुजरेगें तो फूल दूसरा दिखाई पडेगा। क्योकि कल आप सोचते थे कि मै जानता हू इस फूल को। जिस फूल को आप जानते थे तो वह इस भ्रम के कारण ही 'न कुछ' था, लेकिन आज उस फूल के पास से निकलेगें और यह जानते हुए कि नही जानते हैं, तो शायद एक पल ठहर जायेंगे और उस फूल को देखेंगे तब शायद वह रहस्यपूर्ण मालूम होगा और न मालूम कितने दूर का सन्देश लाता हुआ मालूम पडेगा। उस फूल को भी अगर पूरी तरह शान्ति से देखेंगे तो शायद परमात्मा के किसी सौन्दर्य की झलक

वहा दिखाई देगी । लेकिन जानने वाले व्यक्ति को वह नहीं दिखाई पड़ेगा। क्योंकि वह सब जगह से अधे की भाति निकल जाता है ।

यह जो ज्ञान का दम्भ है, वह आदमी को अधा कर देता है । यह चीजों को देखने नही देता है । पैर के नीचे जो दूब है परमात्मा वहां भी है, आसपास जो लोग हैं, परमात्मा वहा भी है । हवाए हैं, आकाश है और बादल हैं और सब कुछ है और जो कुछ है सबमे वही है । लेकिन वह दिखाई तो नहीं पडता क्योकि देखनेवाली आख नही है । यह ज्ञान जो रोके हुए है सारे रहस्य के द्वार —पर्दे की तरह, दीवालो की तरह । तो पहली चोट इस ज्ञान पर ही करनी पड़ेगी और ज्ञान पर आप चोट कर पाये तो एक दूसरा अभिनव क्षितिज खुलता हुआ दिखाई पड़ेगा—जो कि प्रेम का है जो ज्ञान को छोडने को राजी होता है उसके लिये प्रेम के द्वार खल जाते हैं ।

तो पहला सूत्र है, ज्ञान से तोडना अपने को । और दूसरा सूत्र है, प्रेम से जोडना । जानने का भाव छोड दें और प्रेम करने के भाव को जान लें। जानने वाला नही जान पाता है और प्रेम करने वाला जान लेता है। हम तो कुछ ऐसे हजारो वर्षों से प्रेम के विरोध में पाले गये हैं कि जिसका कोई हिसाब नही । ज्ञान के पक्ष मे और प्रेम के विरोध मे पाले गये हैं । मैं आप से निवेदन करता हू कि ज्ञान के विरोध में, प्रेम से, प्रेम के जीवन मे गति करें। प्रेम मे चरण रखें । जब प्रेम की दिशा मे चित्त प्रवाहित हो जायेगा तो परमात्मा से ज्यादा निकट कोई भी नहीं है और अगर ज्ञान की दिशा मे बुद्धि काम करती रहेगी तो परमात्मा से ज्यादा दूर कोई नहीं है । विज्ञान कभी परमात्मा को नही जान पायेगा क्योकि विज्ञान की खोज किसी तथाकथित ज्ञान की ही खोज है। इसलिये विज्ञान जितना बढता जाता है वह कहता है कि ईश्वर कहीं नहीं है। विज्ञान इसी तथाकथित ज्ञान की चरम परिणति है। लेकिन प्रेम तो हर कदम पर परमात्मा को पाता है । प्रेम तो हिल भी नही पाता बिना परमात्मा के । लेकिन प्रेम की भाषा को गणितज्ञ कैसे समझेगा ? ज्ञानी कैसे समझेगा ? प्रेम की भाषा उसकी समझ मे बिल्कुल भी नही आती ।

एक फकीर था । वह प्रेम के गीत गाता और प्रेम की ही बातें करता था । अनेक लोग उससे कहते कि तुम परमात्मा की बातें क्यों नही करते । वह कहता कि परमात्मा की बातें क्या करें । जो प्रेम को ही नही जानता उससे परमात्मा की बातें करनी नासमझी है । वह कहता कि हम तो प्रेम की ही बातें करते हैं। जो प्रेम को नहीं जानता उससे परमात्मा के लिये क्या कहें ? जिन्होने

दिया नहीं देखा उनको सूरज की क्या खबर कहे। वह क्या समझेंगे सूरज को और जिसने दिया देखा है उससे भी क्या सूरज की बात करे ? क्योंकि जिसने दिया देख लिया है उसने सूरज भी देख लिया है।

एक दिन एक पडित पहुचा और उसने कहा कि तुम प्रेम ही प्रेम रटे जाते हो। यह भी पता है कि प्रेम कितने प्रकार का होता है ? पडित हमेशा प्रकार पूछता है। वह पूछता है कि कितने प्रकार का प्रेम होता है, कितने प्रकार के सत्य होते है, कितने प्रकार के ईश्वर होते हैं ? वह तो हर जगह यही बात पूछता है। पडित ने उस फकीर से भी पूछा कि कितने प्रकार का प्रेम होता है। मालूम है ? वह फकीर बोला, हैरान कर दिया तुमने। प्रेम तो हम जानते हैं। प्रकार का तो हमे आज तक कोई पता नही चला। यह 'प्रकार' क्या होता है ? प्रेम मे और प्रकार ? पडित हसा। उसने कहा हसने की बारी मेरी है। अपनी झोली से उसने किताब निकाली और कहा कि यह किताब देखो। इसमे लिखा है कि प्रेम पाच प्रकार का होता है। और तुम प्रेम की बकवास कर रहे हो और प्रकार तक का पता ही नही ! क्या खाक तुम्हे प्रेम का पता होगा ? अभी अ, ब, स, भी नहीं आता है तुम्हे प्रेम का। तुम्हे अभी प्रकार भी मालूम नही है। यह तो पहली क्लास है प्रेम की। तो पहले प्रकार सीखो, प्रेम के सम्बन्ध मे शास्त्र पढो, प्रेम के सिद्धान्त सीखो फिर प्रेम की बातें करो। वह फकीर बोला कि भूल हो गयी भाई, हम तो प्रेम ही करने लगे। यह तो गल्ती हो गयी। प्रकार सीखने के लिये किसी प्रेम के विद्यालय मे भर्ती होना था। मै नहीं हो पाया। यह गल्ती हो गयी। उस पडित ने कहा कि सुनो, मै तुम्हे अपना शास्त्र सुनाता हू। उसने शास्त्र सुनाया। बडी भारी व्याख्या की जैसी कि पडितो की हमेशा से आदत रही है। वे भारी व्याख्यान करते रहे है, बिना इस बात को जाने कि जिसकी वे व्याख्या कर रहे हैं उसे वे जानते भी नही। उसने बडी बारीक व्याख्या की, बडे सूक्ष्म तर्क उठाये। फकीर बिना कोई जवाब दिये शान्ति से सुनता रहा। पडित ने सोचा ठीक है। फकीर प्रभावित है। क्योंकि पडित एक ही बात जानता है। या तो विवाद करो या फिर शान्त रह जाओ, विवाद मत करो। उसने देखा कि फकीर विवाद नही करता है तो वह मान रहा है। तब उसने कहा, सुनी पूरी बात ? समझ मे आयी ? कैसा लगा ? तुम्हे कैसा लगा मेरी बात सुन कर ? उस फकीर ने कहा कि मुझे ऐसा लगा, "जैसे एक दफा एक फूल की बगिया मे एक जौहरी सोने को कसने के पत्थर को लेकर घुस आया और माली से बोला

देखो कौन कौन फूल सच्चे हैं, मैं अभी पता लगाता हू । और अपने सोने के पत्थर पर फूलो को घिस घिस कर देखने लगा। और सभी फूल कच्चे साबित हुए। सभी फूल झूठे साबित हुए। तो जैसा उस माली को लगा था वैसे ही मुझे लगा। जब तुम प्रेम के प्रकार करने लगे।"

प्रेम की भाषा अभेद की भाषा है, ज्ञान की भाषा भेद की भाषा है ज्ञान तोडता है, ज्ञान विश्लेषण करता है, प्रेम जोडता है। विज्ञान तोडता है। तोडता चला जाता है। आखिर मे मिलता है परमाणु, आखिरी टुकडा ! प्रेम और धर्म जोडता चला जाता है, जोडता चला जाता है । आखिर मे मिलता है पर-मात्मा ! विज्ञान परमाणु पर पहुचता है जो कि तोडना है, तोडता है। प्रेम परमात्मा पर पहुचता है जो कि जोडता है, जोडता है। जोडने से द्वार मिलेगा परमात्मा का, तोडने से नही। इसलिये पहला सूत्र है ज्ञान को छोड दे। दूसरा सूत्र है प्रेम को फैलने दें और विकसित होने दे। लेकिन यह कैसे प्रेम फैलेगा और विकसित होगा ? क्या जबरदस्ती किसी को जाकर प्रेम करना शुरू कर दीजिएगा ? ऐसे लोग भी है जो जबरदस्ती भी करते है, सेवा करते है, इस आशा मे कि शायद परमात्मा मिल जाये।

एक स्कूल मे एक पादरी ने बच्चो को समझाया कि तुम प्रेम करो, सेवा करो। बिना एक सेवा का काम किये साओ ही मत। दूसरे दिन उसने बच्चो से पूछा कि तुमने कोई सेवा का, प्रेम का कृत्य किया ? तीन बच्चो ने हाथ उठाये और कहा कि हमने किया। बडा खुश हुआ पादरी। तीस बच्चे थे। कम से कम तीन ने तो बात मानी। एक बच्चे को खडा किया और उससे पूछा कि तुमने क्या प्रेम का कृत्य किया ? बच्चे ने कहा, मैंने एक बूढी स्त्री को सडक पार करवाई है। उस पादरी ने कहा, "धन्यवाद । बहुत अच्छा किया" दूसरे लडके से पूछा, तुमने क्या किया? उसने कहा कि मैंने भी एक बूढी स्त्री को सडक पार करवाई है। पादरी को थोडा सा ख्याल हुआ कि इन दोनो ने एक ही काम किया। उसने कहा तुम ने भी अच्छा किया। तीसरे बच्चे से पूछा तुमने क्या किया ? उसने कहा मैंने भी एक बूढी स्त्री को सडक पार करवाई है। पादरी थोडा हैरान हुआ। उसने कहा, क्या तुम तीनो न एकही सेवा का कृत्य किया ? तुमको तीन बूढी स्त्रिया मिल गयी जिनको तुमने सडक पार करवाई ? उन्होने कहा, नही, आप गलत समझे। तीन नही थी। बूढी तो एक ही थी। हम तीनो ने उसी को पार करवाया। उसने पूछा, "क्या तुम तीन लोगो की सहायता की जरूरत पडी उसको पार कराने मे ?" उन बच्चो ने कहा, वह पार

होना ही नही चाहती थी। हमने जबरदस्ती किसी तरह उसे पार किया। वह भागती थी। पार होना नही चाहती थी।

ये जो सेवक सारी दुनिया में सेवा करते हुए मालूम पडते है वे उसी तरह के खतरनाक लोग हैं। ये जबरदस्ती सेवा किये चले जाते है। ये उन बूढे लोगो को सडक पार करवा देते हैं जिनको पार करना नहीं है। दुनियां मे सेवको ने जितना उपद्रव किया है उतना और किसी ने नही किया है। ये सोचते हैं कि इस भाति हम अपना मोक्ष तय कर रहे है। हमको क्या फिक्र है कि आपको सडक पार करनी है या नहीं करनी है। हम तो अपने मोक्ष का इन्तजाम कर रहे है। आपको पार करना हो या न करना हो, हम आप को पार करवाये देते है।

इस तरह कोई जबरदस्ती प्रेम और सेवा उत्पन्न नहीं होती है। प्रेम कोई कृत्य नहीं है। प्रेम आपका प्राण बने, तभीं सार्थक है। प्रेम आपका प्राण कैसे बनेगा ? कैसे यह सम्भव होगा कि प्रेम आपसे प्रवाहित हो उठे ? यह छोटी सी बात अगर ख्याल मे आ जाय तो प्रेम को प्रवाहित होने मे कोई भी बाधा नही है। और वह छोटी सी-बात यह नही है कि आपके प्रेम मे दूसरे को लाभ होगा, बल्कि वह छोटी सी बात यह है कि प्रेम के अतिरिक्त आप भी आनन्द मे प्रतिष्ठित नहीं हो सकेंगे। प्रेम आनन्द मे प्रतिष्ठा देता है। प्रेम किसी का कल्याण नही है। प्रेम आपका ही आनन्द है। कभी आपने कोई ऐसा आनन्द जाना है जो प्रेम से रिक्त और शून्य रहा हो ? जब भी आप आनन्द मे रहे होंगे तब जरूर किसी प्रेम की दशा मे ही आनन्द मे रहे होंगे। लेकिन प्रेम मे खुद को खोना पड़ता है, छोडना पड़ता है। खुद को छोडने की सामर्थ्य जिसमे है, उसीके भीतर उसके प्राण प्रेम से भर सकते हैं। हम अपने को जरा भी छोडने को राजी नही है। हम अपने को खोने को राजी नही हैं जबकि खोने वाला हृदय, देनेवाला हृदय और बाटनेवाला हृदय ही प्रेम करने वाला हृदय है।

यह जो मागने वाला हृदय है, यही प्रेम न करने वाला हृदय है। हम सब चौबीस घटें मे माग रहे हैं। और जब सभी लोग माग रहे हैं तो जिन्दगी अगर घृणा से भर जाये, हिंसा से भर जाये तो आश्चर्य क्या ? और अगर ईश्वर की हत्या हो जाय, तो आश्चर्य कैसा ? इसमे कौन सी आश्चर्य की बात है ? मागने वाला हृदय धार्मिक हृदय नही है। बांटने वाला, देने वाला जरूरी नहीं है कि अपना कपड़ा बाट दें और धन बाट दें।

यह सवाल नहीं है। हृदय के बांटने वाले भाव को चौबीस घंटे मौके हैं, चौबीस घटे चुनौतिया हैं सब तरह से, सब तरफ से। मौका है कि प्रेम आपके दिल मे जगे और फैले। लेकिन इस प्रेम के लिये खोना पड़ेगा खुद को, देना पडेगा खुद को। खुद को खोये बिना कोई रास्ता नहीं है। और खोने के दो रास्ते हैं। या तो नशा करें और अपने को खो दें जैसे कि सब लोग खोते हैं। शराब पीते हैं और खुद को खो देते हैं। राम राम जपते हैं और इतनी देर जपते हैं कि दिमाग ऊब जाता है और नींद आ जाती है और खो जाते हैं। कोई नाटक देखता है, सगीत सुनता है और मूछित हो जाता है, खो जाता है। अपने को भुला देने के लिये, अपने को विस्तृत करने के लिये बहुत से रास्ते है। एक तो यह खोना है। यह खोना हम सारे लोग जानते ही हैं। लेकिन यह खोना नहीं है, यह सोना है। यह मूछित होना है।

एक और खोना है प्रेम मे। प्रेम मे जो खोता है उसे आत्मा का स्मरण हो जाता है और नशे मे जो खोता है उसे जो स्मरण है, वह भी भूल जाता है। प्रेम मे कैसे खोये ? क्या करें ? एक बात अगर ख्याल मे आ जाये तो प्रेम आप से बहेगा। और आप खो सकेंगे। वह बात यह है स्वय को एक इकाई की तरह समझ लेना भूल है। आप पैदा हुए हैं। आपको पता है कैसे और कहा से ? आप मर जायेंगे। पता है कहा और क्यो ? आप जीवित हैं। पता है कैसे ? आपकी स्वास चल रही है। पता है कौन चला रहा है ? क्यो चल रही है ? लोग कहते हैं कि मै स्वास ले रहा हू। कभी आपने सोचा है कि इससे ज्यादा झूठ और कोई बात हो सकती है कि आप कहें कि मै स्वास ले रहा हू ? अगर आप स्वास ले रहे हैं, तो फिर दुनिया मे कोई आप को मार ही नही सकेगा। वह मारे, आप स्वास लेते चले जाये। फिर क्या होगा ? फिर तो मत्यु कभी न आ सकेगी। क्योकि आप स्वास लेते चले जायेंगे। मृत्यु क्या करेगी ? लेकिन हम सब जानते हैं कि मृत्यु क्या करेगी ? स्वास हम लेते नहीं हैं, स्वास चल रही है। और कहते हम यह हैं कि स्वास मै ले रहा हू। जिन्दगी भर हम कहते हैं कि मेरा जन्म। झूठ है यह बात। मेरा जन्म क्या हो रहा है, मै कहा हू ? उसी जन्म मे कहते हैं 'मेरी स्वास मेरा जीवन'।

इस 'मैं' मे व्यर्थ ही जुड़ते चले जाते हैं जो कि कहीं भी सच्चा नही है, और जो कि है भी नही। इसको जोड़ते जोड़ते हम मन मे कल्पित कर लेते हैं फिर ऐसा लगता है कि 'मैं' हू। और यह 'मै हू' मांगने लगता है

क्योंकि वह बिना मागे जी नहीं सकता है। इकट्ठा करने लगता है धन, ज्ञान, त्याग और पूछने लगता है कि मै मोक्ष कैसे जाऊ ? स्वर्ग कैसे जाऊ ? परमात्मा को कैसे पाऊ ? वह सब 'मै' की वजह से है। मै आपसे यह नही कह रहा हू कि आप अहकार छोडने की कोशिश करे। और यदि आपने कोशिश की तो कभी नहीं छोड पायेंगे, क्योंकि छोडने की कोशिश कौन करेगा ? वही 'मै'। और हो सकता है कि एक दिन वह यह घोषणा कर दे कि 'मै' अब बिल्कुल अहकारी नही हू। 'मै' तो अब बिल्कुल विनम्र हो गया हू, अहकार तो मुझ मे है ही नही। तो छोडने की कोशिश से वह नही जायेगा। जिस दिन जीवन को उसकी समग्रता मे देखेंगे उसी दिन उस सम्यक् दर्शन के प्रकाश मे वह नही पाया जायगा। जिस दिन दिखेगा, जन्म अज्ञात है, यात्रा अज्ञात है, मृत्यु अज्ञात है, उसी दिन वह विसर्जित हो जायेगा।

फिर उसे छोडना नही पडेगा, वह विलीन हो जायेगा, वह पाया नही जायेगा। एक हसी आयेगी और लगेगा कि 'मै' तो था ही नही और जिस दिन यह दिखाई पडेगा कि मै' नही है उसी दिन दिखाई पडेगा वह 'जो है'। उसका नाम ही परमात्मा है और उसी दिन वह बहने लगेगा जिसका नाम प्रेम है। उसी दिन सारे हृदय के द्वारो मे एक प्रेम की गगा चारो तरफ बहने लगेगी। एक प्रकाश, एक आनन्द, एक थिरक और एक सगीत स्वय मे पैदा हो जायेगा। उस पुलक और सगीत का नाम धर्म है। उस पुलक, सगीत, प्रेम और आलोक मे जो जाना चाहता है उसी का नाम परमात्मा है।

पत्थरो का परमात्मा मर गया है और अगर हम प्रेम के परमात्मा को जन्म नही दे सके तो फिर मनुष्य जाति को बिना परमात्मा के रहना होगा और सोच सकते है कि बिना परमात्मा के मनुष्य जाति का क्या होगा ? जीवन मे जो भी पाने जैसा है वह प्रेम है। क्या ? क्योंकि प्रेम परमात्मा की सुगन्ध है और जो प्रेम को पा लेता है, वह धीरे-धीरे सुगन्ध के मूल स्रोत को पा लेता है। वह परमात्मा किसी का भी नही है और सब का है। वह परमात्मा किसी मन्दिर और मस्जिद मे कैद नही है और वह परमात्मा किसी मूर्ति मे आबद्ध नही है। वह सब तरफ फैला है। उसे देखने वाली प्रेम की आखे चाहिए। अन्धे शास्त्रो को पढते रहेंगे उससे कुछ नही होगा और प्रेम की आख वाले आख खोल कर देख ले तो सब आनन्द हो जाता है।

ये दो सूत्र मैने कहे—ज्ञान के तट से जजीरे तोड ले और प्रेम के आकाश की यात्रा मे पख खोल दे। पाल खोल दे। प्रेम की हवाए आपको ले

जायेगी, लेकिन ये दोनो बाते तभी हो सकती है जब इन दोनो के बीच एक मध्य बिन्दु हो, वह मैंने आप से अन्त मे कहा। वह आपका अहकार है। अहकार छोडे तो ही ज्ञान से छुटकारा हो सकता है और अहकार जाये तो ही प्रेम के और परमात्मा के द्वार खुल सकते है। अहकार बिल्कुल भी नही है। उसको बिदा करना है जो है ही नही। उससे हाथ जोडना है जो है ही नही। ताकि उसे पाया जा सके 'जो है', सदा से है, सदा रहेगा, अभी है, यही है।

दस : अहंकार

अहंकार

एक पूर्णिमा की रात में एक छोटे से गांव में, एक बड़ी अद्भुत घटना घट गई। कुछ जवान लड़कों ने शराबखाने मे जाकर शराब पी ली और जब वे शराब के नशे मे मदमस्त हो गये और शराबगृह से बाहर निकले तो चाद की बरसती हुई चादनी मे यह ख्याल आ गया कि नदी पर जाएं और नौका विहार करें। रात बड़ी सुन्दर थी और नशे से भरी हुई थी। वे गीत गाते हुए नदी के किनारे पहुच गये। नाव वहा बधी थी। मछुवे नाव बाधकर घर जा चुके थे। रात आधी हो गयी थी। वे एक नाव मे सवार हो गये। उन्होने पतवार उठा ली और नाव खेना शुरू कर दिया। फिर वे रात देर तक नाव खेते रहे। सुबह होने के करीब आ गयी। सुबह की ठण्डी हवाओ ने उन्हें सचेत किया। उनका नशा कुछ कम हुआ और उन्होने सोचा कि हम न मालूम कितनी दूर निकल आये हैं। आधी रात से हम नाव चला रहे हैं, न मालूम किनारे और गाव से कितने दूर आ गये हैं। उनमे मे एक ने सोचा कि उचित है कि नीचे उतर कर देख लें कि हम किस दिशा मे आ गये हैं। लेकिन नशे मे जो चलते है उन्हें दिशा का कोई भी पता नही होता है कि हम कहा पहुच गये हैं और किस जगह हैं। उन्होंने सोचा जब तक हम इसे न समझ लें तब तक हम वापस भी कैसे लौटेंगे। और फिर सुबह होने के करीब है, गाव के लोग चिन्तित हो जायेगे।

एक युवक नीचे उतरा और नीचे उतरकर जोर से हसने लगा। दूसरे युवक ने पूछा, हसते क्यो हो? बात क्या है? उसने कहा, 'तुम भी नीचे उतर आओ और तुम भी हसो।' वे सारे लोग नीचे उतरे और हसने लगे।

आप पूछेंगे बात क्या थी? अगर आप भी उस नाव में होते और नीचे उतरते तो आप भी हसते। बात ही कुछ ऐसी थी। वे वही के वही खड़े थे, नाव कहीं भी नहीं गयी थी। असल मे वे नाव की जजीर खोलना भूल गये थे। नाव की जजीर किनारे से बधी थी। उन्होंने बहुत पतवार चलायी थी और बहुत श्रम किया था लेकिन सारा श्रम व्यर्थ हो गया था क्योंकि किनारे से बधी हुई नावें कोई यात्रा नही करतीं।

मनुष्य की आत्मा की नाव भी किसी खूटी से बंधी है। और इसीलिए

उसकी आत्मा की नाव कभी परमात्मा तक नही पहुच पाती है। वे वही खडे रह जाते है जहा से यात्रा शुरू होती है। श्रम वे बहुत करते है, पतवार वे बहुत चलाते हैं, समय वे बहुत लगाते है लेकिन नाव कही पहुचती नही है। और आदमी उस खूटी से बधा हुआ एक कोल्हू के बैल की तरह चक्कर लगाता है। एक ही जगह पर घूमता है। घूमते घूमते नष्ट और समाप्त हो जाता है। सारा जीवन इन्ही चक्करो मे व्यर्थ चला जाता है।

एक गाव मे मै गया था। एक बैल कोल्हू चलाने का जीवन भर काम करता रहा। फिर वह बूढा हो गया और बैल के मालिक ने उसे काम के योग्य न समझ कर छोड दिया। अब वह खुला ही घूमता रहता था। लेकिन मै बडा हैरान हुआ। वह गोल चक्करो मे ही घूमता था। खेत मे उसे छोड देते तो वह गोल चक्कर लगाता था। जीवन भर की उसकी आदत थी। आज कोई बीच मे खूटी भी नही थी। आज किसी कोल्हू मे भी वह नही जुता था। लेकिन जीवन भर गोल चक्करो मे जो घूमा है वह गोल चक्करो मे घूमने की आदत के कारण फिर भी गोल गोल ही घूमता था। गाव के लोगो ने उस बैल को समझाने की बहुत कोशिश की, कि इस तरह मत घूमो, लेकिन बैल कही किसी की सुनते है? बैल तो दूर, आदमी ही नही सुनते तो बैल कैसे सुनेंगे? उस गाव के लोग कैसे नासमझ थे, उस बैल को समझाते थे कि सीधे चलो, गोल गोल घूमने की कोई भी जरूरत नही है क्योंकि जो गोल गोल घूमता है वह कही भी नही पहुचता है। जिसे पहुचना हो, उसे सीधे जाना होता है, गोल नही घूमना होता है। मुझे हसी आयी थी उन गाव के लोगो पर। मै भी उस गाव के लोगो को समझाने गया था। गाव के एक बूढे आदमी ने कहा कि तुम हम पर हसते हो कि हम बैलो को समझाते है और हम तुम पर हसते हैं कि तुम आदमी को समझाते हो। न बैल सुनते हैं, न आदमी सुनता है और बैल तो सुन भी सकते है कभी क्योंकि बैल सीधे और सरल है। आदमी तो बहुत तिरछा है, वह नहीं सुन सकता है।

लेकिन फिर भी चाहे यह गलती ही सही नासमझी ही सही, आदमी को समझाना ही पडेगा। वह सुने या न सुने उसे कहना ही पडेगा। क्या कहना है उसे? उस खूटी के बाबत उसे कहना है जिससे बधा हुआ वह एक कोल्हू का बैल बन जाता है, एक अमृतमयी आत्मा नही। वह एक बधा हुआ पशु बन जाता है। शायद आपको पता न हो कि पशु शब्द का अर्थ क्या होता है? पशु शब्द का अर्थ ही होता है जो पाश मे बधा हो। बधे हुए होने को ही पशु

कहते हैं। पशु का अर्थ है जो पाश में बंधा है, किसी जंजीर में बंधा है, किसी कील से ठुका है। जो बंधा है वही पशु है। हम सारे लोग ही बंधे हैं। हमारे भीतर मनुष्य का भी जन्म नहीं हो पाता, परमात्मा तो बहुत दूर की मंजिल है। अभी तो आदमी भी होना बहुत कठिन है।

डायोजिनीज का नाम सुना होगा, जरूर सुना होगा। और यह भी हो सकता है कि वह कहीं न कहीं आपको मिल गया हो। सुनते हैं दो हजार साल पहले वह पैदा हुआ था और दिन की भरी रोशनी में जलती हुई लालटेन लेकर गांवों में घूमा करता था और हर आदमी के चेहरे के पास लालटेन ले जाकर देखता था। लोग चौंक जाते थे कि क्या बात है! क्या देखना चाहता है! और दिन की रोशनी में जबकि सूरज आकाश में हो, लालटेन किसलिए लिए हुए है? दिमाग खराब हो गया है? वह कहता, "दिमाग मेरा खराब नहीं हुआ है। मैं आदमी की तलाश में हूं। मैं हर आदमी के चेहरे को रोशनी में देखने की कोशिश करता हूं, आदमी है या नहीं? क्योंकि चेहरे बहुत धोखा देते हैं। चेहरों से ऐसा मालूम होता है कि सब आदमी हैं और भीतर आदमियत का कोई निवास नहीं होता है।"

आदमी भी होना कठिन है, परमात्मा तो दूर की मंजिल है। लेकिन यह भी आपसे कहूं, जो आदमी हो जाता है उसके लिए परमात्मा की मंजिल भी बहुत निकट हो जाती है। कौन सी चीज है जो हमें बांधे है जिसके कारण हम पशु हो जाते हैं?

एक छोटी सी कहानी से शायद इशारा ख्याल में आ सके कि कौन सी चीज हमें बांधे हुए है, कौन सी चीज के इर्द गिर्द हम जीवन भर घूमते हैं और नष्ट हो जाते हैं। कुछ ऐसी चीज है जिसके पीछे हम पागल की तरह चक्कर लगाते हैं और व्यर्थ नष्ट हो जाते हैं।

एक जंगल के पास एक छोटा सा गांव था। और एक दिन सुबह एक सम्राट शिकार खेलने में भटक गया और उस गांव में आया। रात भर का थका मांदा था और उसे भूख लगी थी। वह गांव के पहले ही झोपड़े पर रुका और उस झोपड़े के बूढ़े आदमी को कहा, "क्या मुझे दो अण्डे उपलब्ध हो सकते हैं? थोड़ी चाय मिल सकती है?" उस बूढ़े आदमी ने कहा जरूर, स्वागत है आपका! आइये! वह सम्राट बैठ गया उस झोपड़े में। उसे चाय और दो अण्डे दिये गये। नाश्ता कर लेने के बाद उसने पूछा कि इन अण्डों के दाम कितने हुए। उस बूढ़े आदमी ने कहा, ज्यादा नहीं, केवल १०० रु०। सम्राट

तो हैरान हो गया। उसने बहुत महगी चीजें खरीदी थीं, लेकिन कभी सोचा भी नहीं था कि दो अडो के दाम भी १०० रु. हो सकते हैं। उस सम्राट ने उस बूढ़े आदमी को पूछा, 'क्या इतना कठिन है अण्डे का मिलना यहा ?' वह बूढा आदमी बोला, 'नही। अण्डे तो बहुत मुश्किल नही हैं, बहुत होते हैं, लेकिन राजा मिलना बहुत मुश्किल है। राजा कभी-कभी मिलते हैं।' उस सम्राट ने १०० रु निकाल कर उस बूढे को दे दिये और अपने घोडे पर सवार होकर चला गया।

उस बूढे की औरत ने कहा, "कैसा जादू किया तुमने कि दो अण्डे के सौ रुपये वसूल कर लिये। क्या तरकीब थी तुम्हारी ?" उस बूढे ने कहा 'मै आदमी की कमजोरी जानता हू। जिसके आस-पास आदमी जीवन भर घूमता है वह खूटी मुझे पता है। और खूटी को छू दो और आदमी एकदम घूमना शुरू हो जाता है। मैने वह खूटी छू दी और राजा एकदम घूमने लगा।' उसकी औरत ने कहा, 'मै समझी नही। कौन सी खूटी ? कैसा घूमना ?' उस बूढे ने कहा तुझे मै एक और घटना बताता हू अपनी जिन्दगी की। शायद उससे तुझे समझ मे आ जाये।

जब मै जवान था तो मै एक राजधानी मे गया। मैने वहा एक सस्ती सी पगडी खरीदी जिसके दाम तीन चार रुपये थे। लेकिन पगडी बडी रगीन और चमकदार थी। जैसी कि सस्ती चीजें हमेशा रगीन और चमकदार होती हैं। जहा बहुत रगीनी हो और बहुत चमक हो, समझ लेना भीतर सस्ती चीज होनी ही चाहिए। सस्ती थी लेकिन तब भी बहुत चमकदार थी, बहुत रगीन थी। मै उस पगडी को पहनकर सम्राट के दरबार मे पहुच गया। सम्राट की आख एकदम से उस पगडी पर पडी। क्योंकि दुनिया मे ऐसे लोग बहुत कम है जो कपडे के अलावा कुछ और देखते हो। आदमी को कौन देखता है ? आत्मा को कौन देखता है ? पगडिया भर दिखाई पडती हैं। उस सम्राट की नजर एकदम पगडी पर आ गई और उसने कहा, 'कितने मे खरीदी है ? बडी सुन्दर, रगीन है।' मैने उस सम्राट से कहा 'पूछते हैं कितने मे खरीदी है ? पाच हजार रुपये खर्च किये हैं इस पगडी के लिए।' सम्राट तो एकदम हैरान हो गया लेकिन इससे पहले कि सम्राट कुछ कहता, वजीर ने उसके सिंहासन के पास झुक कर सम्राट के कान मे कुछ कहा। उसने सम्राट के कान मे कहा कि सावधान ! आदमी धोखेबाज मालूम होता है। दो चार पाच रुपये की पगडी के पाच हजार दाम बता रहा है। बेइमान है। लूटने के इरादे है।

उस बूढे ने अपनी पत्नी को कहा, मै फौरन समझ गया कि वजीर क्या कह रहा है। जो लोग किसी को लूटते रहते हैं वे दूसरे लूटने वाले से बड़े सचेत हो जाते हैं। लेकिन मै भी हारने को राजी नही था। मै वापस लौटने लगा। मैने उस सम्राट को कहा कि मै जाऊ? क्योकि मैंने जिस आदमी से यह पगडी खरीदी है उसने मुझे यह वचन दिया है कि इस पृथ्वी पर एक ऐसा सम्राट भी है जो इस पगडी के पचास हजार भी दे सकता है। मै उसी सम्राट की खोज मे निकला हुआ हू। तो मै जाऊ? आप वह सम्राट नही हैं। यह राजधानी वह राजधानी नही है। यह दरबार वह दरबार नही है जहाँ यह पगड़ी बिक सकेगी। लेकिन कहीं बिकेगी, मै जाता हू।

उस सम्राट ने कहा, 'पगडी रख दो और पचास हजार रुपये ले लो।' वजीर बहुत हैरान हो गया। जब मै पचास हजार रुपये लेकर लौटने लगा, दरवाजे पर वजीर मुझे मिला और कहा हद कर दी। हम भी बहुत कुशल हैं लूटने मे लेकिन यह तो जादू हो गया। मामला क्या है? तो मैंने वजीर के कान मे कहा कि तुम्हें पता होगा कि पगडियो के दाम कितने होते हैं, लेकिन मुझे आदमियो की कमजोरियो का पता है। मुझे उस खूटी का पता है जिसको छू दो और आदमी एकदम घूमने लगता है।

पता नहीं वह बूढी समझ पाई अपने पति की यह बात या नहीं। लेकिन आप समझ गये होगे। आप पहचान गये होगे कि आदमी किस खूटी से बधा है। अहकार के अतिरिक्त आदमी के जीवन मे और कोई खूटी नहीं है। और जो अहकार से बधा है वह और हजार तरह से बध जाएगा। और जो अहकार से मुक्त हो जाता है वह और सब भाति भी मुक्त हो जाता है। एक ही स्वतन्त्रता है जीवन मे, एक ही मुक्ति है, एक ही मोक्ष है और एक ही द्वार है प्रभु का और वह है अहकार की खूटी से मुक्त हो जाना। एक ही धर्म है, एक ही प्रार्थना है, एक ही पूजा है और वह है अहकार से मुक्त हो जाना। एक ही मदिर है, एक ही मस्जिद है, एक ही शिवालय है। जिस हृदय में अहकार नहीं वही मदिर है, वही मस्जिद है, वही शिवालय है।

जीवन को देखने की दो ही दृष्टिया हैं और जीवन को जीने के दो ही ढग हैं। या तो अहकार के इर्दगिर्द जियो या निरहकार के। जो अहकार से बधा है वह पृथ्वी से बधा रह जाता है। और निरहकार मे जो उठते हैं आकाश उनका हो जाता है। आकाश की स्वतन्त्रता उनकी हो जाती है। जीवन में विराट तक पहुचने का मार्ग खुल जाता है। क्यो? क्योकि जो क्षुद्र से

मुक्त होता है वह विराट मे सयुक्त हो जाता है। यह तो गणित की तरह सीधा सा नियम है। यह तो एक सार्वभौम (Universal) नियम है। जो क्षुद्र से बधा है वह विराट मे वचित हो जाएगा। और जो क्षुद्र मे मुक्त हो जाता है वह विराट मे प्रविष्ट हो जाता है।

एक पानी की बूद थी। वह समुद्र होना चाहती थी। वह बूद मुझसे पूछने लगी, मै समुद्र कैसे हो जाऊगी? मैने उस बूद को कहा, बडी छोटी और एक ही तरकीब है। बूद अगर बूद होने से राजी है अगर बूद, बूद ही बनी रहने मे सुखी है तो समुद्र से मिलन का कोई रास्ता नही है। लेकिन अगर तू बूद की भाति मिटने को राजी हो जा तो मिटते ही सागर हो जायेगी उस बूद ने मेरी बात मान ली। वह सागर मे कूद गई। उसने खो दिया अपने को। उसने अपने अहकार को धो डाला। वह सागर से एक हो गई लेकिन उसने कुछ खोया नही। उस बूद ने खोया बूद होना और वह हो गई सागर। इसे कोई खोना कहेगा? इसे कोई मिटना कहेगा? अगर यही मिटना है तो फिर पाना और क्या हो सकता है?

हम अहकार की खूटी मे बधे हुए है और परमात्मा के सागर को खोजने निकल पडे है। हम अहकार की छोटी क्षुद्र बिन्दु बने हुए है और विराट के असीम के साथ एक होने की कामना ने हमे पीडित कर रखा है। हम भी इनके किनारे मे बधे हुए है और सागर की यात्रा, अज्ञात सागर की यात्रा को हमने स्वीकार कर लिया है। इन्ही दोनो के बीच खिच खिच कर आदमी नष्ट हो जाता है। वह अहकार को भी बचा लेना चाहता है और प्रभु को भी पा लेना चाहता है। कबीर कहते थे "उसकी गली बहुत सकरी है, वहा दो नही समा सकेगे। या तो वही हो सकता है या फिर हम हो सकते है।'

हमारा सारा जीवन अहकार को परिपुष्ट करने मे व्यतीत होता है, विसर्जित करने मे नही। हम उसे मजबूत करते हैं जो हमारी पीडा है। हम उसी घाव को गहरा करते हैं जो हमारा दुख है। हम उसी बीमारी को पानी सीचते है जो प्राण लिये लेती है। अहकार को सीचने के सिवाय हम जीवन भर और करते ही क्या है? किसलिए उठाते हैं यह मकान आकाश को छू लेने वाले? आदमी के रहने के लिए? झूठी है यह बात। अहकार का निवास बनाने के लिए, आदमी के रहने के लिए छोटे झोपडे भी काफी हैं लेकिन अहकार के लिए बडे से बडे मकान भी छोटे हैं। अहकार उठाता है बडे मकानो को कि आकाश छू ले। किसलिए विजय यात्राए चलती हैं? किसलिए सिकन्दर,

नेपोलियन और चगेज पैदा होते हैं ? जीने से चंगेज का, सिकन्दर का, नेपोलियन का क्या वास्ता ? लेकिन नही, अहकार की यात्राए बडी दूर ले जाती हैं आदमी को।

सिकन्दर जिस दिन मरने को था बहुत उदास था। किसी ने पूछा कि तुम इतने उदास क्यो हो ? सिकन्दर ने कहा कि मै इसलिए उदास हू कि सारी दुनिया को मैने करीब करीब जीत लिया। अब बडी कठिनाई मे मै पड गया हू। दूसरी कोई दुनिया ही नही है जिसको मै आगे जीतू और अब मेरे भीतर बडा खालीपन मालूम होता है। क्योकि जब तक मै जीतता न रहू तब तक मुझे कोई चैन नही और दुनिया समाप्त होने के करीब आ गई है। दूसरी कोई दुनिया नहीं है। मै क्या जीतू ?

अहकार दुनिया को जीत ले तो फिर दूसरी दुनिया को जीतने की आकाक्षा शुरू हो जाती है।

अमरीका का एक बहुत बडा करोडपति कारनेगी मरणशैया पर पडा था। एक मित्र ने उससे पूछा कितनी सम्पत्ति तुमने जीवन मे इकट्ठी की है ? उसने कहा—ज्यादा नहीं, केवल दस अरब। मित्र ने कहा—दस अरब! और कहते हो ज्यादा नही! कारनेगी ने कहा, मेरे इरादे सौ अरब इकट्ठा करने के थे, लेकिन बुढापा निकट आ गया, योजना अधूरी रही जाती है।

क्या आप सोचते हैं कि कारनेगी सौ अरब इकट्ठा कर लेता तो कोई फर्क पड जाता ? जरा भी फर्क नहीं पडने वाला था। आदमी को हम भली-भाति जानते हैं। फर्क जरा भी नही पड सकता था। कारनेगी के पास सौ अरब इकट्ठे हो जाते तो कारनेगी के इरादे हजार अरब पर पहुच जाते। आदमी का इरादा उसके आगे चलता है। आदमी की वासना उसके आगे चलती है। आदमी हमेशा पीछे रह जाता है। मजिल जिसको वह छूना चाहता है और आगे हट जाती है। अहकार दौडता है और दौडता है, लेकिन कही भी पहुचता नही है।

एक छोटी सी बच्चो की कथा है। अलाइस नाम की एक लडकी स्वर्ग मे पहुच गई, परियो के देश मे। पृथ्वी मे स्वर्ग तक पहुचते पहुचते बहुत थक गई थी। स्वर्ग मे पहुचते ही, परियों के देश मे पहुचते ही उसे दिखाई पडा कि दूर एक आम की घनी छाया के नीचे परियो की रानी खडी है और उसके पास फलो के और मिठाइयो के थाल सजे है और वह रानी उस भूखी अलाइस को बुला रही है कि आ जाओ। वह दिखाई पड रही है। उसकी आवाज सुनाई

पड़ती है कि अलाइस आ जा। अलाइस दौड़ना शुरू कर देती है। सुबह है, सूरज निकल रहा है। फिर दोपहर हो जाती है। सूरज ऊपर आ गया है और अलाइस दौड़ी चली जा रही है। अब वह थक गई है। उसने खड़ी होकर चिल्लाकर पूछा कि कैसी दुनिया है तुम्हारी! सुबह से मैं दौड रही हू लेकिन मेरे और तुम्हारे बीच का फासला पूरा नहीं होता! तुम उतनी ही दूर मालूम पड़ती हो रानी! रानी ने चिल्लाकर कहा, घबरा मत, दौड़ती आ। जो दौड़ते हैं वे पहुच जाते हैं। खड़ी होकर समय मत खो। थोड़ी देर मे सूरज ढल जाएगा और साझ आ जाएगी। दौड़, जल्दी आ।

अलाइस और तेजी से दौड़ने लगी। सूरज जैसे जैसे नीचे उतरने लगा अलाइस और तेज दौड रही है, और तेज दौड रही है। लेकिन न मालूम कैसी पागल दुनिया है। रानी उतनी ही दूर, रानी और उसके बीच का फासला कम नही होता है। फिर वह थक कर चकनाचूर होकर गिर पड़ती है और चिल्लाती है कि मामला क्या है? ये कैसे रास्ते हैं परियो के देश के कि मैं सुबह से दौड़ रही हू, सूरज डूबने के करीब आ गया और मैं अब तक तुम्हारे पास पहुच नही पाई। तुम उतनी ही दूर खड़ी हो जितनी सुबह थी? वह रानी खूब हसने लगी। उसने कहा पागल! परियो के देश मे ही रास्ते ऐसे नही है, आदमियो के देश मे भी रास्ते ऐसे ही हैं। लोग दौड़ते हैं, लेकिन पहुचते कभी भी नही। फासला उतना ही बना रहता है।

जन्म के साथ आदमी जहा होता है मरने के साथ भी अपने को वही पाता है। कोई फासला पूरा नही होता, कोई यात्रा पूरी नही होती। जिस अहकार को हम भरने चले हैं वह एकदम झूठी इकाई (False entity) है। वह होती तो भर भी जाती। वह होती तो हम उसे पूरा भी कर लेते। वह होती तो हम उसकी पूर्ति का कोई न कोई रास्ता खोज लेते। लेकिन अहकार है झूठी इकाई। आदमी के भीतर अहकार मे ज्यादा बड़ा असत्य नही है। वह है ही नही। 'मै' जैसी कोई भी चीज शब्दो के अतिरिक्त और कही भी नहीं है। और जिस दिन शब्दो को छोडकर भीतर झाकेगें तो वहा किसी 'मै' को नही पायेगे। कभी किसी ने नहीं पाया है।

'मै' एक शब्द मात्र है, 'मै' एक सज्ञा मात्र है, एक काम चलाऊ शब्द है। हमारे सभी शब्द काम चलाऊ हैं। एक आदमी का नाम हम रख लेते हैं। दूसरे लोगो के पुकारने के लिए नाम रख लेते हैं ताकि दूसरे लोग पुकारें तो पता चले कि किसको पुकार रहे हैं। दूसरे को पुकारने के लिए होता है नाम

और खुद को पुकारने के लिए होती है 'मैं' की इकाई, अन्यथा हम क्या पुकारें अपने आपको ? कहते हैं 'मैं'। यह शब्द काम दे देता है जीवन में। लेकिन यह शब्द बड़ा झूठा है। इसके पीछे कोई भी सत्य नहीं है, यह बिल्कुल छाया है। इसके पीछे कोई भी वस्तु नही, कोई भी पदार्थ नहीं। यह बिल्कुल झूठी छाया है और इस छाया को हम घेरने मे, दौडने मे लगे रहते हैं, छाया को ही पकडने मे लगे रहते हैं।

एक सन्यासी एक घर के सामने से निकल रहा था। एक छोटा सा बच्चा घुटने टेक कर चलता था। सुबह थी और धूप निकली थी और उस बच्चे की छाया आगे पड रही थी। वह बच्चा छाया मे अपने सिर को पकडने के लिये हाथ ले जाता है, लेकिन जब तक उसका हाथ पहुचता है छाया आगे बढ जाती है। बच्चा थक गया और रोने लगा। उसकी मा उसे समझाने लगी कि पागल यह छाया है, छाया पकडी नही जाती। लेकिन बच्चे कब समझ सकते हैं कि क्या छाया है और क्या सत्य है ? जो समझ लेता है कि क्या छाया है और क्या सत्य, वह बच्चा नही रह जाता। वह प्रौढ़ होता है। बच्चे कभी नहीं समझते कि छाया क्या है, सपने क्या है, झूठ क्या है।

वह बच्चा रोने लगा। कहा कि मुझे तो पकडना है इस छाया के सिर को। वह सन्यासी भीख मागने आया था। उसने उसकी मा को कहा, मै पकडा देता हू। वह बच्चे के पास गया। उस रोते हुए बच्चे की आंखो से आसू टपक रहे थे। सभी बच्चो की आँखो से आसू टपकते हैं। जिन्दगी भर दौड़ते है और पकड नही पाते। पकडने की योजना ही झूठी है। बूढे भी रोते है और बच्चे भी रोते है। वह बच्चा भी रो रहा था तो कोई ना-समझी तो नही कर रहा था। उस सन्यासी ने उसके पास जाकर कहा, बेटे रो मत। क्या करना है तुझे ? छाया पकडनी है न? उस सन्यासी ने कहा, जीवन भर भी कोशिश करके थक जायेगा, परेशान हो जायेगा। छाया को पकडने का यह रास्ता नही है। उस सन्यासी ने उस बच्चे का हाथ पकडा और उसके सिर पर हाथ रख दिया। इधर हाथ सिर पर गया, उधर छाया के ऊपर भी सिर पर हाथ गया। सन्यासी ने कहा, देख, पकड ली तू ने छाया। छाया कोई सीधा पकडेगा तो नहीं पकड सकेगा। लेकिन अपने को पकड लेगा तो छाया पकड मे आ जाती है।

जो अहकार को पकडने के लिये दौडता है वह अहकार को कभी नही

पकड पाता। अहकार मात्र छाया है। लेकिन जो आत्मा को पकड लेता है, अहकार उसकी पकड मे आ जाता है। वह तो छाया है। उसका कोई मूल्य नही। केवल वे ही लोग तृप्ति को, केवल वे ही लोग आप्तकामता को उपलब्ध होते हैं जो आत्मा को उपलब्ध होते है। आत्मा और अहकार के बीच चनाव है। आत्मा और अहकार के बीच सारा विकल्प है, आत्मा और अहकार के बीच जीवन की सारी व्यथा, सारी पीडा है। जो अहकार की तरफ जाते हैं वे भटक जाते हैं। वे गलत खूटी के आस पास जीवन को घुमाते है। लेकिन जो अहकार से पीछे हटते है और उसकी तरफ जाते हैं जो मूल है, जो भीतर है, जो मै हू वस्तुत, जो मेरी आत्यतिक सत्ता है, उसे उपलब्ध हो जाते है और उनके लिये छायाए देखने का नही रह जाती। दुनिया मे दो ही तरह की यात्राए है—अहकार को भरने की यात्रा है और आत्मा को उपलब्ध करने की यात्रा है। लेकिन अहकार से जो बध जाते है वे आत्मा से वचित रह जाते है।

यह अहकार क्या हम छोडने की कोशिश करे? नही, अगर छोडने की कोशिश की तो अहकार से कभी मुक्त नही हो सकेंगे। छाया न तो पकडी जा सकती है और न छोडी जा सकती है। जो चीज छोडी जा सकती है वह पकडी भी जा सकती है। अहकार न पकडा जा सकता है, न छोडा जा सकता है। इसलिए पकडने वाले तो भूल मे पडते ही हैं। छोडने वाले और भी भूल मे पड जाते हैं। अहकार के रास्ते बडे सूक्ष्म है। छाया बडी सूक्ष्म है, पकड मे नही आती और छोडने मे भी नही आती। जो लोग सोचते है कि अहकार छोड देगे वे और भी बडी भूल मे पड जाते है। आज तक किसी ने अहकार को छोडा नही है। क्योंकि अहकार पकडा भी नही जा सकता और छोडा भी नही जा सकता। तो फिर हम क्या करे।

अहकार जाना जा सकता है अहकार पहचाना जा सकता है, अहकार की प्रत्यभिज्ञा (Recognition) हो सकती है, अहकार का बोध हो सकता है अहकार के प्रति जागरूक हो सकते हैं। और जो आदमी अहकार के प्रति जागरूक हो जाता है उसका अहकार विसर्जित हो जाता है। मनुष्य की निद्रा मे अहकार है, मनुष्य के जागरण मे नही। जैसे ही कोई जाग कर देखने की कोशिश करता है, कहा है अहकार, वैसे ही अधकार हटने लगता है।

एक गाव मे एक घर था। उस घर मे बडा अधकार था और कोई हजार साल से अन्धेरा था। उस गाव के लोग उस घर मे नहीं जाते थे। मै उस गाव मे गया। मैने कहा, इस घर को ऐसा ही क्यो छोड रखा है?

गाव वालो ने कहा, इस घर मे हजारो साल से अन्धेरा है। मैने कहा, अन्धेरे की कोई ताकत होती है ? दिया जलाओ और भीतर पहुच जाओ। उन्होने कहा— दिया जलाने से क्या होगा ? यह कोई एक रात का अन्धेरा नही है, हजारो साल का अन्धेरा है। हजारो साल तक दिये जलाओ तब कहीं खत्म हो सकता है। गणित बिल्कुल ठीक था। बिल्कुल तर्कसगत थी यह बात। मै भी डरा। बात तो ठीक ही थी। हजारो साल से घिरा अधकार कहीं एक दिन के दिये जलाने से दूर हो सकता है ? फिर भी मैने कहा, एक कोशिश तो करके देख ही लें। क्योकि जिन्दगी मे कई बार गणित काम नही करता और तर्क व्यर्थ हो जाता है। जिन्दगी बडी अनूठी है। वह तर्कों के पास मे चली जाती है और गणित से दूर निकल जाती है। गणित मे हमेशा दो और दो चार होते है, जिन्दगी मे कभी पाच भी हो जाते हैं और तीन भी हो जाते है। जिन्दगी गणित नही है। तो चले देख ले।

वे लोग राजी नही हुए और कहा कि जाने से फायदा क्या है ? हमे नही पसन्द है यह बात। हमारे बाप-दादा भी यही कहते थे। उन्होंने कहा कि दिये मत जलाना। हजारो साल का अन्धेरा है। उनके बाप दादो ने भी यही कहा था और आप तो बडे परम्परा के विरोधी मालूम होते है। आप शास्त्रो का नहीं मानते। बुजुर्गों को नही मानते है। हम नासमझ हैं ? हमारे गाव मे तो लिखा हुआ रखा है कि इस घर मे दिया मत जलाना। यह हजारो साल का पुराना अधेरा है, मिट नहीं सकता। फिर भी मैने उन्हे बामुश्किल राजी किया कि चलो देख तो ले। बहुत से बहुत यही होगा कि हम असफल होगे। मुश्किल से वे जाने को राजी हुए। दिया जलते ही वहा तो कोई भी अधेरा नही था। वे बहुत हैरान हुए। उन्होंने कहा, कहा गया अधेरा ! मैने कहा, दिया तुम्हारे हाथ मे है खोजे कि कहा है अधेरा। और अगर किसी दिन मिल जाय तो मुझे खबर कर दे, मै फिर तुम्हारे गाव मे आ जाऊ। अभी तक उनकी कोई खबर नही आयी। खोज रहे होगे वे लोग दिये लेकर अधेरे को और कही दिये के सामने अधेरा आता है ? कही दिये मे अधेरा मिलता है ?

अहकार अधकार के समान है। जो अपने भीतर दिये को लेकर जाता है वह उसे कहीं भी नहीं पाता। न तो उसे छोडना है न उससे भागना है। एक दिया जलाना है और उसे देखना है, उस दिये की रोशनी मे ढूढना है कि वह कहा है ? हमे भीतर जागकर देखना है कि कहा है अहकार ? और वह वहा नही पाया जाता है। और जहा अहकार नहीं पाया जाता है वहा जो मिल जाता है उसी को कोई परमात्मा कहता है, कोई आत्मा कहता है, कोई

सत्य कहता है। उसी को कोई सान्दर्य कहता है उसी को कोई और नाम देता है। लेकिन बस नामो के ही भेद होते हैं। अहकार जहा नही है वहा वह मिल जाता है जो सबके प्राणो का प्राण है, जो प्यारे से प्यारा है। लेकिन हम अहकार से बधे हैं और उसी के साथ जीते और मरते हैं इसलिए आत्मा की तरफ आख नही जा पाती। इसे देखना जरूरी है, इसे छोडना जरूरी नहीं है। इससे भागना जरूरी नही है, इसे पहचानना जरूरी है।

अहकार को देखने की प्रक्रिया का नाम ही ध्यान है। कैसे हम देखे इसे जो कि हमे घेरे हुए है और पकडे हुए है ? क्या है रास्ता ? कोई घडी आधी घडी किसी मदिर मे बैठ जाने से यह नही देखा जा सकता। मदिर मे बैठने वालो का अहकार तो और भी मजबूत हो जाता है क्योकि उन्हे ख्याल होता है कि हम धार्मिक हैं। बाकी सारा जगत अधार्मिक है। क्योंकि हम मदिर आते हैं और हमारा स्वर्ग बन जाता हैं और बाकी सब नरक मे खडे हैं।

क्या आपको पता है ईसाई मजहब के हिमायतियो की राय है कि जो लोग सन्त पुरुष हैं, जो धार्मिक पुरुष हैं वे लोग स्वर्ग के आनन्द उठायेगे। जो पापी हैं वे नरक मे कष्ट भोगेगे और स्वर्ग मे जो धार्मिक लोग जायेंगे उन्हे एक विशेष प्रकार के सुख की भी सुविधा रहेगी और वह यह है कि नरक मे जो पापी कष्ट भोग रहे हैं उनको देखने का मजा भी वे ले सकेंगे। वहा से वे देख सकेंगे कि कितने पापी नरक मे पड गये हैं और कैसे कैसे कष्ट झेल रहे हैं। जिन लोगो ने यह ख्याल किया होगा पुण्यात्माओ ने, धार्मिको ने कि पापियो को नरक मे कडाहो मे जलते हुए देखने का मजा भी हम लेंगे, वे कैसे लोग रहे होगे इसे आप भलीभाति सोच सकते है। और यह कोई ईसाईयत का सवाल नहीं है। दुनिया के सारे तथाकथित धार्मिक लोगो ने अपने को स्वर्ग मे ले जाने की और दूसरे को नरक मे डालने की पूरी योजना और व्यवस्था कर रखी है। क्योकि वह यह कह सकते हैं भगवान को कि मै रोज तुम्हारे नाम पर माला फेरता था और इस आदमी ने माला नहीं फेरी। इसको डालो कडाहे मे। मै रोज मदिर आता था। एक दिन भी नही चूका। सर्दी पडती थी तब भी आता था, धूप पडती थी तब भी आता था। यह आदमी कभी मदिर मे नही दिखाई पडा। डालो इसको कडाहे में। मै गीता पढता था, कुरान पढ़ता था, बाइबिल पढता था। रोज तुम्हारे भजन कीर्तन करता था। क्या वे सब व्यर्थ गये ? मुझे बैठाओ स्वर्ग मे। लेकिन मुझे मजा इतने भर मे नही आयेगा कि मै स्वर्ग मे बैठ जाऊ। उन सब लोगो को जो मेरे पडोस मे रहते थे बिना नरक मे पडे देखे

मुझे कोई आनन्द उपलब्ध नहीं हो सकता। उन सबको डालो नरक मे।

जर्मन कवि था ह्यूम। उसने एक कविता लिखी है। उस कविता मे लिखा है कि एक रात भगवान ने मुझसे पूछा कि तुम चाहते क्या हो ?, जिससे तुम खुश हो जाओ। तो मैने कहा मै बहुत बडा मकान चाहता हू। जैसा गाव मे दूसरा मकान न हो। भगवान ने कहा ठीक है यह हो जाएगा। और क्या चाहते हो ? एक बहुत शानदार बगीचा चाहता हू जैसा पृथ्वी पर न हो। भगवान ने कहा ठीक, यह भी हो जाएगा। और क्या चाहते हो ? मै जो भी जिस क्षण चाहू उसी वक्त मुझे मिल जाय। भगवान ने कहा यह भी हो जाएगा। और क्या चाहते हो ? ह्यूम ने कहा अगर आप मानते ही नही और मेरे दिल की आखिरी मुराद पूरी ही करना चाहते हैं तो एक काम और कर दें। मेरे बगीचे के दरख्त जो हो, मेरे पडोसी उन दरख्तो से लटके रहें तो मुझे पूरा आनन्द उपलब्ध हो जायेगा। नीद खुल गई ह्यूम की और उसने बाद मे लिखा कि वह बहुत घबराया कि मेरे भीतर भी कैसी कैसी कामनाए हैं। लेकिन अगर आप धार्मिक आदमियो के मन मे खोजेगे तो सबके मन मे यह कामना है कि पडोसी नरक मे चले जाये और हम स्वर्ग मे चले जाये। उस स्वर्ग मे जाने के लिए सारा आयोजन करते है। मदिर मे बैठने वाले अहकार से मुक्त नहीं होते। स्वर्ग मे जाने की कामना रखने वाले अहकारी ही हैं। मुझे परमात्मा मिल जाये, मै परमात्मा को भी अपने अधिकार मे कर लू वह भी मेरी सम्पत्ति बन जाय, यह अहकार की ही दौड है।

फिर क्या करे ? चौबीस घटे जागरूक होना पडता है और देखना पडता है कि जीवन की किन किन क्रियाओ मे अहकार खड़ा होता है। क्या वस्त्रो के पहनने से खडा होता है ? आख के देखने के ढग मे खडा होता है ? पैर के उठने मे खड़ा होता है, बोलने मे खडा रहता है कि चुप रह जाने मे खडा होता है ? कहा कहा अहकार खडा होता है ? किन किन जगहो से सिर उठाता है ? चौबीस घण्टे एक होश (Awareness) चाहिए कि कहा खड़ा हो रहा है ? चौबीस घण्टे खोजबीन चाहिए दिया लेकर कि अहकार कहा खडा होता है ? कैसे खडा होता है ? क्या है उसकी कोशिश ? उसके खडे होने की प्रक्रिया क्या है ? कैसे निर्मित होता है भीतर ? कैसे सगठित होता है ? क्या मार्ग है उसके बन जाने का ? और अगर चौबीस घण्टे कोई देखता रहे, देखता रहे, खोजता रहे, खोजता रहे तो बहुत हैरानी, बहुत आश्चर्य बहुत चमत्कार अनुभव करेगा। जिन जिन जगहो पर यह खोज लेंगे कि यहा अहकार खडा होता है वही वहीं से अहकार बिदा हो जाएगा। और जिस दिन जीवन

के सभी पहलुओ मे, और चित के सभी हिस्सो मे अहकार की खोज पूरी हो जाएगी और मन का कोई अनजान अपरिचित कोना बाकी नही रहेगा, उसी दिन आप अहकार के बाहर हो जाते है।

एक सम्राट था। एक फकीर ने उस सम्राट का कहा 'तू अगर चाहता है कि परमात्मा को पा ले तो एक ही रास्ता है। मेरे झोपडे पर आ जा और कुछ दिन मेरे पास रह जा। उस सम्राट की बडी तीव्र प्यास और आकाक्षा थी। वह उस फकीर के झोपडे पर चला गया। उस फकीर ने कहा, 'कल सुबह तेरी शिक्षा शुरू होगी और शिक्षा बडी अजीब है। शिक्षा यह है कि कल सुबह तू कुछ भी कर रहा होगा और मै लकडी की तलवार लेकर तेरे पीछे से हमला कर दूगा। तू खाना खा रहा होगा, तू झोपडे मे बुहारी लगा रहा होगा, तू कपडे धो रहा होगा, तू स्नान करता होगा और मै तेरे ऊपर तलवार से हमला कर दूगा। लकडी की तलवार होगी। हमेशा सावधान रहना कि मै कब हमला करता हू। क्योकि मेरा कोई ठिकाना नही। मै कोई खोज खबर नही दूगा। पहले से रेडियो मे कोई खबर नही निकालूगा। अखबार मे स्थानीय कार्यक्रम मे खबर नही होगी कि आज मै यह करने वाला हू। यह कोई खबर नही होगी। किसी भाषा मे कोई सिलसिला नही होगा। किसी भी क्षण मे हमला कर दूगा। तैयार रहना।

उस सम्राट ने कहा, लेकिन इसमे मतलब क्या है? वह फकीर बोला अहकार इसी भाति चौबीस घटे न मालूम कहा कहा से हमले कर दे। तो मै हमला करूगा। मेरी तलवार का ख्याल रखना।' सात दिन मे सम्राट की हड्डी पसलिया टूट गई। क्योकि चौबीस घटे तक वह बूढा फकीर हर कभी हमला करने लगा। लेकिन सात दिन मे सम्राट को यह भी ख्याल मे आ गया कि सावधानी जैसी भी कोई चीज थी। पहली दफा जिन्दगी मे उसे पता चला कि मै अभी तक सोया सोया जीता रहा। अभी तक मै होश से नही जिया। कभी मैने होश का ख्याल ही नही किया। लेकिन सात दिन बराबर चुनौती मिली, चोट पडी और भीतर कोई चीज जागने लगी और ख्याल रखने लगी कि हमला होने को है। पन्द्रह दिन पूरे हो गये थे, हमले की खबर उसे मिलने लगी। गुरु के पैर की धीमी सी आहट भी उसे सुनाई पड जाती थी। वह अपनी ढाल सभाल लेता और हमले से बच जाता।

तीन महीने पूरे हो गये। अब हमला करना मुश्किल हो गया। किसी भी हालत मे हमला किया जाये वह हमेशा सावधान होता और रोक लेता। उसके गुरु ने कहा एक पाठ तेरा पूरा हो गया। कल से दूसरा पाठ शुरू होगा।

उसने पूछा कि इन तीन महीनो मे तुझे क्या हुआ ? तो सम्राट ने कहा दो बाते हुई । मै हैरान हो गया । पहले तो मै डर गया था कि इस लकडी की तलवार से चोट पहुचाने का और परमात्मा से मिलने का क्या रास्ता है, क्या सम्बन्ध है ! यह पागल तो नही है फकीर । मै किसी पागल के चक्कर मे तो नहीं पड गया हू ? लेकिन तीन महीने मे मुझे पता चला कि जितना मै सावधान रहने लगा उतना ही मै निरहकारी हो गया । जितना मै सावधान रहने लगा उतना ही निर्विचार हो गया । जितना ही मै होश मे जीने लगा उतनी ही मन के विचारो की धारा क्षीण हो गई ।

मन एक ही साथ दो काम नहीं कर सकता । या तो विचार कर सकता है या जागरूक हो सकता है । दो चीजे एक साथ नही हो सकती । इसको थोडा देखना । जब विचार होगे सावधानी क्षीण हो जाएगी । जब सावधानी होगी, विचार क्षीण हो जाएगे । अगर मै एक छुरी लेकर आपकी छाती पर आ जाऊ तो विचार एकदम बन्द हो जायेगे । क्योकि खतरे मे चित्त पूरी तरह सावधान हो जाएगा कि पता नही क्या होगा ? इस समय विचार करने की सुविधा नही है, इस समय तो होश बनाये रखने की जरूरत है कि पता नही क्या होगा ? एक क्षण मे कुछ भी हो सकता है तो आप जाग जायेगे ।

तो उस सम्राट ने कहा कि मै एकदम जागा हुआ हो गया हू । विचार शात हो गये, अहकार का कोई पता नही चलता । दूसरा पाठ क्या है ?

उस वृद्ध फकीर ने कहा— कल से रात मे भी हमला शुरू होगा । कल तू रात मे सोया रहेगा तब भी दो चार दफा सामने आऊगा । अब रात को भी सावधान रहना ।' उस सम्राट ने कहा, जागने तक भी गनीमत थी । अब यह बात जरा ज्यादा हो जाती है । नीद मे मै क्या करूगा ? मेरा क्या बस है नीद मे ? वृद्ध ने कहा, नीद मे भी बस है, तुझे पता नही । नीद मे भी तेरे भीतर कोई जागा हुआ है और होश मे है । चादर सरक जाती है और किसी को नीद मे पता चल जाता है कि चादर सरक गयी है । एक छोटा सा मच्छर काटने लगता और नीद मे कोई जान जाता है कि मच्छर आ गया है । एक मा रात मे सोती है उसका बच्चा बीमार है । आकाश मे बादल गरजते रहे उसे कोई खबर नहीं मिलती लेकिन बच्चा बीमार है, वह जरा सी आवाज करता है और मा जाग जाती है और हाथ फेरने लगती है और पुचकारने लगती है कि सो जा । कोई भीतर होश से भरा हुआ है कि बच्चा बीमार है ।

बहुत लोग इकट्ठे सो जाए और फिर आधी रात मे आकर कोई बुलाने लगे राम ! राम ! सारे लोग सो रहे हैं, किसी को सुनायी नहीं पडेगा लेकिन जिसका नाम राम है वह आख खोलकर कहेगा, "कौन बुलाता है ? आधी रात

को, कौन परेशान करता है ?" आधी रात की निद्रा मे भी किसी को पता है कि मेरा नाम राम है। इस नीद मे भी कोई होश, कोई चेतना (Conscious-ness) बनी रहती है। कोई चेतना है, कोई अतर्धारा (Under-current) है। उस बूढे ने कहा फिक्र मत कर। हम तो चुनौती खडी करेंगे, भीतर जो सोया है वह जागना शुरू हो जायगा। जागने का एक ही सूत्र है चुनौती (Challenge)। जितनी बडी चुनौती भीतर है, उतना बडा जागरण होता है। कितने धन्यभागी हैं वे लोग जिनके जीवन मे बडी चुनौतिया होती हैं।

दूसरे दिन से हमला शुरू हो गया। रात सम्राट सोता और हमले होते। आठ दस दिन मे फिर वही हालत हो गई। फिर हड्डी हड्डी दुखने लगी लेकिन एक महीना पूरा होते होते सम्राट को पता चला कि बूढा ठीक कहता है। बूढे अक्सर ठीक कहते हैं। लेकिन जवान सुनते ही नही। और जब तक उन्हें समझ आती है तब तक वे भी बूढे हो जाते है। फिर दूसरी जवानी उन्हे लौट नही सकती। तो समझा और उसने कहा कि ठीक कहते थे शायद आप। अब नीद मे भी मेरे हाथ सभलने लगे। रात नीद मे गुरु आता दबे पाव नीद मे से जाग आता वह युवक, बैठ जाता और कहता ठीक है माफ करिये मै जाग गया हू। अब कष्ट मत उठाइये मारने का। नीद मे भी हाथ रात भर उसकी ढाल पर ही बना रहता था। नीद मे भी ढाल उठती है।

तीन महीने पूरे हुए और तब नीद मे भी हमला करना मुश्किल हो गया। गुरु ने कहा क्या हुआ इन तीन महीनो मे। दूसरा पाठ पूरा होता है। उस सम्राट ने कहा बडा हैरान हू। पहले तीन महीने मे विचार खो गया, दूसरे तीन महीने मे सपने खो गये, नीद खो गई, रात भर सपने नही। मै तो सोचता था कि बिना सपने के नींद ही नही हो सकती। अब मैं जानता हू कि सपने वालो की भी कोई नींद होती है ? अद्भुत शान्ति छा गई है भीतर, एक शून्यता, एक मौन पैदा हो गया है। मै बडे आनन्द मे हू। तो उसके गुरु ने कहा जल्दी मत कर। बडा आनन्द अभी थोडी दूर है। यह तो केवल आनन्द की शुरुआत की झलक है। जैसे कोई आदमी बगीचे के पास पहुचने लगे तो ठडी हवाए आने लगती हैं, खुशबू हवा मे आ जाती है। अभी बगीचा आया नही लेकिन बगीचे की खबर आनी शुरू हो गई है। अभी आनन्द मिला नहीं। केवल बाहरी खबर मिलनी शुरू हुई है। कल से तेरा तीसरा पाठ शुरू होगा।

तीसरा पाठ क्या है ? तो उस बूढे ने कहा, कल से असली तलवार से हमला होगा। अब तक नकली तलवार से हमला किया है। वह युवक बोला यह भी गनीमत थी कि आप लकड़ी की तलवार से हमला करते थे। यह तो

जरा ज्यादा हो जाएगी बात। असली तलवार से हमला! अगर मैं एक भी बार चूक गया तो जान गई। तो उस बूढ़े ने कहा, जब यह पक्का पता हो कि एक भी बार चूका कि जान गई तब कोई भी नहीं चूकता है। चूकता आदमी तभी तक है जब तक उसे पता चलता है कि चूक भी जाऊं तो कुछ जाएगा नहीं। एक बार पता चला कि चूका कि जान गई तब प्राण इतनी ऊर्जा से चलते है कि फिर चूकने का कोई मौका नहीं रहता।

उस बूढ़े ने कहा, "मेरा गुरु था जिसके पास मैं सीखता था, उसने मुझे एक दिन सौ फुट ऊंचे दरख्त पर चढ़ा दिया। वह मुझे दरख्त पर चढ़ना सिखाता, पहाड़ो पर चढ़ना सिखाता, नदियों में तैरना सिखाता, झीलो मे डूबना सिखाता। वह बड़ा अजीब गुरु था। वह कहता था जो पहाड़ पर चढ़ना नहीं जानता है वह जीवन मे चढ़ना क्या जानेगा? जो झीलो की गहराइयो मे डूबना नही जानता वह प्राणो की गहराइयो मे डूबना क्या जानेगा? वह बड़ा अजीब गुरु था। उसने मुझे एक दरख्त पर चढ़ा दिया। मैं नया-नया चढ़ा था। जब मैं सौ फुट ऊपर पहुंच गया और मेरे प्राण कंपते थे कि हवा का एक झोंका भी कहीं जान लेने वाला न बन जाये, पैर का जरा सा सरक जाना भी मौत न बन जाये तब वह गुरु चुपचाप आंख बन्द किये झाड़ के पास बैठा था। फिर मैं धीरे धीरे उतरने लगा। जब मैं जमीन के बिल्कुल करीब आ गया कोई आठ दस फुट दूर रह गया तब वह बूढ़ा जैसे नींद से उठ गया और खड़ा हो गया और कहने लगा—सावधान! बेटे सम्भलकर उतरना! होश सम्भालकर उतरना। मैंने कहा, पागल हो गये है आप! जब जरूरत थी सावधानी की तब आंख बन्द किये सपने देख रहे थे और अब जबकि मैं नीचे आ गया हू, अगर गिर भी जाऊं तो कोई खतरा नहीं है तब आपको होशियारी की याद दिलाने का ख्याल आया? वह बूढ़ा कहने लगा मैं अपने अनुभव से जानता हू जब तू सौ फुट पर था तब किसी को सावधान करने की कोई जरूरत नही थी। तब तू खुद ही सावधान था। और अभी अभी मैंने देखा है कि जैसे जैसे जमीन करीब आने लगी है, तुम गैरसावधान होना शुरू हो गये। नींद पकड़ गई है तुझे। मैं चिल्लाया कि सावधान। क्योंकि मैंने जीवन मे देखा है कि लोग ऊंचाई से कभी नहीं गिरते, नीचे आने से गिर जाते है और मर जाते है। मैंने आज तक जिन्दगी मे देखा नहीं कि कोई आदमी ऊंचाई से गिरा हो। लोग निचाई से गिरते हैं और मर जाते हैं इसलिए तुझे सावधान कर दिया।"

उस बूढ़े ने सम्राट से कहा कि कल से असली तलवार आनी है। और दूसरे दिन से असली तलवार आ गई। लेकिन बड़ा हैरान हुआ वह सम्राट।

लकड़ी की तलवार की तो बहुत चोटे उसके शरीर पर लगी थी लेकिन असली तलवार की तीन महीने मे एक भी चोट नही मारी जा सकी। तीन महीने पूरे होने को आ गये। उसका मन एक शान्ति का सरोवर हो गया। उसका अहकार कहीं दूर हट गया किसी रास्ते पर। पता नही कहा रह गया। जैसे जीर्ण शीर्ण वस्त्र छूट जाते हैं या साप अपने केचुल को छोडकर जैसे आगे बढ जाते हैं ऐसे ही वह अपने अहकार को कही पीछे छोड आया। याद भी नही रहा कि कभी 'मैं' भी था। इतनी शान्ति हो गई है कि वहा कोई लहर भी नही उठती है उस झील मे।

तीन महीने पूरे होने को आ गये हैं। आज आखिरी दिन है। कल वह बिदा हो जाएगा। सुबह सुबह सूरज निकला है। वह बैठा है झोपडे के बाहर। उसका गुरु काफी दूर पर एक दरख्त के नीचे बैठा है और कोई किताब पढ रहा है, वह अस्सी साल का वृद्ध। उसके मन मे ख्याल आया कि इस बूढे ने नौ महीने तक मुझे एक क्षण भी आलस्य मे नही जाने दिया। एक क्षण भी प्रमाद नही करने दिया। हमेशा जगाये रखा, सावधान रखा। कल तो मै बिदा हो जाऊगा। यह गुरु भी उतना सावधान है या नही यह भी तो मै देख लू। तो उसने सोचा कि उठाऊ तलवार और आज उस बूढे पर पीछे से चुपचाप हमला कर दू। मुझे भी तो पता चल जाये कि हमे ही सावधान किया जाता है या ये सज्जन खुद भी सावधान है ?

उसने इतना सोचा ही था, सिर्फ सोचा ही था। अभी कुछ किया नही था, बस सोचा ही था कि वह गुरु चिल्लाया उस झाड के नीचे से कि बेटा ऐसा मत करना, मै बूढा आदमी हू। वह सम्राट तो बहुत हैरान हुआ। उसने कहा मैने कुछ किया नहीं। मैने केवल सोचा है। तो उस बूढे ने कहा तुम थोडे दिन और ठहर जाओ जब चित्त बिल्कुल शान्त हो जाता है और मौन हो जाता है, जब अहकार बिल्कुल बिदा हो जाता है और जब विचार शून्य और शान्त हो जाते है, तब दूसरे के पैरो की ध्वनि ही नही सुनाई पडती, दूसरो के चित्त की पद ध्वनिया भी सुनाई पडने लग जाती है। तब दूसरो के विचारो की पगध्वनिया भी सुनाई पडने लग जाती हैं। विचार भी सुनाई पडने लगते हैं दूसरो के। लेकिन हम तो ऐसे अन्धे हैं कि हमे दूसरो के कृत्य ही दिखाई नही पडते। विचार सुनाई पडना तो बहुत दूर की बात है।

उस बूढे ने कहा था जिस दिन इतना शान्त हो जाता है चित्त, इतना जागरूक हो जाता है तो उस दिन ही वह जो अदृश्य है उसकी झलक मिलती है। उस परमात्मा के पैर सुनाई पडने लग जाते हैं जिसके कोई पैर नही हैं। उस परमात्मा की वाणी आने लगती है जिसकी कोई वाणी नही है। उस

परमात्मा का स्पर्श मिलने लगता है जिसकी कोई देह नहीं है। सब तरफ से वह मौजूद हो जाता है। जिस दिन हमारे भीतर शाति की यह ग्राहकता उत्पन्न होती है उसी दिन वह सब तरफ मौजूद हो जाता है। फिर वृक्ष की पत्तियो मे वही है, राह के पत्थरो मे वही है, सागर की लहरो मे भी, आकाश के बादलो मे भी, आदमियो की आखो मे भी, पशुपक्षियो के प्राणो मे भी, फिर सब मे वही है। जिस दिन भीतर जीवन की प्रतिध्वनि सुनने की ग्राहकता (Receptivity) उपलब्ध हो जाती है, पात्रता उपलब्ध हो जाती है उसी दिन उसके दर्शन मिलने शुरू हो जाते हैं।

पता नही उस सम्राट का फिर क्या हुआ। पता नही उस बूढ़े फकीर का फिर क्या हुआ लेकिन मुझे और आपको उससे प्रयोजन ही क्या है। जहा उनकी कहानी खतम होती है अगर वही आपकी कहानी शुरू हो जाये तो बात पूरी हो जाएगी।

क्या आप भी अपने भीतर इतने जागने का सतत श्रम करने को तत्पर हैं? अगर हा तो जीवन की सम्पदा आपकी है। अगर हा तो परमात्मा खुद आपके द्वार चला आयेगा। आपको उसके द्वार जाने की जरूरत नही। यह बात कठिन मालूम पड़ सकती है क्योंकि जो लोग चलने के आदी नही होते, यात्राए उन्हें बहुत बड़ी और जटिल दिखाई देती हैं। उन्हे डर लगता है कि छोटे से पैर हैं अपने पास। हजारो मील की यात्रा हम कैसे पूरी कर सकेंगे? लेकिन अगर एक कदम भी उठाने के लिये वे तैयार हो गये तो हर उठाया गया कदम आने वाले कदम के लिए भूमि बन जाता है, बल बन जाता है, शक्ति बन जाता है और छोटे से कदमो से आदमी पूरी पृथ्वी की परिक्रमा कर सकता है और छोटे से मन की सामर्थ्य छोटे से कामो की सावधानी, थोड़े से हृदय की शान्ति से मनुष्य परमात्मा की परिक्रमा भी कर सकता है।

ग्यारह : क्या मनुष्य एक यंत्र है ?

क्या मनुष्य एक यंत्र है ?

मनुष्य एक यत्र है लेकिन इसका हमे कोई स्मरण नही है। मनुष्य का जीवन जागृत जीवन नहीं है बल्कि सोया हुआ जीवन है। इसका भी हमे कोई बोध नहीं है।

मै मनुष्य को यत्र क्यो कह रहा हू ?

एक छोटी सी कहानी से मै आपको यह समझाना चाहूगा।

एक सुबह एक गाव मे बुद्ध का आगमन हुआ था। उन्होने उस गाव के लोगो को समझाना शुरू किया। सामने ही बैठकर एक व्यक्ति अपने पैर का अगूठा हिलाये जा रहा था। बुद्ध ने बोलना बद करके उस व्यक्ति को कहा "मेरे मित्र ! तुम्हारे पैर का अगूठा क्यो हिलता है ?" जैसे ही बुद्ध ने यह कहा कि तुम्हारा पैर क्यो हिलता है कि उसके पैर का हिलना बद हो गया। उस व्यक्ति ने कहा कि जहा तक मेरा सवाल है, मुझे इसका स्मरण भी नहीं था कि मेरा पैर हिल रहा है। आपने कहा तब ही मुझे स्मरण आया और मेरा पैर रुक गया। मुझे ख्याल भी नही था, बोध भी नही था कि मेरा पैर हिल रहा है। बुद्ध ने कहा "तुम्हारा पैर हिलता है और तुम्हे पता भी नही ? तो तुम आदमी हो या यत्र ?"

यत्र हम उसे कहते हैं जिसे अपनी गति का कोई बोध नहीं है। उसमे गति हो रही है लेकिन उसे पता नहीं है। उसे कोई होश नही है, उस गति का। मनुष्य को मैने इसलिये यत्र कहा कि जो कुछ हममे हो रहा है, न तो हमे उसका पता है कि वह हो रहा है, न पता है कि क्या हो रहा है या क्यो हो रहा है। और न ही हम उसके मालिक है कि हम चाहे तो वह हो और न चाहे तो वह न हो। कोई भी यत्र अपना मालिक नही होता। आदमी भी अपना मालिक नही है। इसलिये मैने उसे यत्र कहा। आपके भीतर जब भय (fear) पैदा हो जाता है तब आप उसे पैदा करते हैं ? क्या आप उसके मालिक होते हैं ? या कि आप चाहे तो उसे पैदा न होने देंगे ? या जब आप चाहें तो उसे पैदा कर लेंगे ? कुछ भी आपके हाथ मे नहीं है। कितनी बार हमे ऐसा मौका आता है जब हम कहते हैं . मेरे बावजूद (In spite of me) यह हो गया। कितनी बार हम कहते हैं कि मै तो नहीं चाहता था फिर भी यह हो

गया। अगर आप ही नही चाहते थे और आपके भीतर कुछ हो जाता है तो इसका क्या अर्थ हुआ ? आप अपने मालिक नहीं हैं। कोई यत्र अपना मालिक नहीं है। लेकिन मनुष्य तो अपना मालिक होगा। उसके जीवन मे, उसके विचार मे, उसके भाव मे, वह अपना स्वामी होगा, उसका स्वय पर स्वय का अधिकार होगा। और यह स्वामित्व, यह माल्कियत, तभी उपलब्ध हो सकती है जब उसे अपने जीवन की सारी क्रियाओ का बोध हो, उनके प्रति जागरूकता (Awareness) हो। वह उन्हे जानता हो, पहचानता हो लेकिन न तो हम उन्हें पहचानते हैं, न तो हम उनके मालिक हैं।

एक महिला ने एक फकीर के पास अपने बच्चे को ले जाकर कहा कि मेरा यह बच्चा रोज रोज बिगडता जाता है। इसने सारी शिष्टता छोड दी है और इसने परिवार के सारे नियम तोड दिये हैं। इसे आप थोडा भयभीत कर दे, डरा दें। शायद यह ठीक हो जाय। उस फकीर ने इतनी बात सुनी और जोर से आखें निकाली, हाथ पैर हिलाये और वह कूदकर उस बच्चे के सामने खडा हो गया जैसे उसकी जान ही ले लेगा। वह बच्चा तो इतना घबरा गया कि भागा। लेकिन फकीर तो कूदता ही गया और इतनी जोर से चिल्लाया कि बच्चा तो भाग गया लेकिन उसकी मा बेहोश होकर गिर पडी। जब वह स्त्री बेहोश होकर गिर पडी तो वह फकीर भी वहा से भाग निकला। थोडी देर बाद जब स्त्री को होश आया तो वह बैठकर फकीर की प्रतीक्षा करने लगी। थोडी देर के बाद वह फकीर भीतर लौटा। उस स्त्री ने कहा आपने तो हद कर दी। मैंने तो बच्चे को डराने को कहा था, मुझे डराने को तो नही। वह फकीर बोला कि तूने बच्चे को डराने को कहा था लेकिन बच्चे को मैंने डराया तब मुझे ख्याल भी न था कि तू भी डर जायेगी। तू क्यो डर गई ? और जब तू डर गई और बेहोश हो गई तो मुझे पता भी नही था कि मै भी डर जाऊगा। तुझे बेहोश देखकर मै भी डर गया और भाग गया। जब भय ने पकडा तो उसने बच्चे को ही नही पकडा, तुझे भी पकड लिया और मुझे भी। उस फकीर ने कहा सचाई यह है कि मुझ मे भी चीजे घटित होती हैं, मै भी उनका मालिक नहीं हू, तू भी उनकी मालिक नही है, बच्चा भी उनका मालिक नही है। भय ने पकड लिया तो उस पर हमारी कोई मालिकयत न रही। तू भी भयभीत हो गई तो मुझे भी ख्याल न रहा कि यह क्या हो रहा है। मै भी घबडा गया और भयभीत होकर भाग गया। मै बेवश था, लेकिन फिर भी क्षमा मागता हू।

जीवन में हमारे भय, क्रोध, घृणा, हिंसा, प्रेम ये सब घटित हो रहे हैं। उनपर हमारा कोई काबू नही है। उनके ऊपर काबू होना तो दूर हमें उनका कोई होश भी नहीं है कि क्या हो रहा है। इसलिये मैंने कहा कि मनुष्य एक यत्र है। लेकिन यह इसलिये नहीं कहा कि मनुष्य एक यत्र है तो बात समाप्त हो जाये। यहा बात समाप्त नहीं होती। यहा बात शुरू होती है। मनुष्य यत्र है यह इसीलिये तो कह रहा हू आपसे कि आपके भीतर यत्र से ऊपर उठने की भी सभावना है। किसी यत्र से जाकर तो नही कहता हू कि तुम यत्र हो। मनुष्य से यह कहा जा सकता है कि तुम यत्र हो। क्योकि मनुष्य यदि सत्य को समझ ले तो वह यत्र होने के ऊपर भी उठ सकता है। मनुष्य के भीतर यह सभावना है, कि वह एक सचेतन आत्मा और व्यक्तित्व बन जाय। लेकिन यह एक सभावना है, एक सच्चाई नही। यह हो सकता है लेकिन ऐसा है नहीं। एक बीज की भाति ही यह सभावना मात्र है। उससे वृक्ष हो भी सकता है, और नही भी। बीज को जानना चाहिये कि मै बीज हू और वृक्ष नही हू। इस बात को जानने के साथ ही उस सभावना के द्वार भी खुल सकते हैं कि वह वृक्ष हो जाये।

मनुष्य एक बीज है चेतना के लिये, परन्तु अभी वह चेतना नहीं है। अभी तो यत्र है। और अगर वह इस यात्रिक स्थिति को ठीक से समझ ले, यह जड परिस्थिति उसे पूरी पूरी स्पष्ट हो जाये तो स्पष्ट होने के साथ साथ उसके भीतर कोई शक्ति जागने लगेगी, जो उसे मनुष्य बना सकती है। मनुष्य मनुष्य की भाति पैदा नही होता, एक बीज की भाति ही पैदा होता है। उसके भीतर मनुष्य का जन्म हो सकता है, लेकिन कोई भी मनुष्य, मनुष्य की भाति जन्मता नहीं है। और अधिक लोग इस भूल मे पड जाते है कि वे मनुष्य है। यही भूल उनके जीवन को नष्ट कर देती है। जन्म के साथ हम एक सभावना (Potentiality), एक बीज की तरह पैदा होते हैं। लेकिन हम उसी से समझ लेते हैं कि हमारा होना समाप्त हो गया। हम वही ठहर जाते है। बहुत कम लोग हैं, जो जन्म के ऊपर उठते हो और जन्म का अतिक्रमण करते हो। हम जन्म पर ही रुक जाते हैं। जन्म के बाद फिर कोई विकास नहीं होता। हा, यत्र की कुशलता बढ़ जाती है, लेकिन यात्रिकता के ऊपर उठने का कोई चरण, कोई कदम नहीं उठाया जाता और वह कदम उठाया भी नही जा सकता, जब तक हमे यह ख्याल ही न पैदा हो कि हम क्या हैं? मनुष्य यदि यह अनुभव कर ले कि वह एक यत्र है तो वह मार्ग स्पष्ट हो सकता है, जिसकी यात्रा करने के बाद वह यत्र न रह जाय। लेकिन हमारे अहकार को इस बात से बडी

चोट पहुचती है कि हमसे कोई कहे कि हम एक यत्र हैं ! मनुष्य के अहकार को इससे बड़ी चोट लगती है कि उससे कोई कहे कि तुम एक मशीन हो और उसे इस बात के सुनने मे बडा मजा आता है कि तुम परमात्मा हो ! अरे, तुम तो ब्रह्म हो ! शरीर नही, तुम तो आत्मा हो ! तुम्हारे भीतर भगवान वास कर रहा है। इसलिये वह मदिरो मे और मस्जिदो मे इकट्ठा होता है और उन लोगो के पैर पडता है जो उसे समझाते हैं कि तुम तो स्वय भगवान हो। उसे यह बात सुनकर बडा आनन्द मालूम होता है। उसे कौन कहे कि तुम एक मशीन हो, क्योकि ऐसा कहने से बडी चोट लगती है। लेकिन उससे कहे कि तुम तो स्वय भगवान हो तो उसे बहुत आनन्द मिलता है। ऐसे उसके अहकार की तृप्ति होती है, उसके अहकार (Ego) को बडा सहारा मिलता है कि मै भगवान हू। लेकिन मै आपसे कहना चाहता हू और इस सत्य को बहुत ठीक से समझ लेना जरूरी है कि जैसे हम हैं वैसे भगवान होना तो बहुत दूर, हम मनुष्य भी नही है।

हम बिल्कुल मशीनो की भाति हैं। हमारा सारा जीवन इस बात की कथा है, हमारे पूरे पाच छ हजार वर्ष का इतिहास इस बात की कथा है कि हम मशीन की भाति जी रहे हैं। जो भूल मैंने कल की थी वही भूल मै आज भी कर रहा हू। जो भूल मैंने दस साल पहले की थी वही भूल मै दस साल बाद भी करूगा। अगर एक आदमी आपके दरवाजे से निकलता हो और रोज एक ही गड्ढे मे आकर गिर जाता हो तो एक दिन आप क्षमा कर देगे कि भूल हो गई। दूसरे दिन वह आदमी फिर आये और उसी गड्ढे मे गिर जाये तो शायद आपको भी सकोच होगा यह कहने मे कि भूल हो रही है। लेकिन यदि तीसरे दिन भी उसी गड्ढे मे गिर जाये, चौथे दिन भी और वर्ष वर्ष बीतते जाये और रोज उसी गड्ढे मे आकर गिरता जाये तो आप क्या कहेगे ? आप कहेगे कि यह आदमी नही मालूम होता है यह तो कोई मशीन मालूम होती है जो ठीक उसी गड्ढे मे रोज गिर जाती है और उसी गड्ढे मे, उसी भूल से रोज गुजरती है, और फिर भी उसके जीवन मे कोई क्राति नही होती, कोई परिवर्तन नही होता ? यह यान्त्रिकता (Mechanicalness) तो हो सकती है, लेकिन मनुष्यता कैसे हो सकती है ?

जिस क्रोध को हमने हजार बार किया है और हजार बार दुखी हुये है और पछताये हैं वह आज भी हम कर रहे हैं। भूल वही है और हम रोज उसे दोहरा रहे हैं। जिस घृणा से हम पीडित हुये हैं उसे बार बार किया है और

अब भी कर रहे हैं। जिस अहकार ने हमे जलाया है, जिसने हमें चोट पहुचाई है उसको हम आज भी पकडे हुये हैं। आदमी नयी नयी भूलें थोडे ही करता है। और न ही आदमी रोज नई भूलें ईजाद करता है। बस थोडी सी वे ही भूलें हैं जिन्हें रोज दुहराता है। रोज पछताता है, रोज निर्णय करता है कि नही अब यह नही करूगा। लेकिन अगर उसके हाथ मे होता करना या न करना तो बहुत पहले उन्हे करना बद कर दिया होता। फिर उसे ही करता है, फिर पछताता है। कोई फर्क उसके जीवन मे होता नहीं। क्या बताती है यह बात? बताती है कि मनुष्य एक यत्र है। अहकार को इससे चोट लगती है। चोट लगेगी भी, क्योकि जिसका अहकार नहीं टूटता वह कभी यत्र होने के ऊपर नही उठ सकता। अहकार को टूटने दे। उसका टूटना और मिटना बहुत शुभ है। यान्त्रिकता की मृत्यु मे वह एक अनिवार्य चरण है। और यदि अगर आप सोचेगे, खोजेगे, निरीक्षण करेंगे और थोडा अपने जीवन पर विचार करेंगे तो आपको कठिनाई नही होगी इस बात को तय करने मे कि आपने जो व्यवहार किया है, वह एक मशीन का व्यवहार है, एक मनुष्य का नही। और अगर यह स्पष्ट हो जाये कि मै एक मशीन की भाति जी रहा हू, तो जिसे यह बात स्पष्ट हो जायेगी कि मै एक मशीन हू, उसके जीवन मे क्राति की शुरुआत हो जायेगी। किसी बीमारी को ठीक से पहचान लेना उससे आधा मुक्त हो जाना है। किसी बीमारी का ठीक-ठीक निदान आधा इलाज है। अगर यह समझ मे आ जाये कि मै एक यत्र हू तो हमारे बहुत से भ्रम टूट जायेंगे। हमारा बहुत सा अभिमान टूट जायेगा। और शायद इस अहसास के बाद हमारे भीतर किसी क्राति की शुरुआत हो सके।

मनुष्य परमात्मा हो सकता है लेकिन है तो मशीन। बीज वृक्ष हो सकता है लेकिन अभी वह वृक्ष नही है। और जो बीज बीज रहते ही समझ लेगा कि मै वृक्ष हो गया, उसकी वृक्ष तक की यात्रा असभव हो जायेगी क्योकि फिर वह उसी भ्राति मे जीने लगेगा। जिसे तोडना था उसे, जिस भ्रम को उसे मिटाना था, वह उस भ्रम को ही और स्थायी करने लगा। इसलिये मैंने कहा कि मनुष्य एक मशीन है। लेकिन मनुष्य मशीन होने को पैदा नहीं हुआ है। मशीन होने से ही वह दुखी, परेशान और चिन्तित है। मशीन होने के कारण ही उसके जीवन मे अंधकार है, जीवन मे पीडा, चिन्ता और अशान्ति है। वह मशीन न रह जाये तो शांति, सत्य और सौन्दर्य का जन्म हो सकता है। वह मशीन न रह जाये तभी उसे स्वरूप का बोध हो सकता है और अनुभव हो

सकता है कि मै कौन हू ? और अभी तो वह कितना ही खोजे, और कितने ही शास्त्र पढे और कितने ही सिद्धात सीख ले कि मै कौन हू और दोहराने लगे कि मै आत्मा हू, मै परमात्मा हू, तो भी कुछ नही हो सकता है। उसका यह दोहराना भी बिल्कुल झूठा और यात्रिक होगा।

ऐसे लोगो को हम सब जानते हैं जो कि सुबह से बैठकर दोहराते हैं कि मै आत्मा हू, मै परमात्मा हू, मै ब्रह्म हू, अह ब्रह्मास्मि और वे दोहराते चले जाते हैं, वर्षों तक। लेकिन उनके जीवन मे कोई परिवर्तन पैदा नही होता है। हो भी नही सकता। क्योकि यदि यह पता चल जाये कि मै ईश्वर हू तो दोहराने की कोई जरूरत नही है। जिसे पता नहीं है कि मै ईश्वर हू वही दोहराता है। अगर आप पुरुष हैं तो रोज सुबह उठकर दोहराते नहीं हैं कि मै पुरुष हू, पुरुष हू। अगर आप स्त्री है तो रोज सुबह उठकर आप दोहराती नही कि मै स्त्री हू, स्त्री हू। लेकिन अगर कोई पुरुष सुबह उठकर दोहराने लगे कि मै पुरुष हू, मै पुरुष हू तो आपको शक हो जायेगा कि वह पुरुष है या नहीं ? उसका दोहराना इस बात की सूचना होगी कि जो भी वह दुहरा रहा है उस सबध मे वह स्वय ही सदिग्ध है और दोहरा दोहरा कर अपने मन को वह असदिग्ध बना लेना चाहता है। जो आदमी यह दोहराता है कि मै आत्मा हू, मै ईश्वर हू, परमात्मा हू वह ऐसी निपट झूठी बाते दोहरा रहा है जिसका कि उसे कोई भी पता नहीं है। अगर उसे पता हो जाये तो दोहराने की कोई जरूरत नही रह जाती। और इस दोहराने से हमारी यात्रिकता टूटती नही बल्कि और अधिक मजबूत होती है और गहरी होती है, क्योकि हमे यह ख्याल ही मिट जाता है कि वस्तुत हम क्या है ?

एक जादूगर ने भोजन के लिये बहुत सी भेडे पाल रखी थी। उस जादूगर ने उन भेडो को बेहोश करके, सम्मोहित करके, हिप्नोटाईज करके यह कह दिया था कि तुम भेडे नही हो। इससे पहले, भेडे हमेशा भयभीत रहा करती थी कि उनको खिलाया पिलाया जायेगा और फिर अतत काट दिया जायेगा। उस जादूगर ने उन्हें बेहोश करके कह दिया कि तुम भेड हो ही नही। तुम तो सिह (Lion) हो, भेड नही। उनके चित्त मे यह बात बैठ गई। उस दिन से वे अकड कर जीने लग गई। उस दिन से उन्होने यह बात भुला दी कि उन्हे काटने के लिये पाला जा रहा है। जब उनमे से एक भेड काट दी जाती थी तब बाकी रह गई भेडे सोचती थी कि वह तो भेड थी हम तो सिह हैं। सब सोचती कि मै नही काटी जाने वाली हू। रोज भेडे कम होती

जाती थी लेकिन हर भेड यही सोचती थी कि दूसरी तो भेड थी, इसलिये काटी गई और मै ? मै तो सिंह हू, मै काटी जाने वाली नहीं हू । उस जादूगर के घर उसका एक मित्र मेहमान हुआ तो उसने पूछा कि हम भी भेड़ें पालते हैं, हम भी उनको काटते हैं और उनके मास को बेचते है । लेकिन हमारी भेडें तो बडी भयभीत और परेशान रहती हैं। तुम्हारी भेडें तो बडी शान से घूमती हैं। आखिर बात क्या है ? उस जादूगर ने कहा मैने एक तरकीब काम मे लाई है । उनको बेहोश करके मैने कह दिया है कि तुम भेड़ नही हो। इसलिये वे मौज मे घूमती रहती हैं। उनको भागने का, भयभीत होने का अब मुझे कोई डर नही है और जब एक भेड कटती है तो बाकी भेडें सोचती हैं कि वह भेड थी मै तो भेड नही हू ।

मनुष्य जाति के साथ भी मामला कुछ ऐसा ही है । हर आदमी को यह ख्याल है कि मै तो कुछ और हू । तो जब मै आपसे यह कह रहा हू कि मनुष्य एक यत्र है तो मै भलीभाति जानता हू कि आप अपने पडौसी का विचार करके सोच रहे होगे कि बात तो इस आदमी के बाबत बिल्कुल ठीक है । रही मेरी बात, मै तो मशीन कहा हू ? मै तो अपवाद (Exception) हू । बाकी लोगो के सबध मे यह बात बिल्कुल ठीक है । जगह जगह लोग मेरे पास आते हैं और कहते है कि आप बात तो बिल्कुल ठीक ही कह रहे हैं । लोग बिल्कुल ही यत्र हैं । लेकिन मै उनसे पूछता हू सब आदमियो के बारे मे सवाल नही है, सवाल है कि यह आपके बारे मे सही है या नही ? और तब मै पाता हू कि वे पशोपेश मे पड जाते हैं। उनकी यह कहने की हिम्मत ही नहीं होती कि यह बात मेरे सबध मे भी सही है । तो जो बात मै कह रहा हू वह आपके पडौसियो के लिये नही कह रहा हू । वह आपके ही सबध मे कह रहा हू । आप के पास जो बैठे है उनकी तरफ देखने की कोई जरूरत नही है । अगर आपने उनकी तरफ देखा तो मेरी बात फिजूल चली जायेगी । उसका कोई मतलब नही होगा । आप अपनी तरफ देखें और सोचे, अगर आपको यह दिखाई पड जाये कि यह बात आपके सबध मे भी सही है, तो आप दूसरे आदमी हो जायेगे । इस बात के एहसास के साथ ही आप मे परिवर्तन होना शुरू हो जायेगा । क्योकि यह एहसास ही इस बात की घोषणा है कि अब आप मशीन नही रहे । कौन दे रहा है इस बात की स्वीकृति ? कौन इस बात का एहसास कर रहा है? जो चेतना इस बात का एहसास कर रही है कि मेरा जीवन एक यत्र है, वह स्वय यत्र नही हो सकती । इस बात की स्वीकृति से ही कही आपके भीतर

चेतना (Consciousness) का जन्म शुरू होता है। इसलिये मैंने यह जोर दिया कि हमें जानना, खोजना और पहचानना चाहिये कि हम यत्र हैं। और उस आदमी को मै धार्मिक कहूगा जिसने यह अनुभव किया कि उसका जीवन एक यत्र है। उस आदमी को मै धार्मिक नही कहता जो रोज सुबह उठकर माला फेर लेता है, जो रोज सुबह मदिर हो आता है। वह तो यत्र की भाति ही काम करता है। उसमे और यत्र मे कोई फर्क नही है। रोज माला फेरता है, वर्षों तक फेरता रहता है। ठीक मशीन की भाति ही वह रोज एक काम पूरा कर लेता है। रोज मदिर मे हो आता है, रोज किताब भी पढ लेता है। एक ही किताब को वह वर्षों तक पढता रहता है और दोहराता रहता है, बिल्कुल मशीन की भाति। उससे उसके जीवन मे कोई अतर नही आता, कोई क्राति नहीं होती, कोई परिवर्तन नहीं आता, कोई बदलाहट नही होती। हो भी नही सकती। क्राति हो सकती थी, यदि वह अनुभव करता कि अभी वह आदमी नहीं है। आदमी के बहुत नीचे के तल पर जी रहा है, मशीन के तल पर जी रहा है। ऐसा बोध, ऐसी प्रतीति स्वय की यान्त्रिकता के अतिक्रमण का पहला सूत्र है।

एक मित्र ने पूछा है कि अगर हममे यह ख्याल हो जाये कि हम बिल्कुल एक मशीन हैं तब तो हमारे जीवन मे निराशा छा जायेगी। फिर तो हम निराश हो जायेंगे कि अब तो कुछ भी नही हो सकता।

अभी आप मात्र बौद्धिक रूप से विचार कर रहे है। अगर आपको यह अहसास हो जाये कि मै एक मशीन हू तो इतना कुछ हो सकता है जिसका कुछ हिसाब नहीं है। यह बात कि फिर कुछ नही हो सकता एकदम ही गलत है। सच तो यह है कि जब तक इस बात का अहसास न हो कि मै एक मशीन हू, तब तक कुछ भी नहीं हो सकता। तब तक आप जो कुछ भी करेंगे वह सब व्यर्थ होगा। वह नींद मे किया होगा, जागकर नही। जिस चेतना को यह अनुभव होता है, यह बोध होता है कि मै एक मशीन हू वह चेतना मशीन से बाहर हो जाती है अलग हो जाती है, भिन्न हो जाती है।

किसी भी चीज को जानते ही हम उससे दूर हो जाते हैं। अगर मै आपको देख रहा हू कि आप वहा हैं तो मै आपसे अलग हो गया। क्योंकि देखने-वाला उससे अलग हो जाता है जिसे वह देखता है। दोनो के बीच फासला हो जाता है। अगर मै अपने इस हाथ को देख रहा हू तो मै इस हाथ से अलग हो गया। वह देखनेवाला, देखे गये हाथ से अलग हो जाता है।

मेरे एक मित्र बीमार पड़े थे। वे सीढ़ियों पर से गिर पड़े थे और उनके पैरों में बड़ी चोट आ गई थी। बहुत असह्य पीड़ा थी उन्हें। मैं उन्हें देखने गया। उन्होंने मुझ से कहा कि इस पीड़ा से तो बेहतर होता कि मैं मर ही जाता। असह्य पीड़ा है। बहुत दुख होता है और डाक्टर का कहना है कि कोई तीन महीने इस बिस्तर पर ही बंधे रहना होगा। यह तो और भी दुखद है। क्या मेरे मरने की कोई तरकीब नहीं खोजी जा सकती? क्या मैं मर नहीं सकता हूं? मैंने उनसे कहा इसके पहले कि आप मरें, क्या आपको भरोसा है कि आप जिन्दा हैं? क्योंकि मर वही सकता है जो जिन्दा हो। मुझे तो शक है कि आप जिन्दा भी हैं? शक है क्योंकि क्या आपको उस जीवन का पता है जो आपके भीतर है? अगर आपको उस जीवन का पता ही नहीं तो मैं आपको जिन्दा कैसे कहूं? मैंने कहा कि अभी मरने की योजना छोड़िये, अभी आपको यह भी पता नहीं कि आप जिन्दा हैं। जिन्दा आदमी मर सकता है, लेकिन आप जिन्दा कहां हैं? और मैंने उनसे कहा कि आप घबड़ाइये मत इतने, एक छोटा सा प्रयोग कीजिये। मैं यहां बैठा हूं आपके पास, आप आंखें बन्द कर लीजिये। और उस दर्द, उस पीड़ा को देखने की कोशिश कीजिये कि वह कहां है और क्या है जो आपको अहसास हो रही है। आपको किस जगह शरीर में पीड़ा मालूम हो रही है। वे मुझसे बोले कि मेरे पूरे पैर में तकलीफ है। मैंने कहा आप आंख बंद करिये और ठीक से खोजिये, उस बिन्दु पर ध्यान ले जाइये जहां आपको तकलीफ हो रही है। उन्होंने आंखें बन्द कीं और कोई पन्द्रह मिनट बाद आंखें खोलीं और मुझसे बोले कि यह तो हैरानी की बात है। जैसे जैसे मैं खोजने लगा, पीड़ा सिकुड़ती गई, छोटी होती गई। पहले मुझे लग रहा था कि पूरे पैर में दर्द है लेकिन जैसे मैंने खोज की तो मैंने पाया कि पूरे पैर में दर्द नहीं है। दर्द तो शायद छोटी सी जगह पर है और पूरे पैर में ध्यान के अभाव के कारण ही मुझे उसका अनुभव हो रहा है। और जैसे जैसे मैंने खोजने की कोशिश की मुझे दो अद्‌भुत बातें ख्याल में आईं जिनका मुझे पता भी नहीं था।

एक तो यह कि दर्द उतना नहीं था जितना मुझे मालूम पड़ रहा था। जब मैंने खोजने की कोशिश की तो दर्द उतना बिल्कुल नहीं था जितना मैं अहसास कर रहा था। जितना मैं भोग रहा था उतना दर्द था ही नहीं। और दूसरी बात जैसे ही दर्द मुझे एक जगह मालूम पड़ा कि पैर की फलां जगह दर्द हो रहा है, वैसे मुझे एक और बात पता चली जो और भी हैरानी

की है वह यह कि दर्द वहां हो रहा था और मैं दूर खड़ा उसे देख रहा था। मैं अलग था और दर्द अलग था। दर्द कहीं हो रहा था और मैं उसे जान रहा था तो मुझे एक क्षण ऐसा लगा कि मैं अलग हूं। जान रहा हूं और दर्द अलग है, कहीं हो रहा है।

अगर हमारे जीवन की यान्त्रिकता का हमे पता चल जाये तो हमे यह भी पता चल जायेगा कि यान्त्रिकता का घेरा कही है और मैं कही और हूं। मैं यान्त्रिकता के बीच मे हूं, मैं खुद यन्त्र नही हूं। और अगर यह अहसास हो जाये कि सारी यान्त्रिकता के बीच मे मेरी चेतना (consciousness) अलग ही है, तो फिर कुछ हो सकता है। मैं इस यन्त्र का मालिक बन सकता हूं। फिर इस यन्त्र के साथ मैं कुछ कर सकता हूं क्योकि मैं इससे अलग हूं और इसके बाहर हूं। लेकिन जो आदमी यन्त्र के साथ एक हो जाता है वह कुछ भी नही कर सकता। और वह आदमी यन्त्र के साथ एक ही है, जिसको यह पता नही कि मेरा सारा जीवन यान्त्रिक है। इसलिये निराश होने का कोई कारण नही है बल्कि आशा से भर जाने का कारण है। लेकिन यह केवल बौद्धिक विचारणा नही है। इसे तो जीवन मे खोजेंगे तो ही इसके क्रातिकारी परिणाम परिलक्षित हो सकते हैं। इसलिये यह मत सोचे कि क्या होगा कि मैने समझ लिया कि मैं एक यन्त्र हू। समझने की जरूरत नहीं है। जानने की जरूरत है कि आप यन्त्र है। यह एक तथ्य (Fact) है। यह कोई सिद्धात नही है। आपको समझाने की जरूरत नही है, समझने की जरूरत तो वहा है जहा कोई आपका समझाता है कि आप भगवान हे। यह तो एक तथ्य है कि आप यन्त्र है, इसे मानने की या विश्वास करने की भी जरूरत नही है बल्कि खोज लेने की जरूरत है। और जैसे ही इसे खोजेगे वैसे ही वह दूसरी चीज जो आपके भीतर यन्त्र नही है, अनुभव मे आनी शुरू हो जायेगी। धीरे धीरे आप जानेंगे, आपके चारो तरफ यान्त्रिकता है लेकिन आप यन्त्र नही है। आप एक चेतना है। आप एक आत्मा है। लेकिन आप एक आत्मा हैं यह सिद्धात दोहराने से नही पता चलेगा, यह तो जानने से पता चलेगा यान्त्रिकता खोजने से।

क्यो मैं इस बात पर जोर दे रहा हू कि आत्मा को जानने के लिये यान्त्रिकता खोजना जरूरी है? कोई वजह है? अगर आप काले तख्ते पर सफेद लकीर खीचे तो सफेद लकीर दिखाई पड़ेगी और अगर आप सफेद तख्ते पर सफेद ही लकीर खीचे तो वह दिखाई नही पडेगी। अगर आपको पूरी तरह यह अहसास हो जाये कि आपका जीवन यान्त्रिकता है तो उसी के बीच

मे इसी काले बोर्ड पर चेतना की सफेद लकीर आपको दिखाई पडनी शुरू होगी। नही तो वह नही दिखाई पडेगी। यान्त्रिकता के विरोध मे ही आपको चेतना का अनुभव होगा, नहीं तो अनुभव होगा ही नही। जीवन मे हमारे सारे अनुभव विरोध के कारण होते हैं, नही तो नही होते हैं। अभी आकाश काले बादलो से छा जाये, और एक बिजली चमके, तो बिजली दिखाई पडेगी। अभी यह बल्ब जल रहा है, यहा थोडी देर पहले भी जल रहा था लेकिन तब इसकी रोशनी पता नही चल रही थी, क्योकि चारो तरफ रोशनी थी। अब रात उतरने को शुरु हो गई है, तो आपके चेहरों पर बल्ब की रोशनी आनी शुरू हो गई है। रात गहरी होती जायेगी और बल्ब प्रगाढ होकर दिखाई पडने लगेंगे। रात जब पूरी अधेरी हो जायेगी तो बल्ब अपनी पूरी रोशनी मे दिखाई पडेगा। मै जो जोर दे रहा हू इस बात पर वह इसीलिये कि यदि यान्त्रिक जीवन (Mechanical life) का पूरा अनुभव हो जाये तो उसके विरोध मे आपको चेतना की वह लकीर भी बिजली की भाति दिखाई पडनी शुरू हो जायेगी जिसका नाम आत्मा है। लेकिन वह दिखाई पड सके इसके लिये जरूरी है कि यान्त्रिकता का बोध जितना गहरा हो उतना ही शुभ है। क्योकि उसी की पृष्ठभूमि मे आपको आत्मा का अनुभव होगा। इसलिये निराश होने की बात नही है बल्कि आशा से भर जाने की बात है। उसे खोजे, देखें और पहचानें। आत्मा को मत खोजे। उसको आप नही खोज सकते हैं। लेकिन अभी आप अपनी यान्त्रिकता को खोजे। उसी यान्त्रिकता की खोज से आत्मा की लकीर आपको स्पष्ट होनी शुरू होगी। उसी के बीच आपको उस बिजली की चमक दिखाई पडनी शुरु हो जायेगी। उस चमक की पूर्णता मे ही परमात्मा उपलब्ध होता है। लेकिन इसके पहले परमात्मा के सबध मे कुछ भी कहना, कुछ भी सोचना, एकदम नासमझी है, गलत है। और गलत ही नहीं, वह खतरनाक बात भी है। क्योकि वैसा ज्ञान वास्तविक ज्ञान के आगमन पथ पर अवरोध के अतिरिक्त और कुछ भी नही बनता है।

एक मित्र ने पूछा है कि भगवान की धारणा का जन्म कैसे हो गया?

भगवान की धारणा का जन्म भय (Fear) के कारण हो गया। परमात्मा के अनुभव का जन्म भय के कारण नही होता। वह तो ज्ञान के कारण होता है। लेकिन भगवान की धारणा (concept), भगवान के सिद्धात का जन्म भय के कारण होता है।

एक गाव मे से एक फकीर गुजर रहा था। उस गाव के राजा ने उसे

पकड़वाकर बुलवा लिया। दरबार मे उसे बुलाकर कहा कि मैंने सुना है कि तुम बहुत बड़े रहस्यवादी सत हो, और मैंने सुना है कि तुम्हे परमात्मा के दर्शन होते हैं। मेरे सामने तुम रहस्यवादी सत हो, ऐसा सिद्ध करो। अगर सिद्ध न कर सके तो गरदन अलग करवा दूगा। उस फकीर ने यह सुना। वह बादशाह पागल था, जैसे कि अक्सर बादशाह पागल होते हैं, और खतरा था कि कही वह गरदन अलग न करवा दे। उसने एकदम आंखे बद की और कहा कि देखो, वे मुझे दिखाई पड रहे हैं। आकाश मे भगवान अपने सिंहासन पर विराजमान हैं और देवता उनकी स्तुति कर रहे हैं। वह नीचे देखो, जमीन मे वहा मुझे राक्षस और नरक यह सब दिखाई पड रहा है। उस राजा ने कहा बड़ी हैरानी की बात है क्या तुम्हें दीवारो के पार भी दिखाई पडता है? कौन सी तरकीब है जिसके कारण तुम्हें आकाश मे बादलो के पार भगवान दिखाई पड जाता है? और जमीन के नीचे नरक दिखाई पड जाता है? तो उसने कहा कोई तरकीब नहीं है महानुभाव! बहुत ज्यादा चीज की जरूरत नही है। भय भर होना चाहिये और फिर सब दिखाई पडने लग जाता है। जब आपने कहा कि गरदन कटवा देंगे मैंने आखे बद कर ली और मुझे भगवान दिखाई पडने लगे और नरक भी दिखाई पडने लगा। सिर्फ भय की जरूरत है और फिर सब दिखाई पडने लगता है, किसी और चीज की कोई जरूरत नहीं है।

आपको भय हो तो आपको सब कुछ दिखाई पडने लगेगा, भूत भी और भगवान भी। लेकिन ऐसे दिखाई पडने वाले न तो भूत सच हैं और न भगवान सच हैं। आपके भय पर जो भी अनुभव खडा होता है, वह व्यर्थ है और झूठा है।

भगवान की धारणा मनुष्य के भय से पैदा हो जाती है। जीवन मे सब दुखी हैं, पीडित और भयभीत हैं। जीवन मे कही भी कोई सहारा नहीं है। जीवन मे कही कोई आसरा नहीं है, जीवन मे सुरक्षा (security) का कोई पता नही है। सब घबडाहट मे मरनेवाले है। इसलिये आदमी डरता है और इस डर से आकाश मे सहारे खोजता है। हे भगवान! शायद तुम्हीं सहारा हो। शायद तुम्हारे पैर पकडू और मुझे सहारा मिल जाये, सुरक्षा मिल जाये। इस जगत् मे तो कुछ सहारा मिलता नहीं है, कोई किनारा नहीं है। तुम्हीं मेरे किनारे हो। वह घबडाहट मे भय की कल्पना करता है और उसके पैर पकड कर प्रार्थनाये करता है और हाथ जोडता है और स्तुतिया करता है। शायद तुम प्रसन्न हो जाओ और मुझ पर कृपा करो और मेरे जीवन के सहारे

और आधार बन जाओ। यह भगवान एकदम झूठा है। क्योकि इसका जन्म हमारे भय से हुआ है और भय हमारा बिल्कुल यान्त्रिक है। इसलिये तो धार्मिक आदमी को ईश्वरभीरु (God-fearing), भगवान से डरा हुआ कहते हैं। भगवान के प्रति भीरु! बडी अजीब बात है। कोई आदमी ईश्वरभीरु होकर भी धार्मिक हो सकता है? जिस आदमी के भीतर भगवान का भय है, वह तो कभी भी धार्मिक नही हो सकता। धार्मिक होने के लिये तो अभय (Fearlessness) चाहिये। अभय-चित्त ही उस जीवन को पाता है जो कि सत्य है जो कि परमात्मा है। जो भयभीत है वह अपने भय के अतिरिक्त कुछ भी नही जानता। भय से सुरक्षा के लिये उसने जो कल्पनायें की हैं, वह उनको ही जानता है। और भय से निकली हुई सारी कल्पनायें झूठी हैं।

भगवान की धारणा भय से निकलती है किन्तु भगवान का अनुभव जागृत चेतना से उपलब्ध होता है। और चूंकि हम सोये हुये हैं, यान्त्रिक हैं हमारे सारे भगवान हमारे जैसे ही झूठे हैं। हमारे सब भगवान हमारे जैसे ही यान्त्रिक हैं क्योकि उनको बनाने वाले हम हैं। उनको हमने ही निर्मित किया है। मदिरो मे जो मूर्तिया खडी हैं, वे हमने खडी की हैं। मस्जिदें और शिवालय बनाये हैं तो हमने। धर्म खडे किये हैं तो हमने। शास्त्र रचे हैं तो हमने। और स्वभावत जैसे हम होगे, वैसे ही हमारे शास्त्र होगे, वैसे ही हमारे भगवान होगे और इसलिये जैसे आदमी बदलता जाता है वैसे ही उसकी भगवान की धारणा भी बदलती जाती है।

पिछली सदी का भगवान और तरह का था। ज्यादा राजतान्त्रिक (Autocrat) था क्योकि आदमी का दिमाग राजतन्त्र मे था और इसलिये भगवान की शक्ल राजा की तरह ही थी। आजकल का भगवान थोडा ज्यादा लोकतान्त्रिक (Democratic) है क्योंकि आदमी लोकतांत्रिक हो गया है। जैसा मनुष्य वैसा भगवान यही नियम है।

अगर आप तीन हजार वर्ष पहले की किताबें पढें तो घबडा जायेंगे। हमारी कल्पना मे भी नही आयेगा कि भगवान ऐसा भी कैसे हो सकता है? अगर आप भगवान के खिलाफ एक शब्द भी बोल दें तो वह आपकी हत्या कर देगा। ऐसा था तीन हजार साल पुराना भगवान। वह आपके ऊपर बिजली भी गिरा देगा, आपको तबाह कर देगा। आज हम ऐसा सोच भी नही सकते। हम तो भले आदमी के बारे मे भी ऐसा नहीं सोच सकते कि उसको हम बुरा कहें तो वह हमारे घर मे आग लगा देगा। भले आदमी की

धारणा बदल गई है हमारी। लेकिन पुराना भगवान बिजली गिराता था, आग लगा देता था, नरक मे डाल देता था। हमारे दिमाग जैसे थे, वैसा हमने भगवान बना लिया था। अब हमारे दिमाग बदले तो हमने थोडा लोकतान्त्रिक बनाया भगवान को। वह क्षमा भी करता है, दया भी और प्रेम भी करता है। आगे शायद हमारे दिमाग बदल जायेंगे, हम दूसरी तरह का भगवान बना लेंगे। भगवान की धारणा हमारी सृष्टि है, भगवानो की कल्पनायें हमारे द्वारा ही निर्मित हैं। वह सब हमारी ही मन सृष्टि (mind creations) हैं। ये धारणायें हमारी हैं और इनसे भगवान का कोई भी सबध नही है। ये हमारे मन के खेल हैं, उससे ज्यादा नही। चूकि स्त्रियो ने अब तक भगवान नही बनाये, इसलिये उनकी शक्ल पुरुष जैसी ही है। अगर स्त्रिया उन्हे बनायें तो उनकी शक्ल स्त्रैण हो तो कोई आश्चर्य न होगा। और अगर पशु पक्षी अपने भगवान बनाये तो वे अपनी शक्ल मे ही बनायेंगे। क्या आप सोच सकते हैं कि घोडे और गधे अगर भगवान की कल्पना करें तो क्या आदमी की शक्लो मे करेंगे ? कोई घोडा और गधा आदमी को इस योग्य नही समझेगा कि वह उसकी शक्ल मे भगवान को बनाये। वह अपनी शक्ल मे बनायेगा। नीग्रो अपनी शक्ल मे बनाता है, चीनी अपनी शक्ल मे भारतीय अपनी शक्ल मे और तिब्बती अपनी शक्ल मे।

नीग्रो का जो भगवान है, वह कभी सफेद रग का नहीं हो सकता। आपको पता है वह काले रग का ही होगा। हा, शैतान सफेद रग का हो भी सकता है या अग्रेज का भगवान कभी काले रग का हो सकता है ? हिन्दुओ से पूछिये कि काले रग के कौन होते है ? वे कहेगे राक्षस। लेकिन नीग्रो से पूछिये तो वह कहेगा काले रग के राक्षस होते हैं कभी ? काले रग के तो भगवान होते हैं और जितना शुद्ध उनका काला रग होता है, उतना किसी का भी नही होता। शुद्धतम जो काला रग होता है, वही है भगवान का रग, और सफेद रग तो शैतान का ही हो सकता है।

हमारी अपनी धारणाये अपनी ही शक्ल मे निर्मित होती है। ये सारी हमारी ही कल्पनाये है। उनका कोई भी मूल्य नही है। लेकिन हा, सत्य का एक अनुभव भी है जहा हम मिट जाते है और हम उसे जानते हैं, जो वस्तुत है। वहा हम रह जाते हैं न पुरुष, न स्त्री, न भारतीय, न हिन्दू, न मुसलमान वहा केवल चेतना रह जाती है। चेतना जिसका कोई रग नही है, चेतना जिसका कोई आकार नही है, चेतना जो हिन्दू नही है,

मुसलमान नही है, हिन्दुस्तानी नही है, पाकिस्तानी नही है। ईसाई और यहूदी भी नही, पारसी भी नही। चेतना मात्र रह जाती है जहा, वहा वह जाना जाता है 'जो है'। वही जो चेतना का प्राण है और केन्द्र है उसका नाम है परमात्मा। लेकिन वह धारणा (Concept) नहीं है बल्कि अनुभव (Experience) है। वह शब्द नही, शब्दातीत साक्षात् है। वह विचार नही निर्विचार अनुभूति (Realization) है।

भगवान की धारणा भय से पैदा होती है लेकिन भगवान का अनुभव जागृत चित्त से पैदा होता है और भय का कोई स्थान जागृत चित्त मे कभी नहीं है। जिसे हम धर्म मानकर चलते हैं वह धर्म नहीं है। और जिसे भगवान मानकर चलते हैं वह भगवान नही है। अभी तो हमे इसका ही पता नही है कि हम कौन है और क्या है? और हम भगवान की खोज की यात्रा पर निकल जाते हैं। आह, आदमी का अहकार अद्भुत है। जब उसे अहसास होता है कि भगवान नहीं मिल रहा है तो फिर वह कल्पनाये करना शुरू कर देता है। और उसकी कल्पना इतनी शक्तिशाली है, उसकी स्वप्न देखने की क्षमता इतनी प्रगाढ़ है कि वह जिस कल्पना को चाहे उसका सहज ही अनुभव कर सकता है। धर्म की सरिता कल्पना के मरुस्थल मे ही आज तक खोई रही है। और स्वप्न देखने के सुख मे मनुष्य सत्य से वचित ही रहा आया है। क्या आपको अपनी कल्पना शक्ति का पता नही है? हमारी कल्पनाये इतनी तीव्र हैं और हमारे स्वप्न देखने की शक्ति इतनी बडी है कि हम जिसका चाहे उसका अनुभव कर सकते हैं। सोया हुआ आदमी कुछ भी देख सकता है। हम अभी सोये हुये हैं। यात्रिक आदमी सोया हुआ आदमी है। यात्रिकता और सोये हुये मन मे कोई फर्क नही है। हमे पता भी नही है कि हम क्या कर रहे हैं? इसलिये पहली बात जागरण है, कल्पना नही। सत्य मे जाना है, स्वप्न मे नहीं। और सत्य की कोई भी धारणा नही हो सकती है। सब धारणाये स्वप्ननिर्मात्री होती हैं। सत्य मे प्रवेश के लिये तो धारणाये मात्र छोड देना आवश्यक है। परमात्मा की धारणा छोडकर जो अज्ञात और अज्ञेय जीवन के प्रति जागता है, वही और केवल वही परमात्मा की अमृतानुभूति को उपलब्ध होता है।

बारह : मित्र ! निद्रा से जागो

मित्र ! निद्रा से जागो

मनुष्य एक यंत्र है। मनुष्य की चेतना जागी हुई नही है। मनुष्य एक सोती हुई आत्मा है। उसका सारा जीवन ही सोया हुआ जीवन है। लेकिन बात यहीं समाप्त नही हो जाती। बात यहा शुरू होती है। मनुष्य यत्र है, तो यत्र से ऊपर उठने की भी उसकी सभावना है। अगर अपनी यात्रिक स्थिति उसे पूरी तरह स्पष्ट हो जाये तो स्पष्ट होने के साथ ही भीतर कोई शक्ति जगने लगेगी जो उसे मनुष्य बना सकती है।'

इस बात को ठीक मे समझ लें कि मनुष्य के सोये हुए होने से मेरा क्या अर्थ है ?

मनुष्य यत्र है--इस बात को कहने मे मेरा क्या प्रयोजन है ?

इस बात का एक ही अर्थ है कि अभी हम जिसे जागरण समझते हैं वह जागरण नहीं है। वह स्वप्न देखने की ही एक दशा है।

रात आकाश मे तारे भरे होते हैं। सुबह सूरज निकलता है, और हम सोचते होंगे कि सूरज निकलने के साथ तारे समाप्त हो गये, या कि तारे कही चले गये। लेकिन तारे न तो समाप्त होते हैं और न कही जाते हैं। वे सूरज की रोशनी मे केवल छिप जाते है। अगर कोई बहुत गहरे कुए के भीतर चला जाये, तो वहा उस अधेरे मे से आकाश के तारे दिन मे भी दिखाई पड सकते है क्योंकि तारे तो दिन मे भी वही मौजूद होते हैं जहा रात थे, लेकिन सूरज की रोशनी मे छिप जाते हैं और दिखाई नहीं पडते।

रात हम स्वप्न देखते हैं। सुबह उठकर सोचते हैं। स्वप्न समाप्त हो गये। लेकिन नही, स्वप्न हमारे भीतर चलते हैं। अगर थोडी देर किसी भी क्षण अपनी आख बद करके भीतर जाये, भीतर देखें तो आप पायेंगे सपने वहा मौजूद हैं। वहा स्वप्न (Dreams) चल रहे हैं। हो सकता है आप राष्ट्रपति बन गये हो अपने सपने मे। हो सकता है आपने कोई बहुत बडा महल खडा कर लिया हो, या अपने दुश्मन की हत्या कर दी हो। लेकिन आख बन्द करके भीतर देखेंगे तो पायेंगे कि दिन मे जागते हुए भी वहा कोई न कोई स्वप्न मौजूद है।

और ऐसे ही चित्त को, जिसमे स्वप्न मौजूद हैं, मै सोया हुआ चित्त कहता हू। रात हम सपने देखते हैं और दिन मे जाग कर भी सपने देखते हैं। एक ही फर्क पडता है। रात में आखें बद होती हैं इसलिये सपना स्पष्ट रूप मे

दिखाई पडता है क्योंकि बाहर की दुनिया हमारी आखो मे नही होती। दिन मे सपना तो भीतर मौजूद होता है पर बाहर की दुनिया के कोलाहल मे दब जाता है। वह मौजूद रहता है, मिटता नही है। जैसे सुबह सूरज की रोशनी मे आकाश के तारे दब जाते हैं, मिटते नहीं है, साझ होते ही, सूरज के बिदा होते ही, तारे चमकना शुरू हो जाते है, ऐसे ही दिन की रोशनी मे बाहर की दुनिया के चित्र सामने खडे हो जाते है और भीतर के सपने दब जाते हैं। वे मिटते नहीं हैं। आख बद करे और भीतर देखे। सपना वहा मौजूद होगा। साझ होगी, बाहर की दुनिया से चित्त थक जायेगा। बाहर की दुनिया के चित्र हल्के पडने लगेंगे, और सपने स्पष्ट होने लगेंगे। वे तो चौबीस घटे चल ही रहे है। उनकी एक अविच्छिन्न धारा है। उनका एक लगातार क्रम है। वह टूटता नही है। इसीलिये मैंने कहा कि मनुष्य सोया हुआ है। जो सपने देखता है वह सोया हुआ ही है। वह नीद मे ही है।

जिस दिन चित्त सारे सपनो से मुक्त हो जाता है, भीतर कोई स्वप्न नही रह जाता, उसी दिन उस गहरी शांति मे, उस शात चित्त मे सत्य का प्रतिबिम्ब बनना शुरू होता है। जैसे किसी झील मे लहरे लय हो जाये, और झील बिल्कुल शात हो जाये, तो उसमे चाद और तारो के प्रतिबिम्ब बनने लगते है। ऐसे ही स्वप्नरहित शात चित्त मे परमात्मा की छवि उतरना शुरू होती है। उसका आलोक उतरना शुरू होता है। स्वप्न रहित, जागृत चित्त सत्य की और स्वय की खोज का द्वार है। लेकिन हम सोये हुए हैं। और सोये हुए हम जो भी करेंगे उससे सत्य के, स्वय के या आनद के निकट कभी नही पहुच सकते है।

सोया हुआ आदमी चाहे कितना ही सोचे कि वह कहीं पहुच गया है, लेकिन कही पहुचता नही है। आपने हजारो बार रात सपने मे देखा होगा कि आप काश्मीर पहुच गये, हिमालय पहुच गये या कहीं और पहुच गये। और सुबह जागकर आपने पाया कि आप वही हैं, जहा आप सोये थे, कही पहुचे नही हैं। सोया हुआ आदमी कही पहुचता है? पहुचने के सपने जरूर देखता है। और जिस दिन भी जागता है, जिस क्षण भी जागता है, पाता है कि वहीं खडा है जहा पर था। इसीलिए सोया हुआ आदमी केवल यात्रा के सपने देखता है लेकिन यात्रा कभी भी नही कर पाता। सोचता है यह बन जाऊ, वह बन जाऊ लेकिन यह सब उसका सपना है। जिस दिन भी जागेगा तो वह पायेगा कि वह कुछ भी नहीं बना, वही का वही खडा है।

सोया हुआ आदमी विचार करता है न मालूम क्या क्या हो जाने के, लेकिन कुछ हो नहीं पाता। मौत उसके सारे सपनो को तोड़ देती है। और वह

पाता है कि मैं तो वहीं खडा हू, जहा मैं था। जीवन की यही विफलता, दुख और विषाद बन जाती है। कहां, कहा पहुचने का सोचते हैं और कही पहुच नहीं पाते। पहुचते भी हैं तो वहा, जहा कभी सोचा भी न था। सारी यात्रा मृत्यु मे समाप्त हो जाती है। जहा कोई कभी नही पहुचना चाहता, अतत हम वहीं पहुच जाते हैं। जिन्दगी भर चलकर मौत मे पहुच जाते हैं। जिन्दगी भर दौडकर मृत्यु मे पहुच जाते हैं। और मैं आपको निवेदन कर दू, जो सोया हुआ है, वह सिवाय मृत्यु के और कही पहुचेगा भी नही।

सोये हुए होने और मौत मे कोई गहरा सम्बन्ध है। मौत असल मे और गहरे रूप से सो जाने के सिवाय क्या है? जो जिन्दगी भर सोया रहा है वह मृत्यु की गहरी निद्रा मे पहुच ही जायेगा। लेकिन जो अपने भीतर जागना शुरू हो जाता है, उसके लिये मृत्यु मिट जाती है। सोया हुआ चित्त (Sleeping mind) मौत मे पहुचता है। जागा हुआ चित्त (Aware mind) वहा पहुच जाता है, जहा अमृत है, जहा कोई मृत्यु नही है।

हम सब लोग सारी यात्रा करके कहा पहुचते है? यह पूछ लेना जरूरी है, क्योकि वह मजिल बता देगी कि हम सोये हुए हैं या जागे हुये?

एक फकीर से किसी ने जाकर पूछा कि हमे मृत्यु और जीवन के सबध मे कुछ समझाये? उस फकीर ने कहा कही और जाओ! अगर केवल जीवन के सबध मे ही समझना हो तो मै समझाऊ लेकिन मौत के सबध मे समझना हो तो कही और जाओ। क्योकि मौत को तो हम जानते ही नही कि कहा है। हम तो केवल जीवन को जानते हैं।

जो जागता है वह केवल जीवन को जानता है। उसके लिए मौत जैसी कोई चीज रह ही नही जाती। और जो सोता है वह केवल मौत को ही जानता है। वह जीवन को कभी नहीं जान पाता।

सोया हुआ आदमी इन अर्थों मे मरा हुआ आदमी है। उसे जीवन का केवल आभास है, कोई अनुभव नहीं। वह सोया हुआ है इसलिये वह एक जड यत्र है, सचेत आत्मा नही। और इस सोये हुए होने मे वह जो भी करेगा, वह मृत्यु के अलावा उसे कही नही ले जा सकता है, चाहे वह धन इकट्ठा करे, चाहे वह धर्म इकटठा करे, चाहे वह दुकान चलाये और चाहे वह मदिर जाये, चाहे वह यश कमाये और चाहे वह त्याग करे। उसका कुछ भी करना उसे मृत्यु के बाहर नहीं ले जा सकता है। एक कहानी मुझे बहुत प्रीतिकर है। वह मैं आपसे कहू।

एक राजा ने रात सपना देखा। वह घबडा गया और उसकी नींद टूट

गई। फिर तो उतनी रात उसने सारे महल को जगा दिया और सारी राजधानी मे खबर पहुचा दी कि मैने एक सपना देखा है। जो लोग मेरे सपने का अर्थ कर सकें, उसकी व्याख्या कर सके, वे शीघ्र चले आयें।

गाव मे जो भी पडित थे, विचारशील लोग थे, ज्ञानी थे, भागे हुए राजमहल आये। और उन्होने राजा से पूछा कि कौनसा सपना आपने देखा है कि आधी रात को आपको हमारी जरूरत पड गई। उस राजा ने कहा "मैने सपने मे देखा है कि मौत मेरे कधे पर हाथ रखकर खडी है और मुझसे कह रही है कि साझ ठीक जगह पर और ठीक समय पर मुझे मिल जाना। मुझे तो कुछ समझ मे नही आता कि इस सपने का क्या अर्थ है ? तुम्हीं मुझे समझाओ।

ये लोग विचार मे पड गये और सपने का अर्थ करने लगे—क्या होगा, इसकी सूचना क्या है ? इसके लक्षण क्या है ? और तभी महल के एक बूढे नौकर ने राजा को कहा "इनके अर्थ और इनकी व्याख्याये और इनके शास्त्र बहुत बडे है। और साझ जल्दी हो जायेगी। मौत ने कहा है, साझ होते होते, सूरज ढलते ढलते मुझे ठीक जगह पर मिल जाना। मै तुम्हे लेने आ रही हू। उचित तो यह होगा कि आपके पास जो तेज से तेज घोडा हो, उसको लेकर इस महल से साझ तक जितनी दूर हो सके निकल जाये। इस महल मे अब एक क्षण भी रुकना खतरनाक है। जितनी दूर जा सके चले जाये। मौत से बचने का इसके सिवाय कोई रास्ता नही है। और अगर इन पडितो की व्याख्या के लिये रुके रहे कि ये क्या अर्थ करेगे तो मै आपसे कह देता हू कि ये पडित तो आज तक किसी निष्कर्ष पर नही पहुचे है, कोई निष्पत्ति और कोई समाधान पर नही पहुचे है हालांकि हजारो साल से विचार कर रहे है। जब ये अभी तक जीवन का ही कोई अर्थ नहीं निकाल पाये तो मौत का क्या अर्थ निकाल पायेंगे ? साझ बहुत जल्दी हो जायेगी इनका अर्थ न निकल पायेगा। आप भागे यही ठीक है। इस महल को जल्द से जल्द छोड दे यही उचित है।" राजा को बात समझ मे आई। उसने अपना तेज से तेज घोडा बुलवाया और उस पर बैठ कर भागा।

दिन भर वह भागता रहा। न उसने धूप देखी न छाव। न उस दिन उसे प्यास लगी, न भूख। जितने दूर निकल सके उतने दूर निकल जाना था। मौत पीछे पडी थी। महल से जितना दूर हो जाये उतना ही अच्छा था। जितना मौत के पजे से बाहर हो जाये उतना ही अच्छा था।

साझ होते होते, वह सैकडो मील दूर निकल गया। सूरज ढल रहा था। उसने एक बगीचे मे जाकर घोडा ठहराया। वह प्रसन्न था कि वह काफी दूर

आ गया है। जब घोडा बाध ही रहा था तभी उसे अनुभव हुआ कि पीछे से किसी ने कधे पर हाथ रख दिया है। उसने लौटकर देखा—वह घबडा गया ! उसके सारे प्राण कप गये ! जो काली छाया रात सपने मे उसे दिखाई पडी थी वही खडी थी। घबडा कर राजा ने पूछा "तुम ! तुम कौन हो ?" उसने कहा, "मैं हू तुम्हारी मृत्यु। क्या भूल गये आज की रात ही मैंने तुम्हें स्मरण दिलाया था कि साझ होने के पहले, सूरज ढलने के पहले, ठीक समय, ठीक जगह पर मुझे मिल जाना। मै तो बहुत घबडाई हुई थी क्योकि जहा तुम थे, वहा से इस वृक्ष के नीचे तक, ठीक समय पर आने मे बहुत कठिनाई थी। लेकिन तुम्हारा घोडा बहुत तेज था और उसने तुम्हे ठीक समय, ठीक जगह पर पहुचा दिया। मै तुम्हारे घोडे को धन्यवाद देती हू। इस जगह तुम्हे मरना था और मै चिन्तित थी कि सूरज ढलने तक तुम इस जगह तक आ भी पाओगे या नही।"

दिन भर की दौड साझ को मौत मे ले गई। सोचा था बचने के लिये भाग रहा है। और उसे पता भी न था कि बचने के लिये नही भाग रहा था बल्कि जिसे बचना चाह रहा था प्रतिक्षण उसके ही निकट होता जाता था। उसे पता भी न था कि उसका उठाया हुआ प्रत्येक कदम उसे मौत के मुह मे ले जा रहा था।

हम सब भी अपने अपने घोडे पर सवार हैं। और हम सब भी मौत के मुह मे चले जा रहे हैं। हम जो भी करेंगे, वह शायद हमे उस ठीक जगह पहुचा देगा जहा मौत हमारी प्रतीक्षा कर रही है। और हम जिस रास्ते पर भी चलेगे, वह हमे मौत के अतिरिक्त कही नही ले जायेगा। आज तक यही होता रहा है।

सोया हुआ आदमी जो कुछ भी करेगा वह मृत्यु मे ले जाता है। सोने का अंतिम परिणाम मौत ही हो सकती है। लेकिन सोना आदमी की नियति नही है। यह जरूरी नही है कि कोई सोया ही रहे। जागा भी जा सकता है। जो सोया है, वह जाग भी सकता है। पीछे लोग जागे है। आज भी जाग सकते हैं। जागने का भी मार्ग है, रास्ता है, द्वार है। अभी तो हम नीद मे जो भी करेंगे उससे कुछ भी होने को नही है। हमारी पूजा और हमारी प्रार्थना कुछ भी न करेगी। नीद बुनियादी रूप से पहले चरण की तरह टूट जानी चाहिए तभी कुछ हो सकता है। वह नीद कैसे टूटे, कैसे भीतर चेतना होश और जागरण से भर जाये, कैसे भीतर बोध का दिया जल जाये, उसके सूत्रो पर बात करूगा। लेकिन उसके पहले बुनियादी रूप से यह समझ ले कि सोये हुए कुछ भी नही हो सकता।

एक घटना मुझे स्मरण आती है। एक फलो की दुकान के पास एक

भिखारी खडा हुआ था। दोपहर हो गई थी और दुकान का मालिक घर भोजन करने को जाना चाहता था। उसने एक लोमडी पाल रखी थी। जब वह भोजन के लिए जाता तो वह लोमडी उसकी दुकान के बाहर बैठकर पहरा दिया करती थी। मालिक ने लोमडी को कहा कि तू बाहर आ और द्वार पर बैठ। आसपास कोई भी आदमी आये तो ख्याल रखना कि कोई ऐसा काम तो नहीं कर रहा है जिससे दुकान को नुकसान पहुचने की सभावना हो। अगर वह ऐसा कुछ काम करता हुआ दिखाई पडे तो सचेत हो जाना और आवाज देना। देख लोमडिया कुत्तो से भी ज्यादा होशियार होती हैं। इसीलिए मैंने तुझे पाला है और तेरे ऊपर यह जिम्मा छोडा है।

उस लोमडी से जब यह कहा गया तो वह बाहर आकर बैठ गई। मालिक भोजन करने चला गया। वह भिखारी जो पास मे ही खडा हुआ था, उनकी बातें सुन रहा था। लोमडी मे कही गई सारी बातें उसने सुनी थी। वह चुपचाप जहां बैठा हुआ था वहीं लेट गया। उसने आखें भी बन्द कर ली। लोमडी ने सोचा "सो जाना तो कोई क्रिया नही है! यह तो सो रहा है। यह कुछ कर तो नहीं रहा है। इसके सोने से तो दुकान को खतरा नही है। क्योंकि वह कुछ करता तो खतरा भी हो सकता था। लेकिन यह तो कुछ भी नहीं कर रहा है, सो रहा है। और सोना कुछ करना नहीं है।"

उसका यह तर्क बडा ही उचित था क्योंकि सोना तो कोई क्रिया नही है। भिखारी कुछ कर तो नही रहा था जिससे दुकान को खतरा होता। वह तो सिर्फ सो रहा था।

लेकिन उसे सोते देखकर लोमडी को भी नीद आने लगी। नीद बडी सक्रामक बीमारी है। अगर आपके पास दो चार लोग सोने लगें तो आपका जागना बहुत मुश्किल हो जायेगा। आप भी सो जायेंगे। लोमडी को भी नीद आने लगी। और फिर कोई खतरा भी न था। वह निश्चिन्त होकर सो सकती थी। एक आदमी था जिससे कोई खतरा हो सकता था लेकिन वह भी सो गया था। तो लोमडी भी सो गई।

लोमडी के सोते ही वह आदमी उठा। दुकान के भीतर गया और जो उसे चुराना था चुरा लिया। लोमडी को क्या पता था कि सोते हुए लोग भी कुछ करते हैं। वह भोली-भाली थी। उसे आदमियो का कोई अन्दाज न था कि आदमी बहुत खतरनाक है। और सोते हुए आदमी से डर है और खतरा है। बल्कि सच तो यह है कि सोते हुए आदमी से ही असली डर है। सोया हुआ आदमी ही चोरी कर सकता है। सोया हुआ आदमी ही असत्य बोल सकता है।

सोया हुआ आदमी ही बेईमानी कर सकता है और हिंसा कर सकता है। सोया हुआ आदमी ही यह सब कर सकता है। यह उस लोमडी को पता न था। उसने तो समझा कि सोना कोई काम थोडे ही है। जो सो गया सो, सो गया उससे क्या डर ? बेचारी भोली-भाली थी। उसे जानवरो की आदत का पता होगा पर आदमियो की आदत का कोई पता न था। आदमी तो वैसे ही बडा खतरनाक है। और फिर सोता हुआ आदमी तो बहुत ही खतरनाक है। क्योकि सोया हुआ आदमी कुछ न कुछ करेगा और नीद मे वह जो भी करेगा वह खतरनाक ही होगा। वह चोरी होगी, हिंसा होगी, झूठ होगा।

तो वह भिखारी चोरी करके भाग गया। जब मालिक वापस आया तो उसने देखा कि चोरी हो गई है। लोमडी घबडाई हुई बैठी है। उसने लोमडी से पूछा कि क्या हुआ ? लेकिन वह क्या बताती ? वह खुद ही सो गई थी।

मालिक बाहर भागा। और थोडी ही दूर पर उसने उस भिखारी को छिपे हुये, एक वृक्ष के पीछे, फल खाते हुये देखा। वह उसके पास गया और उसने पूछा "मेरे मित्र ! तुमने चोरी की वह तो ठीक, लेकिन क्या मैं पूछ सकता हू कि तुमने चोरी कैसे की ? उस भिखारी ने कहा, "बहुत आसान था चोरी करना। लोमडी को मैने सोने का धोखा दिया। मै आख बद करके लेट गया और लोमडी धोखे मे आ गई। उसने शायद सोचा होगा कि सोया हुआ आदमी क्या कर सकता है ? लेकिन मै तुम्हे बता दू, आज तक दुनिया मे जो कुछ भी किया है वह सोये हुए आदमी ने ही किया है। इसीलिये दुनिया इतनी बदतर है। तुम्हारी लोमडी धोखे मे आ गई थी लेकिन तुम धोखे मे मत आना। अगर लोमडी मेरे सोने के धोखे मे न आती तो मै चोरी न कर पाता।"

मैने यह कहानी सुनी और यह मुझे बडी हैरानी की लगी और बडी सचाई से भरी हुई भी। अभी हम जो भी कर रहे हैं उससे जीवन मे दुख फलित होता है। उससे जीवन मे हिंसा, चोरी और अनाचार फलित होता है। शायद हमे इस बात का पता भी नहीं है। और शायद इस बात का हमे कोई ख्याल भी नही है कि ये सारी बातें हमारे सोने से पैदा होती हैं। हम नींद मे है। हमारी चेतना सोई हुई है। और सोई हुई स्थिति मे अगर हम चाहें कि इन सारी क्रियाओ को बदल दें तो यह असभव है। यह बिल्कुल ही असभव है। इसे बहुत स्पष्ट रूप से समझ लें कि सोई हुई स्थिति मे कोई परिवर्तन मनुष्य के जीवन मे सभव नहीं है। और अगर कोई परिवर्तन को अपने ऊपर थोप भी लेगा तो वह झूठ होगा और पाखड होगा। उसके प्राणो मे कोई क्राति नहीं होगी। भीतर वह वही का वही आदमी रहेगा।

सोई हुई चेतना ऊपर उठने मे असमर्थ है। सोई हुई चेतना सत्य को जानने मे और जीवन को जानने मे असमर्थ है। तब कैसे इसे जगायें ? क्या करें ? लोग कहते हैं कि अगर आत्मा को जानना है तो आत्मा को मानना पड़ेगा। मै यह नहीं कहता। सोया हुआ आदमी क्या मान सकता है ? उसके मानने का मूल्य कितना है ? उसके मानने का अर्थ कितना है ? उसके विश्वास का कितना मतलब है? इसीलिये मै नही कहता कि आत्मा को मानना पड़ेगा। मै कहता हू कि स्वय को जागना पड़ेगा। और जो जागता है वह पाता है कि आत्मा के अतिरिक्त और कुछ भी नही है। लेकिन यह जागरण कहा से शुरू हो ?

लोग आपसे कहेंगे कि भीतर झाके। लेकिन मै आपसे कहता हू—जो बाहर झाकने मे भी समर्थ नही है वह भीतर कैसे झाक सकेगा ? इसलिये जागरण का पहला चरण है—बाहर जो जगत फैला हुआ है उसके प्रति जागरण। वही से शुरुआत हो सकती है। जो बाहर के प्रति जागता है, वह धीरे धीरे भीतर के प्रति भी जागना शुरू हो जाता है। क्यो ? क्योंकि बाहर और भीतर दो चीजें नही हैं—वे एक ही चीज के दो छोर हैं। जो बाहर के प्रति जागना शुरू करेगा, धीरे धीरे उसका जागरण भीतर गहरे मे भी प्रवेश करता चला जायेगा। इसलिये जागरण का पहला सूत्र है—जो हमारे चारो तरफ फैला हुआ जगत है, उसके प्रति जागरण।

आप कहेंगे उसके प्रति तो हम जागे हुए ही है। लेकिन मै आपको कहू उसके प्रति भी हम जागे हुये नहीं है। जो वृक्ष आपके द्वार पर लगा है, उसको कभी आपने सजग होकर देखा है ? उसको कभी आपने आख भरकर देखा है ? कभी आप उसके पास दो क्षण रुके हैं ? जो पत्नी आपके घर मे इतने वर्षों से आपकी सेवा करती आई है, कभी उसकी आखो मे झाका है ? कभी देखा है ? कभी दो क्षण उसके प्रति होश से भरे हैं ? यह बच्चा जो आपके घर मे पैदा हुआ है, कभी उसके पास दो क्षण बैठकर आपने उसका निरीक्षण किया है ? नहीं, बिल्कुल नही। चारो तरफ हमारे जो जिन्दगी फैली हुई है, उसके प्रति हम बिल्कुल सोये हुए से चलते है।

लेकिन यह पता कैसे लगेगा ? यह पता तभी चल सकता है, जब कभी आपकी जिन्दगी मे कोई खतरे आये हो, कभी रास्ते मे अचानक किसी आदमी ने आपके ऊपर छुरा उठा लिया हो। या कभी आप किसी गड्ढे के ऊपर से गुजरे हो जहा गिरने और मर जाने का भय हो। अगर अभी कोई आपकी छाती पर छुरा लेकर खड़ा हो जाये तो आपको पहली दफा पता चलेगा कि

आप अब तक सोये हुये रहे हैं। उस खतरे मे शायद एक क्षण को जाग जाए और देखें कि क्या होता है ? लेकिन साधारणत तो हम सोये-सोये ही चलते हैं। जिन्दगी मे दो चार मौके आते हैं जब जीवन खतरे मे होता है। और तब एक जागरण एक क्षण को भीतर पैदा होता है। पश्चात् हम फिर सो जाते हैं। ऐसा आदमी खोजना कठिन है जिसे जीवन मे ऐसे मौके न आये हो कि जब कुछ क्षणो के लिये उसने जागरण का अनुभव न किया हो।

कभी आपने अपने घर के बाहर चलती हुई सडक को गौर से देखा है ? अगर आप गौर से देखें तो आप पायेंगे कि लोग सोये हुये चले जा रहे हैं। वे सडक पर चल रहे हैं। लेकिन उनका मन कही और चल रहा है। आप लोगो की आखे, चेहरे और कदम देख कर समझ सकेंगे कि जैसे वे नीद मे चले जा रहे हो। उन्हे चारो तरफ का कोई पता नही है। चारो तरफ की एक हल्की सी झलक है, जिसकी वजह से वे कामचलाऊ रूप मे चल लेते हैं। रास्तो पर से निकल जाते हैं, और लोगो से टकराते नही। लेकिन चारो तरफ क्या हो रहा है इसका कोई स्पष्ट बोध नहीं है।

आप कही बैठे हैं और कोई आपको खबर दे कि आपके मकान में आग लग गई है तो आप वहा से उठेंगे और अपने घर की तरफ भागेंगे। तब क्या आपको रास्ते में चलते हुए लोग दिखाई पडेंगे ? क्या आपको कोई नमस्कार करेगा तो सुनाई पडेगा ? सुनाई तो जरूर पडेगा क्योकि कान हैं तो सुनेंगे और दिखाई भी पडेगा क्योकि आखें हैं तो दिखाई भी देगा। लेकिन मै आपको पूछू कि रास्ते में किन लोगो ने नमस्कार किया था ? कौन लोग दिखाई पडे थे ? तो आप कहेगे "मुझे कोई होश न था। मेरे मकान में आग लगी थी। कान सुनते थे, आख देखती थी लेकिन भीतर कोई होश न था।" रास्ते से आप गुजर भी गये बिना टकराये, बिना किसी से उलझे। आप अपने घर भी पहुच गये लेकिन आपको कुछ भी पता नहीं है कि रास्ते मे क्या हुआ ? तो मै कहूगा कि रास्ते पर आप सोये हुये निकले। वैसे तो अभी भी हम रोज सोये हुये ही निकल रहे हैं, नीद की मात्रा भर का भेद है। हमे कुछ पता नही है कि चारो तरफ क्या फैला है। जिन्दगी एक यत्र की भाति चलती जाती है।

जीवन जो चारों तरफ फैला है, वह तो बहुत दूर की बात है। जो हमारे बहुत निकट खडा हुआ जीवन है, उसके प्रति भी हम होश से भरे हुये नही है। और जब तक हम इस बाहर की रेखा पर होश से भरे हुये न हो, तब तक होश भीतर भी नही ले जाया जा सकता।

अंधी हैलन केलर को किसी ने पूछा कि तुम्हें जिन्दगी मे सबसे बडे चमत्कार की, सबसे बडे रहस्य की बात क्या अनुभव हुई ? हैलन केलर ने कहा "एक बडी अद्‌भुत बात मैंने अनुभव की कि लोगो के पास आंखें हैं लेकिन शायद ही कोई उनसे देखता हो ! लोगो के पास कान हैं लेकिन शायद ही कोई उनसे सुनता हो और लोगो के पास हृदय है लेकिन शायद ही कोई उससे अनुभव करता हो !"

और निश्चित ही हमने अपने जीवन के वे सारे द्वार, जिनसे बाहर का जीवन सस्पर्शित होता है और अनुभव होता है, बद कर रखे हैं। जीवन की कोई खबर हमारे भीतर नही आ पाती। अगर ये द्वार खुले हो और जीवन की खबर भीतर आना शुरू हो जाये तो हम एक दूसरे ही मनुष्य के रूप मे परिवर्तित होने लगेगे। अगर कोई व्यक्ति अपने घर के द्वार पर खडे हुये वृक्षो को भी सपूर्ण सजग दृष्टि से देख ले तो उसके जीवन मे कुछ और ही बात शुरू हो जायेगी। लेकिन नहीं, यह हमे कुछ भी दिखाई नही पडता। हमारी आखो पर जैसे नीद का एक परदा है। और उस परदे के पार कुछ भी दिखाई नही पडता।

हम जहा है, वस्तुत वहा हमारा मन मौजूद ही नही है। हमारा मन हर क्षण कही और है। इसीलिये हम हर जगह सोये हुये हैं। जब हम भोजन कर रहे है तब मन दफ्तर मे है। और जब हम दफ्तर मे है तो मन भोजन करता है। जहा हम है वहा हमारा मन नही है। और नीद का यही लक्षण है कि हम जहा है वहा मन न हो।

बाहर के प्रति हमारी ग्राहकता और सवेदनशीलता भी न के बराबर है। हमे बाहर की घटनाये छूती ही नहीं हैं। न बाहर का सौन्दर्य हमे छूता है, न बाहर की कुरूपता हमे छूती है, न बाहर का आनद हमे छूता है, न बाहर का दुख हमे छूता है। न आकाश न नदिया, न तारे, न पहाड हमे कुछ भी नहीं छूता। हम उन सबके पास से अधे और बहरे की तरह गुजर जाते हैं। हमे कुछ दिखाई ही नही पडता कि यह क्या हो रहा है। काश ! हमे दिखाई पड सके ! तो शायद हमारा जीवन दूसरा हो जाये।

बाहर के प्रति जागने के लिये जरूरी है कि अचानक, आकस्मिक रूप से कभी भी दो क्षण के लिये ठहर जायें, और बाहर की दुनिया को देखें कि यह क्या है ? तो शायद आपको भीतर एक लहर दौडती हुई मालूम पडे और लगे कि कोई चीज जो सोई थी वह उठ गई है। रास्ते पर चलते चलते अचानक

रुक जायें और दो क्षण खाली आंख घुमाकर देखे। इस अचानक रुकने से भीतर चलते हुये सपने एक क्षण को ठहर जायेंगे। और तब आप देख सकेंगे कि यह क्या हो रहा है ?

कभी किसी वृक्ष के पास से निकलते हुये एकदम से रुक जाये। आखें उठायें और वृक्ष को देखे ! कभी रात छत पर निकल आयें। आखें उठाये और आकाश को देखें ! सिर्फ देखे और कुछ भी न करें ! इस अचानक रुकने से, इस झटका लगने से, भीतर फर्क पडना शुरु होगा।

जो मै कह रहा हू, सैकडो प्रयोगो के आधार पर कह रहा हू। उसे करके देखें; कभी भोजन करते वक्त एक क्षण को रुक जाये और ख्याल करें कि मै देखू कि क्या हो रहा है ? तो आप पायेंगे कि भीतर जैसे कोई चीज जागी है। एक क्षण को झलक आयेगी और चली जायेगी लेकिन यह झलक दो बाते साफ कर देगी। एक तो यह कि हम सोये हुये हैं। और दूसरी बात यह कि वह जागरण क्या है, उसका बोध भी हो जायेगा।

एक छोटे से गाव मे मै बहुत दिन तक था। उस गाव की नदी के पास छोटी सी पहाडी थी। उस पहाडी पर इतनी खडी और सकरी कगार थी कि उस पर अगर किसी को चलाया जाये तो गिरने के और मर जाने के बहुत मौके थे। जब भी कोई मुझसे पूछता यह जागरूकता क्या है, जिसकी आप बाते करते हैं तो मै उससे कहता कि आओ मेरे साथ नदी पर चलो ! और मै उसे उस पहाडी की कगार पर ले जाता। खुद आगे चलता और उससे कहता, मेरे पीछे आओ ! वह कगार इतनी सकरी थी कि एक पैर भी चूक जाये तो नीचे कोई २०० फुट गहरे गड्ढे मे गिरना पडे।

जब दूसरा व्यक्ति आता तो उसे एक एक कदम सभाल कर रखना पडता। एक एक स्वास सभाल कर लेनी पडती। वहा सोये हुये नही चला जा सकता था। कगार पार करने के बाद मै पूछता "क्या कोई फर्क अनुभव हुआ ? क्या तुम्हे यह अनुभव हुआ कि जब तक तुम उस कगार को पार कर रहे थे, तब तक तुम्हारे भीतर न तो कोई विचार उठा, न कोई सपना चला। क्या तुम्हें पता चला कि तुम जागे हुये थे और सावधान थे।" और वह मुझ से कहता कि इसका मुझे स्पष्ट पता चला। अनुभव हुआ कि जैसे मै बिल्कुल और ही तरह से चल रहा हू, जैसा कि पहले कभी नहीं चला। एक एक कदम होश से भरा हुआ था। हृदय की धडकन और स्वास भी मुझे सुनाई पडती थी। सब तरफ से मै जागा हुआ था क्योंकि एक पैर का चूकना भी मौत में ले जाता। मौत सामने थी।

तो कभी क्षण भर को एकदम रुक जायें अचानक। रास्ते पर चलते हुये, भोजन करते हुये, बिस्तर पर लेटते हुये, सीढ़िया चढ़ते हुये, दिन में दो-चार बार अचानक रुक जायें। एक सेकेन्ड को रुक जायें और चारों तरफ देखें कि क्या है ? आपको भीतर एक फर्क मालूम पड़ेगा जैसे नीद क्षण भर को टूटी हो। एक अतराल पैदा होगा। और उस अतराल मे आनद की अनुभूति होगी। क्योंकि उस जागे हुये क्षण मे न दुख है न अशाति। अगर यह क्षण निरतर अनुभव मे आता चला जाये तो आपके जागने की क्षमता बढती चली जायेगी। दो ही बातें जरूरी हैं। एक तो कभी कभी ठहर कर जाग लेना और दूसरी बात जीवन के प्रति निरतर निरीक्षण (observation) का भाव रखना।

एक वृद्ध वैज्ञानिक अपने बच्चो को समझा रहा था कि निरीक्षण क्या है। उसके बच्चो ने पूछा कि विज्ञान की खोज मे सबसे बडी बात क्या है ? उस वृद्ध वैज्ञानिक ने कहा "दो ही बाते जरूरी है। एक तो साहस (Courage) और दूसरा निरीक्षण (Observation)।" उन बच्चो ने कहा कि हमे ठीक से समझा दे। तो उस वृद्ध वैज्ञानिक ने एक प्याली मे नमक का बहुत कडुआ, बहुत बेस्वाद घोल बनाया। और बच्चो से कहा, "यह नमक का घोल है। बहुत कडुआ और बहुत बेस्वाद है। इसे जीभ पर रखोगे तो सारा मुह तिक्त और कडुआ हो जायेगा। हो सकता है उल्टी हो जाये लेकिन इसकी जाच करना है इसे पहचानना है। तो मै अपनी अगुली इसमे डुबोऊगा और उसे जीभ पर रखकर चखूगा। तुम ठीक से निरीक्षण करते रहना कि किस भाति मै यह कर रहा हू। तुम्हें भी फिर अपनी अगुली डुबोनी होगी और जीभ पर रखनी होगी। ठीक से निरीक्षण करना ताकि तुम भी वैसा ही कर सको जैसा मैने किया है।"

उन बच्चो ने गौर से देखा। वे टकटकी लगाये देखते रहे। निरीक्षण करना जरूरी था ! क्योंकि उनको भी वैसा ही करना था। उन्होने देखा कि बूढे ने घोल मे अपनी अगुली डुबोई और फिर अगुली को जीभ पर रखा। लेकिन जैसी अपेक्षा थी वैसा कुछ भी नहीं हुआ। न उसके चेहरे पर परेशानी के कोई भाव आये, न उसे उल्टी हुई। इसके बाद वह प्याली सब बच्चो के बीच घुमाई गई। हर बच्चे ने उसमे अपनी अगुली डुबोई और जीभ पर रखी। लेकिन रखते ही जैसे जहर मुह मे पहुच गया हो। वे सारे बच्चे थूकने लगे और कुछ को तो उल्टी भी हो गई। वे सब घबरा गये और उनकी आखो मे आसू भर आये।

जब वे सारे बच्चे प्रयोग कर चुके तो वृद्ध वैज्ञानिक ने कहा "मेरे बच्चो ! जहा तक साहस का सवाल है, तुम सब पूरे अक पाने मे सफल हो

गये । तुम सब साहसी हो। लेकिन जहा तक निरीक्षण का सवाल है, तुम सब असफल हो गये। मैने जो अगुली घोल मे डुबोई थी, वही जीभ पर नही रखी, यह तुम मे से किसी ने भी नहीं देखा। तुमने साहस तो दिखाया लेकिन निरीक्षण तुम नही कर पाये।"

जो उस वृद्ध वैज्ञानिक ने उन बच्चो के विज्ञान के सबध मे समझाया था, वही मै आपको जीवन के सबध मे कहना चाहता हू । हम मे से बहुत से लोग साहस तो कर पाते हैं, लेकिन निरीक्षण नही कर पाते। और बिना निरीक्षण के साहस खतरनाक है। सोया हुआ आदमी साहसी हो जाये तो बहुत खतरा है। उससे दुनिया मे सिवाय बुराई के और कुछ भी नही हो सकता। हम सब ने दुनिया मे साहस तो बहुत किया है, किन्तु निरीक्षण बिल्कुल भी नही किया।

निरीक्षण से ही हमे अपनी यात्रिकता का पता चल सकता है। और यह पता चल जाये तो यात्रिकता का घेरा टूटना शुरू हो जाता है। क्योकि साथ ही यह भी बोध मे आना शुरू होता है कि मै यात्रिकता के बीच हू, लेकिन स्वय यत्र नहीं हू और अगर यह अहसास हो जाये कि सारी यात्रिकता के बीच मेरी चेतना (Consciousness) अलग ही है, तो फिर कुछ हो सकता है। तभी मै इस यत्र के साथ कुछ कर सकता हू। क्योकि तब मै इससे अलग हू और इससे बाहर हू। किसी चीज को जानते ही हम उससे अलग हो जाते है। देखने वाला देखे गये से अलग हो जाता है।

तो इस निरीक्षण से आपको अपने ही ऊपर स्वामित्व प्राप्त होगा। और चारो तरफ फैले हुए जीवन और उसकी क्रियाओ का बोध होना शुरू होगा। यह हो सके तभी आप ठीक अर्थों मे एक जागे हुए मनुष्य हो सकते है, उसके पहले नही। और यह हो जाये तो जीवन से सारी चिन्ता, अशाति और पीडा विलीन हो जायेगी, क्योकि वह सोये हुए होने के कारण ही है। यत्र से ऊपर उठते ही जीवन मे परमात्मा, शाति, सत्य और सौन्दर्य का जन्म हो जाता है।

तेरह : प्रेम है द्वार प्रभु का

प्रेम है द्वार प्रभु का

मनुष्य की आत्मा, मनुष्य के प्राण निरन्तर ही परमात्मा को पाने के लिए आतुर हैं। लेकिन किस परमात्मा को, कैसे परमात्मा को ? उसका कोई अनुभव, उसका कोई आकार, उसकी कोई दिशा मनुष्य को ज्ञात नही है। सिर्फ एक छोटा सा अनुभव है जो मनुष्य को ज्ञात है और जो परमात्मा की झलक दे सकता है। वह अनुभव प्रेम का अनुभव है। और जिसके जीवन मे प्रेम की कोई झलक नही है उसके जीवन मे परमात्मा के आने की भी कोई सम्भावना नही है। न तो प्रार्थनाए परमात्मा तक पहुचा सकती हैं, न धर्मशास्त्र पहुचा सकते हैं, न मदिर, मस्जिद पहुचा सकते हैं, न कोई सगठन हिन्दु और मुसलमानो के, ईसाईयो के, पारसियो के पहुचा सकते है।

एक ही बात परमात्मा तक पहुचा सकती है और वह यह है कि प्राणो मे प्रेम की ज्योति का जन्म हो जाये। मदिर और मस्जिद तो प्रेम की ज्योति को बुझाने का काम करते रहे हैं। जिन्हे हम धर्मगुरु कहते है, वे मनुष्य को मनुष्य से तोडने के लिए जहर फैलाते रहे हैं। जिन्हे हम धर्मशास्त्र कहते हैं, वे घृणा और हिंसा के आधार और माध्यम बन गए है। और जो परमात्मा तक पहुचा सकता था वह प्रेम अत्यत उपेक्षित होकर जीवन के रास्ते के किनारे अधेरे मे कही पडा रह गया है। इसलिए पाच हजार वर्षों से आदमी प्रार्थनाए कर रहा है, पाच हजार वर्षों से आदमी भजन पूजन कर रहा है, पाच हजार वर्षों से मस्जिदो और मदिरों की मूर्तियो के सामने सिर टेक रहा है, लेकिन परमात्मा की कोई झलक मनुष्यता को उपलब्ध नहीं हो सकी, परमात्मा की कोई किरण मनुष्य के भीतर अवतरित नही हो सकी। कोरी प्रार्थनाए हाथ मे रह गई हैं और आदमी रोज रोज नीचे गिरता गया है, और रोज रोज अधेरे मे भटकता गया है। आनद के केवल सपने हाथ मे रह गये हैं, सच्चाइया अत्यन्त दुखपूर्ण होती चली गयी हैं।

और आज तो आदमी करीब करीब ऐसी जगह खडा हो गया है जहा उसे यह ख्याल भी लाना असम्भव होता जा रहा है कि परमात्मा भी हो सकता है। क्या आपने कभी सोचा है कि यह घटना कैसे घट गई है ? क्या नास्तिक इसके लिए जिम्मेदार हैं ? या कि लोगो की आकाक्षायें और अभीप्साए ही परमात्मा

की दिशा की तरफ जाना बन्द हो गई है ? या कि वैज्ञानिक और भौतिकवादी लोगो ने परमात्मा के द्वार बन्द कर दिए हैं ? नहीं, परमात्मा के द्वार इसलिए बन्द हो गए हैं कि परमात्मा का एक ही द्वार था प्रेम, और उस प्रेम की तरफ हमारा कोई ध्यान ही नही रहा है। और भी अजीब, कठिन और आश्चर्य की बात यह हो गई है कि तथाकथित धार्मिक लोगो ने मिल-जुलकर प्रेम की हत्या कर दी और मनुष्य को जीवन मे इस भाति सुव्यवस्थित करने की कोशिश की कि उसमे प्रेम की किरण के जन्म की कोई सम्भावना ही न रह जाय।

प्रेम के अतिरिक्त मुझे कोई रास्ता नही दिखाई पडता है जो प्रभु तक पहुचा सकता हो। और इतने लोग जो वचित हो गए हैं प्रभु तक पहुचने से, वह इसीलिए कि वे प्रेम तक पहुचने से ही वचित रह गए है। समाज की पूरी व्यवस्था अप्रेम की व्यवस्था है। परिवार का पूरा का पूरा केन्द्र अप्रेम का केन्द्र है। बच्चे के गर्भाधान (Conception) से लेकर उसकी मृत्यु तक की सारी यात्रा अप्रेम की यात्रा है। और हम इसी समाज को, इसी परिवार को, इसी गृहस्थी को सम्मान दिये जाते हैं, अदब दिए जाते हैं, शोरगुल मचाए चले जाते हैं कि बडा पवित्र परिवार है, बडा पवित्र समाज है, बडा पवित्र जीवन है। और यही परिवार, यही समाज और यही सभ्यता जिसके गुणगान करते हम थकते नही हैं मनुष्य को प्रेम से रोकने का कारण बन रही है। इस बात को थोडा समझ लेना जरूरी होगा।

मनुष्यता के विकास मे कही कोई बुनियादी भूल हो गई है। यह सवाल नही है कि एकाध आदमी ईश्वर को पा ले, कोई कृष्ण, कोई राम, कोई बुद्ध कोई क्राइस्ट ईश्वर को उपलब्ध हो जाए, यह कोई सवाल नही है। अरबो, खरबो लोगो मे अगर एक आदमी मे ज्योति उतर भी आती हो तो यह कोई विचार करने की बात नही है। इसमे तो कोई हिसाब रखने की जरूरत भी नहीं है। एक माली एक बगीचा लगाता है। उसने दस करोड पौधे उस बगीचे मे लगाये हैं और एक पौधे में एक अच्छा सा फूल आ जाय तो माली की प्रशसा करने कौन जायगा ? कौन कहेगा कि माली तू बहुत कुशल है कि तूने जो बगीचा लगाया है, वह बहुत अद्भुत है ? देख, दस करोड वृक्षो मे एक फूल खिल गया है! नहीं, हम कहेंगे यह माली की कुशलता का सबूत नही है। माली की भूल चूक से कोई खिल गया होगा, अन्यथा बाकी सारे पेड खबर दे रहे हैं कि माली कितना कुशल है! यह माली के बावजूद खिल गया होगा।

माली ने कोशिश की होगी कि न खिल पाये क्योकि सारे पौधे तो खबर दे रहे हैं कि माली के फूल कैसे खिले हुए हैं !

खरबो लोगो के बीच कोई एकाध आदमी के जीवन मे ज्योति जल जाती है और हम उसी का शोरगुल मचाते रहते हैं हजारो सालो तक ! पूजा करते रहते हैं, उसी के मदिर बनाते रहते हैं, उसी का गुणगान करते रहते हैं। अब तक हम रामलीला कर रहे हैं, अब तक हम बुद्ध की जयती मना रहे हैं। अब तक महावीर की पूजा कर रहे हैं, अब तक क्राइस्ट के सामने घुटने टेके बैठे हुए हैं। यह किस बात का सबूत है ? यह इस बात का सबूत है कि पाच हजार साल मे पाच-छ आदमियो के अतिरिक्त आदमियत के जीवन मे परमात्मा का कोई सम्पर्क नही हो सका। नही तो कभी का हम भूल गये होते राम को, कभी के भूल गये होते बुद्ध को, कभी का हम भूल गये होते महावीर को। महावीर को हुए ढाई हजार साल हो गए। ढाई हजार साल मे कोई आदमी नही हुआ कि महावीर को हम भूल सकते। महावीर को अभी तक याद रखना पडा है। वह एक फूल खिला था, वह अब तक हमे याद रखना पडता है।

यह कोई गौरव की बात नहीं है कि हमे अब तक स्मृति है बुद्ध की, महावीर की, राम की, मुहम्मद की, क्राइस्ट की या जरथुष्ट्र की। यह इस बात का सबूत है कि और आदमी होते ही नही कि उनको हम भुला सके। बस दो-चार इने गिने नाम अटके रह गए हैं मनुष्य जाति की स्मृति मे। और उन नामो के साथ भी हमने क्या किया है सिवाय उपद्रव के, हिंसा के। और उनकी पूजा करने वाले लोगो ने क्या किया है सिवाय आदमी के जीवन को नरक बनाने के। मदिरो और मस्जिदो के पुजारियो और पूजको ने जमीन पर जितनी हत्याए की हैं, और जितना खून बहाया है और जीवन का जितना अहित किया है उतना किसी ने भी नहीं किया है। जरूर कहीं कोई बुनियादी भूल हो गई है, नहीं तो इतने पौधे लगें और फूल न आए, यह बड़े आश्चर्य की बात है। कही जरूर भूल हो गई है।

मेरी दृष्टि मे प्रेम अब तक मनुष्य के जीवन का केन्द्र नही बनाया जा सका, इसीलिए भूल हो गई है। और प्रेम केन्द्र बनेगा भी नहीं क्योंकि जिन चीजों के कारण प्रेम जीवन का केन्द्र नहीं बन रहा है, हम उन्ही चीजो का शोर गुल मचा रहे हैं, आदर कर रहे हैं, सम्मान कर रहे हैं और उन्हीं चीजो को बढ़ावा दे रहे, हैं। मनुष्य की जन्म से लेकर मृत्यु तक की यात्रा ही गलत हो गयी है। इस पर पुनर्विचार करना जरूरी है, अन्यथा सिर्फ हम कामनाए कर सकते हैं और कुछ भी उपलब्ध नहीं हो सकता है।

क्या आपको कभी यह बात ख्याल मे आयी है कि आपका परिवार प्रेम का शत्रु है ? क्या कभी आपको यह बात ख्याल मे आयी है कि आपका समाज प्रेम का शत्रु है ? क्या आपको यह बात कभी ख्याल मे आयी है कि मनु से लेकर आज तक के सभी नीतिकार प्रेम के विरोधी है ? जीवन का केन्द्र है परिवार और परिवार विवाह पर खडा किया गया है जबकि परिवार प्रेम पर खडा होना चाहिए था। भूल हो गयी है, आदमी के सारे पारिवारिक विकास की भूल हो गयी है। परिवार निर्मित होना चाहिए प्रेम के केन्द्र पर और परिवार निर्मित किया जाता है विवाह के केन्द्र पर। इसमे ज्यादा झूठी और गलत बात नही हो सकती है ।

प्रेम और विवाह का क्या सम्बन्ध है? प्रेम से तो विवाह निकल सकता है। लेकिन विवाह से प्रेम नही निकलता और न ही निकल सकता है। इस बात को थोडा समझ लें तो हम आगे बढ़ सकें। प्रेम परमात्मा की व्यवस्था है और विवाह आदमी की व्यवस्था है। विवाह सामाजिक सस्था है, प्रेम प्रकृति का दान है। प्रेम तो प्राणो के किसी कोने मे अनजाने पैदा होता है। लेकिन विवाह ? विवाह, समाज, कानून नियमित करता है, बनाता है। विवाह आदमी की ईजाद है, और प्रेम ? प्रेम परमात्मा का दान है। हमने सारे परिवार को विवाह के केन्द्र पर खडा कर दिया है, प्रेम के केन्द्र पर नही। हमने यह मान रखा है कि विवाह कर देने से दो व्यक्ति प्रेम की दुनिया मे उतर जायेंगे। अद्भुत झूठी बात है यह, और पाच हजार वर्षों मे भी हमको इसका ख्याल नहीं आ सका है। हम अद्भुत अधे हैं। दो-आदमियो के हाथ बाध देने से प्रेम के पैदा हो जाने की कोई जरूरत नही है, कोई अनिवार्यता नहीं है। बल्कि सच्चाई यह है कि जो लोग बधा हुआ अनुभव करते हैं, वे आपस मे प्रेम कभी भी नही कर सकते ।

प्रेम का जन्म होता है स्वतन्त्रता मे। प्रेम का जन्म होता है स्वतन्त्रता की भूमि मे जहा कोई बन्धन नही, जहा कोई जबरदस्ती नही, जहा कोई कानून नही। प्रेम तो व्यक्ति का अपना आत्मदान है, बन्धन नहीं, जबरदस्ती नही। उसके पीछे कोई विवशता, कोई मजबूरी नही है। किन्तु हम अविवाहित स्त्री या पुरुष के मन मे, युवक और युवती के मन मे उस प्रेम की पहली किरण का गला घोटकर हत्या कर देते हैं, फिर हम कहते हैं कि विवाह से प्रेम पैदा होना चाहिए, और फिर जो प्रेम पैदा होता है, वह बिल्कुल पैदा किया, (cultivated) होता है, कोशिश से लाया गया होता है। वह प्रेम वास्तविक नही होता, वह

प्रेम सहजस्फूर्त (Spontaneous) नहीं होता है। वह प्रेम प्राणो से सहज उठता नहीं है, फैलता नहीं है। और जिसे हम विवाह से उत्पन्न प्रेम कहते हैं वह प्रेम केवल सहवास के कारण पैदा हुआ मोह होता है। प्राणो की झलक और प्राणो का आकर्षण और प्राणो की विद्युत वहां अनुपस्थित होती है। और इस तरह से परिवार बनता है, और इस विवाह से पैदा हुआ परिवार और परिवार की पवित्रता की कथाओ का कोई हिसाब नही है। और परिवार की प्रशसाओ, स्तुतियो की कोई गणना नही है। और यही परिवार सबसे कुरूप सस्था साबित हुई है।

पूरी मनुष्य जाति को विकृत (Pervert) करने मे, अधार्मिक करने मे, हिंसक बनाने मे प्रेम से शून्य परिवार सबसे बडी सस्था साबित हुई है। प्रेम से शून्य परिवार से ज्यादा असुन्दर और कुरूप (Ugly) कुछ भी नही है, वही अधर्म का अड्डा बना हुआ है। जब हम एक युवक और युवती को विवाह मे बाधते हैं, बिना प्रेम के, बिना आन्तरिक परिचय के, बिना एक दूसरे के प्राणो के सगीत के, तब हम केवल पडित के मत्रो मे और वेदी की पूजा मे और थोथे उपक्रम मे उनको विवाह से बाध देते हैं। फिर आशा करते हैं उनको साथ छोड के कि उनके जीवन मे प्रेम पैदा हो जायगा! प्रेम तो पैदा नही होता है, सिर्फ उनके सम्बन्ध कामुक (Sexual) होते है। क्योकि प्रेम पैदा नही किया जा सकता है। हा, प्रेम पैदा हो जाय तो व्यक्ति साथ जुडकर परिवार निर्माण जरूर कर सकता है। दो व्यक्तियो को परिवार के निर्माण के लिए जोड दिया जाये और फिर आशा की जाये कि प्रेम पैदा हो जाये, यह नहीं हो सकता है। और जब प्रेम पैदा नही होता है तो क्या परिणाम होते हैं आपको पता है?

एक एक परिवार मे कलह है। जिसको हम गृहस्थी कहते है, वह सघर्ष, कलह, द्वेष, ईर्ष्या और चौबीस घटे उपद्रव का अड्डा बना हुआ है। लेकिन न मालूम हम कैसे अधे हैं कि इसे देखते भी नही हैं। बाहर जब हम निकलते है तो मुस्कराते हुए निकलते है। सब घर के आसू पोछकर बाहर जाते हैं, पत्नी भी हसती हुई मालूम पडती है, पति भी हसता हुआ मालूम पडता है। लेकिन ये चेहरे झूठे हैं। ये दूसरो को दिखाई पडने वाले चेहरे हैं। घर के भीतर के चेहरे बहुत आसुओ से भरे हुए हैं। चौबीस घटे कलह और सघर्ष मे जीवन बीत रहा है। फिर इस कलह और सघर्ष के स्वाभाविक परिणाम भी होगे ही।

प्रेम के बिना किसी व्यक्ति के जीवन मे आत्मतृप्ति उपलब्ध नहीं होती। प्रेम जो है, वह व्यक्तित्व की तृप्ति का चरम बिन्दु है। और जब प्रेम नही मिलता है तो व्यक्तित्व हमेशा अतृप्त, हमेशा अधूरा, बेचैन, तडपता हुआ, माग करता है कि मुझे पूर्ति चाहिए। हमेशा बेचैन, तडपता हुआ रह जाता है। यह तडपता हुआ व्यक्तित्व समाज मे अनाचार पैदा करता है क्योकि तडपता हुआ व्यक्तित्व प्रेम को खोजने निकलता है। विवाह से प्रेम नहीं मिलता तो वह विवाह के अतिरिक्त प्रेम को खोजने की कोशिश करता है। वेश्याए पैदा होती हैं विवाह के कारण। विवाह है मूल, विवाह है जड, वेश्याओ के पैदा करने की। और अब तक तो स्त्री वेश्याए थी और अब तो सभ्य मुल्को मे पुरुष वेश्याए (Male prostitute) भी उपलब्ध हैं।

वेश्याए पैदा होगी क्योकि परिवार मे जो प्रेम उपलब्ध होना चाहिए था वह नही उपलब्ध हो रहा है। आदमी दूसरे घरो मे झाक रहा है उस प्रेम के लिए। वेश्याए होगी, और अगर वेश्याए रोक दी जायेगी तो दूसरे परिवारो मे पीछे के द्वारो से प्रेम के रास्ते निर्मित होगे। इसीलिए तो सारे समाज ने यह तय कर लिया है कि कुछ वेश्याए निश्चित कर दो ताकि परिवारो का आचरण सुरक्षित रहे। कुछ स्त्रियो को पीडा मे डाल दो ताकि बाकी स्त्रिया पतिव्रता बनी रहे और सती-सावित्री बनी रहे। लेकिन जो समाज ऐसे अनैतिक उपाय खोजते हैं, जिस समाज मे वेश्याओ जैसी अनैतिक सस्थाए ईजाद करनी पडती हैं, जान लेना चाहिए कि वह पूरा समाज बुनियादी रूप से अनैतिक होगा। अन्यथा ऐसी अनैतिक ईजाद की आवश्यकता नही थी। वेश्या पैदा होती है, अनाचार पैदा होता है व्यभिचार पैदा होता है, तलाक पैदा होते हैं। यदि तलाक न होता, न व्यभिचार होता, और न अनाचार होता तो घर एक चौबीस घटे का मानसिक तनाव (Anxiety) बन जाता।

सारी दुनिया मे पागलो की सख्या बढती गई है। ये पागल परिवार के भीतर पैदा होते हैं। सारी दुनिया मे स्त्रिया हिस्टीरिया (Hysteria) और न्यूरोसिस (Neurosis) से पीडित हो रही हैं। विक्षिप्त, उन्माद से भरती चली जा रही हैं। बेहोश होती है, गिरती हैं, चिल्लाती हैं। पुरुष पागल होते चले जा रहे हैं। एक घटे मे जमीन पर एक हजार आत्महत्याए हो जाती हैं और हम चिल्लाए जा रहे हैं—समाज हमारा बहुत महान् है, ऋषि मुनियो ने निर्मित किया है। और हम चिल्लाए जा रहे हैं कि बहुत सोच समझकर समाज के आधार रखे गए हैं। कैसे ऋषि-मुनि और कैसे ये आधार? अभी

एक घंटा मैं बोलूंगा तो इस बीच एक हजार आदमी कही छुरा मार लेंगे, कहीं ट्रेन के नीचे लेट जाएंगे, कोई जहर पी लेगा। उन एक हजार लोगों की जिन्दगी कैसी होगी, जो हर घंटे मरने को तैयार हो जाते हैं ? और यह मत सोचना कि वे जो नहीं मरते है बहुत सुखमय हैं। कुल जमा कारण यह है कि वे मरने की हिम्मत नहीं जुटा पाते। सुख का कोई भी सवाल नहीं है, असल मे मरने की हिम्मत नहीं जुटा पाते हैं तो जिये चले जाते हैं, धक्के खाये चले जाते हैं। सोचते हैं आज गलत है, तो कल ठीक हो जायेगा। परसो सब ठीक हो जायेगा। लेकिन मस्तिष्क उनके रुग्ण होते चले जाते हैं।

प्रेम के अतिरिक्त कोई आदमी कभी स्वस्थ नही हो सकता है। प्रेम जीवन मे न हो तो मस्तिष्क रुग्ण होगा, चिंता से भरेगा, तनाव से भरेगा। आदमी शराब पियेगा, नशा करेगा, कहीं जाकर अपने को भूल जाना चाहेगा। दुनिया मे बढ़ती हुई शराब शराबियो के कारण नही है। परिवार ने उस हालत मे ला दिया है लोगो को कि बिना बेहोश हुए थोडी देर के लिए भी रास्ता मिलना मुश्किल हो गया है। तो लोग शराब पीते चले जाएगे, लोग बेहोश पडे रहेंगे, लोग हत्या करेंगे, लोग पागल होते जाएगे। अमरीका मे प्रतिदिन बीस लाख आदमी अपना मानसिक इलाज करवा रहे हैं, और ये सरकारी आकडे हैं, और आप तो भली भाति जानते हैं कि सरकारी आकडे कितने सही होते हैं ! बीस लाख सरकार कहती है तो कितने लोग इलाज करा रहे होगें, यह कहना मुश्किल है। और जो अमरीका की हालत है, वह सारी दुनिया की हालत है।

आधुनिक युग के मनस्तत्वविद् यह कहते हैं कि करीब करीब चार आदमियो मे से तीन आदमी एबनार्मल हो गये हैं, रुग्ण हो गये हैं, स्वस्थ नही हैं। जिस समाज मे चार आदमियो मे तीन आदमी मानसिक रूप से रुग्ण हो जाते हो उस समाज के आधारो को, उसकी बुनियादो को फिर से सोच लेना जरूरी है, नही तो कल चार आदमी भी रुग्ण हो जायेंगे और फिर सोचने वाले भी शेष नही रह जायेंगे। फिर बहुत मुश्किल हो जायगी। लेकिन होता ऐसा है कि जब एक ही बीमारी से सारे लोग ग्रसित हो जाते हैं तो उस बीमारी का पता नही चलता। हम सब एक से रुग्ण, बीमार और परेशान हैं, तो हमे पता बिल्कुल नही चलता है। सभी ऐसे हैं इसीलिए स्वस्थ मालूम पडते हैं। जब सभी ऐसे हैं तो ठीक है। ऐसे दुनिया चलती है, यही जीवन है। जब ऐसी पीडा दिखायी देती है तो हम ऋषि मुनियो के वचन दोहराते हैं कि वह तो ऋषि मुनियो ने पहले ही कह दिया है कि जीवन दुख है।

जीवन दुख नहीं है, यह दुख हम बनाये हुए हैं। वह तो पहले ही ऋषि मुनियो ने कह दिया है कि जीवन तो असार है, इससे छुटकारा पाना चाहिए। जीवन असार नही है, यह असार हमने बनाया हुआ है और जीवन से छुटकारा पाने की सब बाते दो कौडी की हैं। क्योकि जो आदमी जीवन से छुटकारा पाने की कोशिश करता है वह प्रभु को कभी उपलब्ध नही हो सकता है। क्योकि जीवन प्रभु है, जीवन परमात्मा है, जीवन मे परमात्मा ही तो प्रकट हो रहा है। उससे जो दूर भागेगा वह परमात्मा से ही दूर चला जायेगा।

जब एक सी बीमारी पकडती है तो किसी को पता नही चलता है। पूरी आदमियत जड से रुग्ण है इसलिए पता नही चलता तो दूसरी तरकीबे खोजते हैं इलाज की। मूल कारण (Causality) जो है, बुनियादी कारण जो है उसको सोचते नहीं, ऊपरी इलाज सोचते हैं। ऊपरी इलाज भी क्या सोचते हैं? एक आदमी शराब पीने लगता है जीवन से घबरा कर। एक आदमी जाकर नृत्य देखने लगता है, वह वेश्या के घर बैठ जाता है जीवन से घबराकर। दूसरा आदमी सिनेमा मे बैठ जाता है। तीसरा आदमी चुनाव लडने लगता है ताकि भूल जाय सबको। चौथा आदमी मदिर मे जाकर भजन कीर्तन करने लगता है। यह भजन कीर्तन करने वाला भी खुद के जीवन को भूलने की कोशिश कर रहा है। यह कोई परमात्मा को पाने का रास्ता नही है। परमात्मा तो जीवन मे प्रवेश मे उपलब्ध होता है, जीवन से भागने से नही। यह सब पलायन (Escape) हैं। एक आदमी मदिर मे भजन कीर्तन कर रहा है, हिल डुल रहा है, हम कहते हैं कि भक्त जी बहुत आनदित हो रहे हैं। भक्त जी आनदित नही हो रहे है भक्त जी किसी दुख से भागे हुए हैं, वहा भुलाने की कोशिश कर रहे हैं। शराब का ही यह दूसरा रूप है। यह आध्यात्मिक नशा (spiritual intoxication) है। यह आध्यात्म के नाम से नयी शराबे है जो सारी दुनिया मे चलती हैं।

इन लोगो ने जीवन से भाग कर जिन्दगी को बदलने नही दिया आज तक। जिन्दगी वही की वही, दुख से भरी हुई है। और जब भी कोई दुखी हो जाता है वह भी इनके पीछे चला जाता है कि हमको भी गुरुमत्र दे दें, हमारा भी कान फूक दें, कि हम भी इसी तरह सुखी हो जाये, जैसे आप हो गये हैं। लेकिन यह जिन्दगी क्यो दुख पैदा कर रही है इसको देखने के लिए, इसके विज्ञान को खोजने के लिए कोई भी नही जाता है।

मेरी दृष्टि मे जहा जीवन की शुरुआत होती है वहीं कुछ गडबड हो

गयी है। और वह गड़बड़ यह हो गयी है कि हमने मनुष्य जाति पर प्रेम की जगह विवाह को थोप दिया है। फिर विवाह होगा और ये सारे रूप पैदा होंगे। जब दो व्यक्ति एक दूसरे से बंध जाते हैं और उनके जीवन मे कोई शाति और तृप्ति नही मिलती तो वे दोनो एक दूसरे पर क्रुद्ध हो जाते हैं। वे कहते हैं, तेरे कारण मुझे शाति नहीं मिल पा रही है। और वे एक दूसरे को सताना शुरू करते हैं, परेशान करना शुरू करते हैं और इसी हैरानी, इसी परेशानी, इसी कलह के बीच बच्चो का जन्म होता है। ये बच्चे पैदाइश से ही विकृत (Perverted) हो जाते हैं।

मेरी समझ मे, मेरी दृष्टि मे जिस दिन आदमी पूरी तरह आदमी के जन्म-विज्ञान को विकसित करेगा तो शायद आपको पता लगे कि दुनिया मे बुद्ध, कृष्ण और क्राइस्ट जैसे लोग शायद इसीलिए पैदा हो सके हैं कि उनके मा बाप ने जिस क्षण मे सभोग किया था, उस समय वे अपूर्व प्रेम से सयुक्त हुए थे। प्रेम के क्षण मे गर्भस्थापन (Conception) हुआ था। दुनिया मे जो थोडे से अद्भुत लोग हुए—शात, आनदित, प्रभु को उपलब्ध, वे वही लोग है जिनका पहला अणु प्रेम की दीक्षा मे उत्पन्न हुआ था, जिनका पहला जीवन अणु प्रेम मे सराबोर पैदा हुआ था।

पति और पत्नी कलह मे भरे हुए हैं, क्रोध से, ईर्ष्या से, एक दूसरे के प्रति सघर्ष से अहकार से, एक दूसरे की छाती पर चढे हुए हैं, एक दूसरे के मालिक बनना चाह रहे है। इसी बीच उनके बच्चे पैदा हो रहे हैं। ये बच्चे किसी आध्यात्मिक जीवन मे कैसे प्रवेश पायेंगे ?

मैंने सुना है, एक घर मे एक मा ने अपने बेटे और छोटी बेटी को —वे दोनो बेटे और बेटी बाहर मैदान मे लड रहे थे, एक दूसरे पर घूसेबाजी कर रहे थे—कहा कि अरे यह क्या करते हो। कितनी बार मैंने समझाया कि आपस मे लडा मत करो, खेला करो। तो उस लडके ने कहा हम लड नहीं रहे हैं, खेल ही रहे हैं, मम्मी डैडी का खेल कर रहे हैं। जो घर मे रोज हो रहा है वह हम दोहरा रहे हैं।

यह खेल जन्म के क्षण से शुरू हो जाता है। इस सम्बन्ध मे दो चार बातें समझ लेनी बहुत जरूरी हैं।

पहली बात मेरी दृष्टि मे, जब एक स्त्री और पुरुष परिपूर्ण प्रेम के आधार पर मिलते हैं, उनका सम्भोग होता है, उनका मिलन होता है तो उस परिपूर्ण प्रेम के तल पर उनके शरीर ही नहीं मिलते है, उनका मनस भी मिलता है

उनकी आत्मा भी मिलती है। वे एक लयपूर्ण संगीत में डूब जाते हैं। वे दोनो विलीन हो जाते हैं और शायद, शायद परमात्मा ही शेष रह जाता है उस क्षण मे। और उस क्षण जिस बच्चे का गर्भाधान होता है वह बच्चा परमात्मा को उपलब्ध हो सकता है, क्योकि प्रेम के क्षण का पहला कदम उसके जीवन मे उठा लिया गया है। लेकिन जो मा बाप, पति पत्नी आपस मे द्वेष से भरे हैं, घृणा से भरे हैं, क्रोध से भरे है, कलह से भरे हैं वे भी मिलते हैं, लेकिन उनके शरीर ही मिलते हैं, उनकी आत्मा और प्राण नही मिलते और उनके शरीर के ऊपरी मिलन से जो बच्चे पैदा होते है वे अगर शरीरवादी (materialist) पैदा होते हो, बीमार और रुग्ण पैदा होते हो, और उनके जीवन मे अगर कोई आत्मा की प्यास पैदा न होती हो, तो दोष उन बच्चो को मत देना। बहुत दिया जा चुका है यह दोष। दोष देना उन मा बाप को जिनकी छाप लेकर वह जन्मते हैं जिनका सब अपराध और जिनकी सब बीमारिया लेकर वे जन्मते हैं और जिनका सब क्रोध और घृणा लेकर वे जन्मते है। जन्म के साथ ही उनका पौधा विकृत हो जाता है। फिर इनको पिलाओ गीता, इनको समझाओ कुरान इनसे कहो कि प्रार्थनाए करो—सब झूठी हो जाती है, क्योकि प्रेम का बीज ही शुरू नही हो सका तो प्रार्थनाये कैसे शुरू हो सकती है?

जब एक स्त्री और पुरुष परिपूर्ण प्रेम और आनन्द मे मिलते हैं तो वह मिलन एक आध्यात्मिक कृत्य (spiritual act) हो जाता है। फिर उसका काम (sex) से कोई सम्बन्ध नहीं है। वह मिलन फिर कामुक नही है, वह मिलन शारीरिक नही है, वह मिलन इतना अनूठा है, इतना महत्वपूर्ण, जितना किसी योगी की समाधि। उतना ही महत्वपूर्ण है वह मिलन जब दो आत्माए परिपूर्ण प्रेम से संयुक्त होती हैं, और उतना ही पवित्र है वह कृत्य, क्योकि परमात्मा उसी कृत्य मे जीवन को जन्म देता है, और जीवन को गति देता है। लेकिन तथाकथित धार्मिक लोगो ने, तथाकथित झूठे समाज ने, तथाकथित झूठे परिवार ने यही समझाने की कोशिश की है कि सेक्स, काम, यौन अपवित्र है, घृणित है। यह पागलपन की बातें है। अगर यौन घृणित और अपवित्र है तो सारा जीवन अपवित्र हो गया और घृणित हो गया। अगर सेक्स पाप है तो पूरा जीवन पाप हो गया, पूरा जीवन निन्दित (condemned) हो गया। और अगर जीवन ही पूरा निन्दित हो जायेगा तो कैसे प्रसन्न लोग उत्पन्न होगे, कैसे सच्चे लोग उपलब्ध होगे? जब जीवन ही पूरा का पूरा पाप है तो सारी रात अधेरी हो गई। अब इसमे प्रकाश की किरण कही से लानी पड़ेगी।

मैं आपको कहना चाहता हूं एक नई मनुष्यता के जन्म के लिए सेक्स की पवित्रता, सेक्स की धार्मिकता स्वीकार करनी अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि जीवन उससे ही जन्मता है। परमात्मा उसी कृत्य से जीवन को जन्माता है। और परमात्मा ने जिसको जीवन की शुरुआत बनाया है वह कदापि पाप नहीं हो सकता है। लेकिन आदमी ने जरूर उसे पाप कर दिया है क्योंकि जो चीज प्रेम से रहित है वह पाप हो ही जाती है। जो चीज प्रेम से शून्य हो जाती है वह अपवित्र हो जाती है। आदमी की जिन्दगी में प्रेम नहीं रहा इसलिए केवल कामुकता (sexuality) रह गई है, सिर्फ यौन रह गया है। वह यौन पाप हो गया है। वह यौन का पाप नहीं है वह हमारे प्रेम के अभाव का पाप है और उसी पाप से सारा जीवन शुरू होता है। फिर ये बच्चे पैदा होते है, फिर ये बच्चे जन्मते हैं।

और स्मरण रहे, जो पत्नी अपने पति को प्रेम करती है उसके लिए पति परमात्मा हो जाता है। शास्त्रों के समझाने से नहीं होती यह बात। जो पति अपनी पत्नी से प्रेम करता है उसके लिए पत्नी भी परमात्मा हो जाती है, क्योंकि प्रेम किसी को भी परमात्मा बना देता है। जिनकी तरफ उसकी आखें प्रेम से उठती हैं वही परमात्मा हो जाता है। परमात्मा का कोई और अर्थ नहीं है। प्रेम की आख सारे जगत को धीरे धीरे परमात्मामय देखने लगती है। लेकिन जो एक को ही प्रेम से भरकर नहीं देख पाता और सारे जगत को ब्रह्ममय देखने की बाते करता है उसकी वे बातें झूठी हैं, उन बातो का कोई आधार और अर्थ नहीं है।

जिसने कभी एक को भी प्रेम नहीं किया उसके जीवन मे परमात्मा की कोई शुरुआत नहीं हो सकती, क्योंकि प्रेम के ही क्षण मे पहली दफा कोई व्यक्ति परमात्मा हो जाता है। वह पहली झलक है प्रभु की। फिर उसी झलक को आदमी बढ़ाता है और एक दिन वही झलक पूरी हो जाती है। सारा जगत उसी रूप में रूपातरित हो जाता है। लेकिन जिसने पानी की कभी बूंद नहीं देखी और कहता है मुझे सागर चाहिए, कहता है पानी की बूंद से मुझे कोई मतलब नहीं, पानी की बूंद का मैं क्या करूंगा मुझे तो सागर चाहिए तो उससे हम कहेंगे, तूने पानी की बूंद भी नहीं देखी, पानी की बूंद भी नहीं पा सका और सागर पाने चल पड़ा है, तू पागल है। क्योंकि सागर और क्या है पानी की अनन्त बूंदो के जोड के सिवाय ? परमात्मा भी प्रेम की अनन्त बूंदो का जोड है। प्रेम की अगर एक बूंद निन्दित है तो पूरा परमात्मा निन्दित

हो गया। फिर झूठे परमात्मा खड़े होंगे मूर्तियां खड़ी होंगी, पूजा पाठ होंगे, सब बकवास होगी लेकिन हमारे प्राणो का कोई अन्त सबंध उससे नही हो सकता है।

और यह भी ध्यान मे रख लेना जरूरी है कि कोई स्त्री अपने पति को प्रेम करती है, अपने प्रेमी को प्रेम करती है तभी प्रेम के कारण, पूर्ण प्रेम के कारण ही वह ठीक अर्थों मे मा बन पाती है। बच्चे पैदा कर लेने मात्र से कोई मा नही बन जाती। मा तो कोई स्त्री तभी बनती है और पिता तो कोई पुरुष तभी बनता है जबकि उन्होंने एक दूसरे को प्रेम किया हो। जब पत्नी अपने पति को प्रेम करती है, अपने प्रेमी को प्रेम करती है तो बच्चे उसे अपने पति का पुनर्जन्म मालूम पड़ते हैं। वह फिर वही शक्ल है, फिर वही रूप है, फिर वही निर्दोष आखे है जो उसके पति मे छिपी थी, वह फिर प्रकट हुई है। उसने अगर अपने पति को प्रेम किया है तो वह अपने बच्चे को प्रेम कर सकेगी। बच्चे को किया गया प्रेम पति को किये गये प्रेम की प्रतिध्वनि है। नही तो कोई बच्चे को प्रेम नही कर सकता है। मा बच्चे को प्रेम नही कर सकती, जब तक उसने अपने पति को न चाहा हो पूरे प्राणो से। क्योंकि वह बच्चे उसके पति की प्रतिध्वनिया है, वह उसकी ही प्रतिध्वनिया है, यह पति ही फिर वापस लौट आया है। यह नया जन्म है उसके पति का। पति फिर पवित्र और नया होकर वापस लौट आया है। लेकिन पति के प्रति अगर प्रेम नही है तो बच्चे के प्रति प्रेम कैसे होगा? बच्चे उपेक्षित हो जायेंगे, हो गये है।

बाप भी तभी कोई बनता है जब अपनी पत्नी को इतना प्रेम करता है कि पत्नी भी उसे परमात्मा दिखायी देती है, तब बच्चा फिर उसकी पत्नी का ही लौटना हुआ रूप है। पत्नी को जब उसने पहली दफा देखा था तब वह जैसी निर्दोष थी, तब जैसी शात थी, तब जैसी सुन्दर थी, तब उसकी आखे जैसी झील की तरह थीं इन बच्चो मे फिर वही आखे वापस लौट आई है। इन बच्चो मे फिर वही चेहरा वापस लौट आया है। ये बच्चे फिर उसी छवि मे नया होकर आ गये हैं। जैसे पिछले बसन्त मे फूल खिले थे, पिछले बसन्त मे पत्ते आये थे। फिर साल बीत गया पुराने पत्ते गिर गये। फिर नयी कोपले निकल आयी हैं, फिर नये पत्तो से वृक्ष भर गया है। फिर लौट आया बसन्त, फिर सब नया हो गया है। लेकिन जिसने पिछले बसन्त को ही प्रेम नही किया था वह इस बसन्त को कैसे प्रेम कर सकेगा?

जीवन निरन्तर लौट रहा है। निरन्तर जीवन का पुनर्जन्म चल रहा है। रोज नया होता चला जाता है, पुराने पत्ते गिर जाते हैं, नये आ जाते हैं। जीवन की सृजनात्मकता (creativity) ही तो परमात्मा है, यही तो प्रभु है। जो इसको पहचानेगा वही तो उसे पहचानेगा। लेकिन न मा बच्चे को प्रेम कर पाती है, न पिता बच्चे को प्रेम कर पाता है। और जब मा और बाप बच्चे को प्रेम नहीं कर पाते हैं तो बच्चे जन्म से ही पागल होने के रास्ते पर सलग्न हो जाते हैं। उनको दूध मिलता है, कपड़े मिलते हैं, मकान मिलते हैं लेकिन प्रेम नही मिलता है। प्रेम के बिना उनको परमात्मा नहीं मिल सकता है और सब मिल सकता है।

अभी रूस का एक वैज्ञानिक बन्दरो के ऊपर कुछ प्रयोग करता था। उसने कुछ नकली बन्दरिया बनायी। नकली बिजली के यान्त्रिक हाथ पैर उनके, बिजली के तारो का ढाचा। जो बन्दर पैदा हुए उनको नकली माताओ के पास कर दिया गया। नकली माताओ से वे चिपक गये। वे पहले दिन के बच्चे, उनको कुछ पता नहीं कि कौन असली है, कौन नकली। वे नकली मा के पास ले जाये गये। पैदा होते ही उसकी छाती से आकर चिपक गये। नकली दूध है, वह उनके मु ह मे जा रहा है, वे पी लेते हैं और चिपके रहते हैं। वह मशीनी बन्दरिया है, वह हिलती रहती है, बच्चे समझते हैं कि मा उनको हिला डुला कर झुला रही है। ऐसे बीस बन्दर के बच्चो को नकली मा के पास पाला गया और उनको अच्छा दूध दिया गया। मा ने उनको अच्छी तरह हिलाया डुलाया, मा कूदती फादती सब करती। बच्चे स्वस्थ दिखाई पड़ते थे। फिर वे बड़े भी हो गये। लेकिन वे सब बन्दर पागल निकले, वे सब असामान्य (Abnormal) साबित हुए। उनको दूध मिला, उनका शरीर अच्छा हो गया लेकिन उनका व्यवहार विक्षिप्त हो गया। वैज्ञानिक बड़े हैरान हुए कि इनको क्या हुआ ? इनको सब तो मिला, फिर ये विक्षिप्त कैसे हो गये ?

एक चीज, जो वैज्ञानिक की लेबोरेटरी में नहीं पकड़ी जा सकी थी वह उनको नहीं मिली। प्रेम उनको नही मिला। जो उन बीस बन्दरो की हालत हुई वही साढ़े तीन अरब मनुष्यो की हो रही है। झूठी मां मिलती है, झूठा बाप मिलता है। नकली मा हिलती रहती है, नकली बाप हिलता रहता है और ये बच्चे विक्षिप्त हो जाते हैं। और हम कहते हैं कि ये शांत नहीं होते, अशांत होते चले जाते हैं। ये छुरेबाजी करते हैं, ये लड़कियों पर एसिड फेंकते हैं, ये कालेज में आग लगाते हैं, ये बस पर पत्थर फेंकते हैं, हेडमास्टर को मारते है। मारेंगे। मारे बिना इनको रास्ता नहीं। अभी थोड़ा थोड़ा मारते हैं, कल

और ज्यादा मारेंगे। और तुम्हारे कोई शिक्षक, तुम्हारे कोई नेता, तुम्हारे कोई धर्मगुरु इनको नहीं समझा सकेंगे। क्योंकि सवाल समझाने का नही है आत्मा ही रुग्ण पैदा हो रही है। यह रुग्ण आत्मा प्यास पैदा करेगी, यह चीजों को तोड़ेगी, मिटायेगी।

तीन हजार साल से जो बात चलती थी वह अब चरम परिणति (climax) पर पहुच रही है। सौ डिग्री तक हम पानी को गरम करते हैं, पानी भाप बनकर उड़ जाता है, निन्यानबे डिग्री तक पानी बना रहता है फिर सौ डिग्री पर भाप बनने लगता है। सौ डिग्री पर पहुच गया है आदमियत का पागलपन। अब वह भाप बनकर उड़ना शुरू हो रहा है। मत चिल्लाइए, मत परेशान होइए! बनने दीजिये भाप और उपदेश देते रहिये, और आपके साधु सन्त समझाया करें अच्छी अच्छी बातें, और गीता की टीकाए करते रहें। करते रहो प्रवचन, और टीका गीता पर, और दोहराते रहो पुराने शब्दो को। यह भाप बननी बन्द नहीं होगी। यह भाप बननी तब बन्द होगी जब जीवन की पूरी प्रक्रिया को हम समझेंगे। समझेंगे कि कहीं कोई भूल हो रही है, कहीं कोई भूल हुई है। और वह कोई आज की भूल नहीं है। चार पांच हजार साल की भूल है। शिखर (climax) पर पहुच गई है इसलिए मुश्किल खडी हुई जा रही है।

ये प्रेम से रिक्त बच्चे जन्मते हैं और फिर प्रेम से रिक्त हवा मे ही पाले जाते हैं। फिर वही नाटक ये दोहरायेंगे और फिर मम्मी और डैडी का पुराना खेल! वे बडे हो जायेंगे, और फिर वही पुराना नाटक दोहरायेंगे—विवाह मे बांधे जायेंगे, क्योंकि समाज प्रेम को आज्ञा नही देता। न मा पसन्द करती है कि मेरी लड़की किसी को प्रेम करे। न बाप पसन्द करते हैं कि मेरा बेटा किसी को प्रेम करे। न समाज पसन्द करता है कोई किसी को प्रेम करे। प्रेम तो होना ही नही चाहिए। प्रेम तो पाप है। वह तो बिल्कुल ही योग्य बात नहीं है। विवाह होना चाहिए। फिर प्रेम नहीं होगा। फिर विवाह होगा। और पहिया वैसा का वैसा ही घूमता रहेगा।

आप कहेंगे कि जहा प्रेम होता है वहा भी कोई बहुत अच्छी हालत नही मालूम होती। नहीं मालूम होगी। क्योंकि प्रेम को आप जिस भांति मौका देते हैं उसमें प्रेम एक चोरी की तरह होता है, प्रेम एक सीक्रेसी की तरह होता है। प्रेम करने वाले डरते हुए प्रेम करते हैं। घबराये हुए प्रेम करते हैं। चोरो की तरह प्रेम करते हैं, अपराधी की तरह प्रेम करते है। सारा समाज उनके विरोध में है, सारे समाज की आंखें उन पर लगी हुई हैं। सारे समाज के विद्रोह मे वे

प्रेम करते हैं। यह प्रेम भी स्वस्थ नहीं है, क्योंकि प्रेम के लिए स्वस्थ हवा नहीं है। इसके परिणाम भी अच्छे नहीं हो सकते।

प्रेम के लिए समाज को हवा पैदा करनी चाहिए। मौका पैदा करना चाहिए। अवसर पैदा करना चाहिए। प्रेम की शिक्षा दी जानी चाहिए, दीक्षा दी जानी चाहिए। प्रेम की तरफ बच्चो को विकसित किया जाना चाहिए क्योंकि वही उनके जीवन का आधार बनेगा, वही उनके पूरे जीवन का केन्द्र बनेगा। उसी केन्द्र से उनका जीवन विकसित होगा। लेकिन उसकी कोई बात ही नही है, उससे हम दूर खडे रहते हैं, आंखें बन्द किये खडे रहते हैं। न मा बच्चे से प्रेम की बात करती है, न बाप। न उन्हें कोई सिखाता है कि प्रेम जीवन का आधार है, न उन्हें कोई निर्भय बनाता है कि तुम प्रेम के जगत मे निर्भय होना। न कोई उनसे कहता है कि जब तक तुम्हारा किसी से प्रेम न हो तब तक तुम मत विवाह करना, क्योकि वह विवाह गलत होगा, झूठा होगा, पाप होगा, वह सारी कुरूपता की जड होगी और सारी मनुष्यता को पागल करने का कारण होगा।

अगर मनुष्य जाति को परमात्मा के निकट लाना है तो पहला काम परमात्मा की बात मत करिए। मनुष्य जाति को प्रेम के निकट ले आइए। जीवन जोखिम के काम में है। न मालूम कितने खतरे हो सकते हैं। जीवन की बनी बनायी व्यवस्था मे, न मालूम कितने परिवर्तन करने पड सकते हैं। लेकिन मत करिये परिवर्तन, यह समाज अपने ही हाथ मौत के किनारे पहुच गया है इसलिए स्वय मर जायेगा। यह बच नही सकता। प्रेम से रिक्त लोग ही युद्धो को पैदा करते है प्रेम से रिक्त लोग ही अपराधी बनते हैं। प्रेम से रिक्तता ही अपराध (criminality) की जड है, और सारी दुनिया मे अपराधी फैलते चले जाते हैं।

जैसा मैंने आपसे कहा कि अगर किसी दिन जन्म विज्ञान पूरा विकसित होगा तो हम शायद पता लगा पायें कि कृष्ण का जन्म किन स्थितियो मे हुआ। किस समस्वरता (Harmony) मे, कृष्ण के मा बाप ने किस प्रेम के क्षण मे गर्भस्थापन (conception) किया इस बच्चे का, प्रेम के किस क्षण मे यह बच्चा अवतरित हुआ, तो शायद हमे दूसरी तरफ यह भी पता चल जाय कि हिटलर किस अप्रेम के क्षण मे पैदा हुआ होगा। मुसोलिनी किस क्षण पैदा हुआ होगा। तैमूरलग, चगेज खा किस अवसर पर पैदा हुए होगे। हो सकता है कि यह पता चले कि चगेज खा सघर्ष, घृणा और क्रोध से भरे मा बाप से पैदा

हुआ हो। जिन्दगी भर फिर वह क्रोध से भरा हुआ है। वह जो क्रोध का मौलिक वेग (original momentum) है वह उसको जिन्दगी भर दौड़ाये चला जा रहा है। चगेज खां जिस गांव मे गया लाखो लोगो को कटवा दिया। तैमूरलंग जिस राजधानी मे जाता दस दस हजार बच्चो की गर्दनें कटवा देता। भाले मे छिदवा देता। जुलूस निकालता तो दस हजार बच्चो की गर्दनें लटकी हुई होती भालो के ऊपर, पीछे तैमूर चलता, लोग पूछते, यह तुम क्या करते हो ? तो वह कहता ताकि लोग याद रखें कि तैमूर कभी इस नगरी में आया था। इस पागल को याद रखवाने की और कोई बात याद नहीं पड़ती थी ! हिटलर ने जर्मनी मे साठ लाख यहूदियो की हत्या की। पांच सौ यहूदी रोज मारता रहा। स्टैलिन ने रूस मे साठ लाख लोगो की हत्या की। जरूर इनके जन्म के साथ कोई गड़बड़ हो गई। जरूर ये जन्म के साथ ही पागल पैदा हुये। उन्माद (Neurosis) इनके जन्म के साथ इनके खून मे आया और फिर वह फैलता चला गया। और पागलो मे बड़ी ताकत होती है। पागल कब्जा कर लेते है और पागल दौड़कर हावी हो जाते है—धन पर, पद पर, यश पर। और फिर सारी दुनिया को विकृत करते हैं क्योंकि वे ताकतवर होते हैं।

यह जो पागलो ने दुनिया बनायी है यह दुनिया तीसरे महायुद्ध के करीब आ गयी है। सारी दुनिया मरेगी। पहले महायुद्ध मे साढे तीन करोड़ लोगो की हत्या की गयी, दूसरे महायुद्ध मे साढे सात करोड़ लोगो की हत्या की गयी। अब तीसरे में कितनी की जायेगी ? मैंने सुना है,—जब आइन्सटीन मर कर भगवान के घर पहुचा तो भगवान ने उससे कहा कि मैं बहुत घबराया हुआ हू। क्या तुम मुझे तीसरे महायुद्ध के सम्बन्ध में कुछ बताओगे ? क्या होगा ? उसने कहा, तीसरे महायुद्ध के बाबत कहना मुश्किल है, चौथे के सम्बन्ध मे कुछ जरूर बता सकता हू। भगवान ने कहा तीसरे के बाबत नही बता सकते, चौथे के बाबत कैसे बताओगे ? आइन्सटीन ने कहा, एक बात बता सकता हू चौथे के बाबत, कि चौथा महायुद्ध कभी नही होगा क्योकि तीसरे मे सब आदमी समाप्त हो जायेगे। चौथे के होने की कोई सम्भावना नही है क्योकि यह करने वाले ही नहीं बचेगे। तीसरे के बाबत कुछ भी कहना मुश्किल है कि ये साढ़े तीन अरब पागल आदमी क्या करेंगे ? कुछ नही कहा जा सकता कि क्या स्थिति होगी।

प्रेम से वियुक्त मनुष्यमात्र एक दुर्घटना है, मै यही निवेदन करना चाहता हू। वैसे मेरी बातें बड़ी अजीब लगी होगी आपको क्योंकि ऋषि मुनि इस तरह

की बाते करते ही नही। मेरी बात बहुत अजीब लगी होगी आपको। शायद यहा आते समय आपने सोचा होगा कि मै भजन कीर्तन का कोई नुस्खा बताऊगा। आपने सोचा होगा कि मै कोई माला फेरने की तरकीब बताऊगा। आपने सोचा होगा कि मै कोई आपको तावीज दे दूगा जिसको बाधकर आप परमात्मा से मिल जायेंगे, नहो, ऐसी कोई बात मै आपको नही बता सकता हू। ऐसे बताने वाले सब बेईमान हैं, धोखेबाज है। समाज को उन्होने बहुत बर्बाद किया है। समाज की जिन्दगी को समझने के लिए मनुष्य के पूरे विज्ञान को समझना जरूरी है। परिवार को, दपति को, समाज को---उसकी पूरी व्यवस्था को समझना जरूरी है कि कहा क्या गडबड़ हुई है। अगर सारी दुनिया यह तय करले कि हम पृथ्वी को एक प्रेम का घर बनायेगे, झूठे विवाह का नहीं। वैसे प्रेम से विवाह निकले वह अलग बात है। जितनी कठिनाइया होगी, मुश्किल होगी, अव्यवस्था होगी उसको सम्हालने का हम कोई उपाय खोजेंगे, उस पर विचार करेंगे लेकिन दुनिया से हम यह अप्रेम का जो जाल है इसको तोड देंगे और प्रेम की एक दुनिया बनायेंगे तो शायद पूरी मनुष्य जाति बच सकती है और स्वस्थ हो सकती है।

मै यह भी कहना चाहता हू कि अगर सारे जगत् मे प्रेम के केन्द्र पर परिवार बन जाये तो जो कल्पना हजारो वर्षों से रही है, आदमी को महामानव (superman) बनाने की, वह जो नीत्से कल्पना करता है और अरविन्द कल्पना करते है, वह कल्पना पूरी हो सकती है। लेकिन न तो अरविन्द की प्रार्थनाओ से और न नीत्से के द्वारा पैदा किये गये फैसिज्म से वह सपना पूरा हो सकता है। अगर पृथ्वी पर हम प्रेम की प्रतिष्ठा को वापस लौटा लायें। अगर प्रेम जीवन मे वापस लौट आये, सम्मानित हो जाय और प्रेम एक आध्यात्मिक मूल्य ले ले तो नये मनुष्य का निर्माण हो सकता है--नयी सतति का, नयी पीढ़ियों का, नये आदमी का। और वह आदमी, वह बच्चा, वह भ्रूण जिसका पहला अणु प्रेम से जन्मेगा विश्वास किया जा सकता है, आश्वासन दिया जा सकता है कि उसकी अतिम श्वास परमात्मा में निकलेगी।

प्रेम है प्रारम्भ, परमात्मा है अत। वह अतिम सीढ़ी है। जो प्रेम को ही नही पाता है वह परमात्मा को तो पा ही नहीं सकता, यह असभावना है। लेकिन जो प्रेम मे दीक्षित हो जाता है और प्रेम मे विकसित हो जाता है, और प्रेम के प्रकाश मे चलता है और प्रेम के फूल जिसकी श्वास बन जाते हैं और प्रेम जिसका अणु-अणु बन जाता है और जो प्रेम मे बढ़ता जाता है, एक

दिन वह पाता है कि प्रेम की जिस गगा मे वह चला था वह गगा अब किनारे छोड रही है और सागर बन रही है। एक दिन वह पाता है कि गगा के किनारे मिटते जाते हैं और अनन्त सागर आ गया सामने। छोटी सी गगा की धारा थी गगोत्री मे, छोटी सी प्रेम की धारा होती है शुरू मे। फिर वह बढ़ती है, फिर वह बडी होती है, फिर वह पहाडो और मैदानो को पार करती है। और एक वक्त आता है कि किनारे छूटने लगते हैं। जिस दिन प्रेम के किनारे छूट जाते हैं उसी दिन प्रेम परमात्मा बन जाता है। जब तक प्रेम के किनारे होते हैं तब तक वह परमात्मा नहीं होता है। गगा, नदी रहती है जब तक कि वह इस जमीन के किनारे से बधी होती है। फिर किनारे छूटते हैं और सागर से मिल जाती है। फिर वह सागर ही हो जाती है।

प्रेम की सरिता है और परमात्मा का सागर है। लेकिन हम प्रेम की सरिता ही नही हैं हम प्रेम की नदियां ही नहीं हैं, और हम बैठे हैं हाथ जोडे और प्रार्थनाए कर रहे हैं कि हमको भगवान चाहिए ! जो सरिता नहीं है वह सागर को कैसे पायेगा ? सारी मनुष्य जाति के लिए पूरा आन्दोलन चाहिए। पूरी मनुष्य जाति के आमूल परिवर्तन की जरूरत है। पूरा परिवार बदलने की जरूरत है। बहुत कुरूप है हमारा परिवार। वह बहुत सुन्दर हो सकता है लेकिन केवल प्रेम के केन्द्र पर ही। पूरे समाज को बदलने की जरूरत है और तभी एक धार्मिक मनुष्यता पैदा हो सकती है।

प्रेम प्रथम, परमात्मा अतिम। क्यो प्रेम परमात्मा पर पहुच जाता है ? क्योकि प्रेम है बीज और परमात्मा है वृक्ष। प्रेम का बीज ही फिर फूटता है और वृक्ष बन जाता है। सारी दुनिया की स्त्रियों से मेरा कहने का यह मन होता है, और खासकर स्त्रियो से, क्योंकि पुरुष के लिए प्रेम और बहुत सी जीवन की दिशाओ मे एक दिशा है जबकि स्त्री के लिए प्रेम अकेली दिशा है। पुरुष के लिए प्रेम और बहुत से जीवन आयामो मे एक आयाम है। उसके और भी आयाम हैं व्यक्तित्व के, लेकिन स्त्री का एक ही आयाम, एक ही दिशा है और वह है प्रेम। स्त्री पूरी प्रेम है। पुरुष प्रेम भी है और दूसरी चीज भी है। अगर स्त्री का प्रेम विकसित हो और वह समझे प्रेम की कीमिया, प्रेम का रसायन तो वह बच्चो को दीक्षा दे सकती है प्रेम की और गति दे सकती है प्रेम के आकाश मे उठने की। उनके पखो को वह मजबूत कर सकती है। लेकिन अभी तो हम काट देते हैं पख। विवाह की जमीन पर सरको ! प्रेम के आकाश में मत उड़ना ! जरूर आकाश मे उड़ना जोखिम का होता है और

जमीन पर चलना आसान है। लेकिन जो जोखिम नहीं उठाते हैं वे जमीन पर रेंगने वाले कीड़े हो जाते हैं और जो जोखिम उठाते हैं वे दूर अनंत आकाश में उड़ने वाले बाज पक्षी सिद्ध होते हैं।

आदमी रेंगता हुआ कीड़ा हो गया है क्योंकि हम सिखा रहे हैं, कोई भी जोखिम (Risk) न उठाना, कोई खतरा (Danger) मत उठाना! अपने घर का दरवाजा बन्द करो और जमीन पर सरको! आकाश में मत उड़ना! जबकि होना यह चाहिए कि हम प्रेम की जोखिम सिखायें, प्रेम का खतरा सिखायें, प्रेम का अभय सिखायें और प्रेम के आकाश में उड़ने के लिए उनके पखों को मजबूत करें और चारो तरफ जहा भी प्रेम पर हमला होता हो उसके खिलाफ खड़े हो जायें, प्रेम को मजबूत करें, ताकत दें।

प्रेम के जितने दुश्मन खड़े हैं दुनिया मे उनमें नीतिशास्त्री भी हैं, हालांकि थोथे हैं वे नीतिशास्त्री, क्योंकि प्रेम के विरोध में जो हो वह क्या खाक नीतिशास्त्री होगा! साधु सन्यासी खड़े हैं प्रेम के विरोध में, क्योंकि वे कहते हैं कि यह सब पाप है, यह सब बंधन है, इसको छोड़ो और परमात्मा की तरफ चलो। हद हो गई।

जो आदमी कहता है कि प्रेम को छोड़कर परमात्मा की तरफ चलो, वह परमात्मा का शत्रु है, क्योंकि प्रेम के अतिरिक्त तो परमात्मा की तरफ जाने का कोई रास्ता ही नहीं है। बड़े बूढ़े भी खड़े हैं प्रेम के विपरीत क्योंकि उनका अनुभव कहता है कि प्रेम खतरा है। लेकिन अनुभवी लोगो से जरा सावधान रहना क्योंकि जिन्दगी में कभी कोई नया रास्ता वे नहीं बनने देते। वे कहते हैं कि पुराने रास्ते का हमे अनुभव है, हम पुराने रास्ते पर चले हैं, उसी पर सबको चलना चाहिए। लेकिन जिन्दगी को रोज नया रास्ता चाहिए। जिन्दगी रेल की पटरियो पर दौड़ती हुई रेलगाड़ी नहीं है कि बनी पटरियो पर दौड़ती रहे। और अगर दौड़ेगी तो एक मशीन हो जायेगी। जिन्दगी तो एक सरिता है जो रोज एक नया रास्ता बना लेती है—पहाड़ो मे, मैदानो में, जगलों में। अनूठे रास्ते से निकलती है, अनजान जगत् मे प्रवेश करती है और सागर तक पहुच जाती है।

नारियो के सामने आज एक ही काम है। वह काम यह नहीं है कि अनाथ बच्चो को पढा रही है बैठकर। तुम्हारे बच्चे भी तो सब अनाथ हैं। नाम के लिए वे तुम्हारे बच्चे हैं। न उनकी मा है, न उनका बाप। समाजसेवक स्त्रियां सोचती हैं कि अनाथ बच्चो का अनाथालय खोल दिया तो बहुत बड़ा काम कर दिया। उनको पता नहीं कि उनके बच्चे भी अनाथ ही हैं। तुम दूसरो

के अनाथ बच्चो को शिक्षा देने जा रही हो तो पागल हो। तुम्हारे बच्चे खुद अनाथ (orphans) हैं। कोई नही हैं उनका, न तुम हो, न तुम्हारे पति। न उनकी मा है और न उनका कोई है, क्योंकि वह प्रेम ही नही है जो उनको सनाथ बनाता। सोचते हैं हम आदिवासी बच्चो को जाकर शिक्षा दे दें। वहा तुम जाकर आदिवासी बच्चो का शिक्षा दो और यहा तुम्हारे बच्चे धीरे-धीरे आदिवासी हुए चले जा रहे हैं। ये जो बीटल हैं, बीटनिक हैं, फला हैं ढिका हैं, ये फिर से आदमी के आदिवासी होने की शकलें हैं। तुम सोचते हो, स्त्रिया सोचती हैं कि जायें और सेवा करें। जिस समाज मे प्रेम नही है उस समाज मे सेवा कैसे हो सकती है? सेवा तो प्रेम की सुगन्ध है।

बस आज तो यही कहना चाहूगा। आज तो सिर्फ एक धक्का आपको दे देना चाहूगा ताकि आपके भीतर चिन्तन शुरू हो जाय। हो सकता है मेरी बातें आपको बुरी लगे। लगे तो बहुत अच्छा है। हो सकता है मेरी बातो से आपको चोट लगे, तिलमिलाहट पैदा हो। भगवान करें जितनी ज्यादा हो जाय उतना अच्छा है, क्योंकि उससे कुछ सोच विचार पैदा होगा। हो सकता है मेरी सब बातें गलत हो इसलिए मेरी बात मान लेने की कोई भी जरूरत नही है, लेकिन मैंने जो कहा है उस पर आप सोचना। मैं फिर दोहरा देता हू उन दो चार सूत्रों को और अपनी बात पूरी किये देता हू।

आज तक का मनुष्य का समाज प्रेम के केन्द्र पर निर्मित नहीं है इसीलिए विक्षिप्तता है, पागलपन है, युद्ध हैं, आत्महत्याए हैं, अपराध हैं। प्रेम की जगह आदमी ने एक झूठा स्थानापन्न (Pseudo substitute) विवाह ईजाद कर लिया है। विवाह के कारण वेश्याए हैं, गुडे हैं। विवाह के कारण शराब है, विवाह के कारण बेहोशियां हैं। विवाह के कारण भागे हुए सन्यासी हैं। विवाह के कारण मदिरो मे भजन करनेवाले झूठे लोग हैं। जब तक विवाह है तब तक यह रहेगा। मैं यह नहीं कह रहा हू कि विवाह मिट जाये, मैं यह कह रहा हू कि विवाह प्रेम से निकले। विवाह से प्रेम नहीं निकलता है, प्रेम से विवाह निकले तो शुभ है। विवाह से यदि प्रेम को निकालने की कोशिश भी की जाय तो वह प्रेम झूठा होगा, क्योंकि जबरदस्ती कभी भी कोई प्रेम नही निकाला जा सकता है। प्रेम या तो निकलता है या नहीं निकलता है। जबरदस्ती नही निकाला जा सकता है।

तीसरी बात मैंने यह कही कि जो मा बाप प्रेम से भरे हुए नहीं हैं उनके बच्चे जन्म से ही विकृत (perverted) एब्नार्मल, रुग्ण और बीमार पैदा

होंगे। मैंने यह भी कहा कि जो मा बाप, जो पति पत्नी, जो प्रेमी युगल प्रेम से सभोग मे लीन नही होते है वे केवल उन बच्चो को पैदा करेंगे जो शरीरवादी होगे, भौतिकवादी होगे जिनकी जीवन की आख पदार्थ से ऊपर कभी नही उठेगी, जो परमात्मा को देखने के लिए अधे पैदा होगे। आध्यात्मिक रूप से अधे बच्चे हम पैदा कर रहे है।

मैंने चौथी बात आपसे यह कही कि मा बाप अगर एक दूसरे को प्रेम करते हैं तो ही वे बच्चो की मा बनेगी, बाप बनेंगे क्योकि बच्चे उनकी ही प्रतिध्वनिया है, वे आया हुआ नया बसत है, वे फिर से जीवन के दरख्त पर लगी हुई कोपले है। लेकिन जिसने पुराने बसन्त को ही प्रेम नहीं किया वह नये बसन्त का कैसे प्रेम करेगा ?

और अतिम बात मैंने यह कही कि प्रेम शुरुआत है और परमात्मा शिखर। प्रेम मे जीवन शुरू हो तो परमात्मा मे पूर्ण होता है। प्रेम बीज बने तो परमात्मा अतिम वृक्ष की छाया बनता है। प्रेम गगोत्री हो तो परमात्मा का सागर उपलब्ध होता है।

जिसके भी मन की कामना हो कि परमात्मा तक जाये वह अपने जीवन को प्रेम के गीत से भर ले। और जिसकी भी आकाक्षा हो कि पूरी मनुष्यता परमात्मा के जीवन से भर जाये, वह मनुष्यता को प्रेम की तरफ ले जाने के मार्ग पर जितनी बाधाए हो उनको तोडे, मिटाए और प्रेम को उन्मुक्त आकाश दे ताकि एक दिन नये मनुष्य का जन्म हो सके।

पुराना मनुष्य रुग्ण था, कुरूप था, अशुभ था। पुराने मनुष्य ने अपने आत्मघात का इन्तजाम कर लिया है। वह आत्महत्या कर रहा है। सारे जगत् मे वह एक-साथ आत्मघात कर लेगा। जागतिक आत्मघात (Universal Suicide) का उसने उपाय कर लिया है। लेकिन अगर मनुष्य को बचाना है तो प्रेम की वर्षा, प्रेम की भूमि और प्रेम के आकाश को निर्मित कर लेना जरूरी है।

आचार्य श्री रजनीश की श्रेष्ठतम कृतियाँ

१.	पथ पुंबक बोध	८ ००
२	महावीर · परिचय और वाणी—स डा रामचन्द्र प्रसाद	२०.००
३.	महावीर मेरी दृष्टि में पृष्ठ ७९० द्वितीय सस्करण दिल्ली १९७३ सजिल्द	३० ००
४.	सभोग से समाधि की ओर पृष्ठ १८२ सजिल्द	६ ००
५.	आचार्य रजनीश समन्वय, विश्लेषण एवं ससिद्धि—डा० रामचन्द्र प्रसाद . द्वितीय सशोधित एव परिवर्द्धित सस्करण १९७३	१० ००
६.	मै मृत्यु सिखाता हूँ—मृत्यु और जीवन की सगति का सुन्दरतम ढग से बोध किया गया है पृष्ठ ६०० प्रथम सस्करण १९७३ सजिल्द	२० ००
७	सूली ऊपर सेज पिया की पृष्ठ २३६ द्वितीय सस्करण १९७२	७ ००
८.	कामयोग, धर्म और गाँधी—स डा रामचन्द्र प्रसाद पृष्ठ २०४ तृतीय सस्करण १९७४	५ ००
९	समुन्द समाना बूँद में—स डा रामचन्द्र प्रसाद पृष्ठ २०८ द्वितीय सस्करण १९७४	९ ००
१०.	घाट भुलाना बाट बिनु—स डा रामचन्द्र प्रसाद पृष्ठ २२६ द्वितीय संस्करण १९७४	१० ००
११	सम्भावनाओं की आहट (मनुष्य का स्वय के अस्तित्व एव आत्मबोध का परिचय) पृष्ठ १६२ द्वितीय सस्करण १९७३	६ ००
१२	प्रेम है द्वार प्रभु का (तेरह प्रवचनो का सकलन) पृष्ठ २५६ द्वितीय सस्करण १९७२	९ ००
१३	मिट्टी के दीए पृष्ठ १५० तृतीय सशोधित एव परिवर्द्धित सस्करण १९७३	५ ००
१४	मैं कौन हूँ पृष्ठ १०१ तृतीय सशोधित एव परिवर्द्धित सस्करण १९७३	३ ००
१५	भगवान्, मार्ग और मै—स डा० रामचन्द्र प्रसाद	प्रेस मे

BOOKS IN ENGLISH

Books by Rajneesh

16	Who am I ?	6 00
17	Path of Self Realization	4 00
18	Seeds of Revolutionary Thoughts	4 50
19	Philosophy of Non-Violence	0 80
20	Earthen Lamps	4 50
21	Wings of Love & Random Thoughts	3 50
22	The Mysteries of Life and Death	In Press

Books on Rajneesh's Teaching

23	Lifting the Veil (Kundaliniyoga) —Dr R C Prasad	10 00
24	The Mystic of Feeling A Study in the Rajneesh's Religion of Experience —Dr R C Prasad	20 00

Available at

MOTILAL BANARSIDASS

Delhi Varanasi Patna